साक्षी

अंक-20

साक्षी

अंक-20

भारतीय भाषाओं में रामकथा

(बुन्देली)

प्रधान सम्पादक

डॉ. योगेन्द्र प्रताप सिंह

पूर्व प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

अतिथि सम्पादक

उदय शंकर दुबे

परिकल्पना

डॉ. योगेन्द्र प्रताप सिंह

निदेशक, अयोध्या शोध संस्थान : तुलसी स्मारक भवन
अयोध्या, फैजाबाद (उ.प्र.)

अयोध्या शोध संस्थान
तुलसी स्मारक भवन, अयोध्या, फैजाबाद (उ. प्र.)
फ़ोन—फ़ैक्स : 05278-232982

साक्षी-20

भारतीय भाषाओं में रामकथा : बुन्देली

प्रधान सम्पादक

डॉ. योगेन्द्र प्रताप सिंह

अतिथि सम्पादक

उदय शंकर दुबे

परिकल्पना

डॉ. योगेन्द्र प्रताप सिंह

ISSN : 2454-5465

बीसवाँ अंक

©अयोध्या शोध संस्थान

प्रकाशक

वाणी प्रकाशन

21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002
फ़ोन : 011-23273167, 23275710
फ़ैक्स : 011-23275710
ई-मेल : vaniprakashan@gmail.com
वेबसाइट : www.vaniprakashan.in

प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए वाणी प्रकाशन की अनुमति आवश्यक है। प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। विचारों से पूर्णतः सम्पादक और वाणी प्रकाशन का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

वाणी प्रकाशन का लोगो मक़बूल फ़िदा हुसेन की कूची से

भारतीय भाषाओं में रामकथा

(बुन्देली)

अनुक्रम

सम्पादकीय 9

बुन्देलखण्डी रामायन कथा 15
—डॉ. रामनारायण शर्मा

बुन्देलखण्ड में रामकथा के प्रसंगों का शिल्पांकन 20
—हरिविष्णु अवस्थी

'रामराजा सरकार' की नगरी ओरछा धाम 23
—वीरेन्द्र बहादुर खरे

दतिया के भित्तिचित्रों में रामकथा 28
—विनोद मिश्र 'सुरमणि'

श्री राम की रम्य भूमि ओरछा और वहाँ की चतेउर में राम 38
—पं. गुणसागर 'सत्यार्थी'

विष्णुदास की रामायन कथा 45
—डॉ. श्रीमती प्रमोद पाठक

बुन्देली लोक साहित्य में रामचरित 51
—डॉ. बहादुर सिंह परमार

ईसुरी की रामायन 58
—डॉ. कुंजीलाल पटेल 'मनोहर'

ईसुरी रचित बुन्देली रामकथा 68
—राजीव नामदेव 'राना लिधौरी'

श्री राम का चित्रकूट वास 72
—आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल

रसिक बिहारी कृत रामरसायन 79
—डॉ. शिवशंकर त्रिपाठी

रामकथा का केन्द्र : बुन्देलखण्ड 86
—कुँ. शिवभूषण सिंह गौतम

रामकथा गायक—बुन्देली कवि रामसखे 89
—अभिनन्दन गोइल

बुन्देली लोकगीतों में राम 92
—डॉ. सुशील कुमार शर्मा

बुन्देली गीतों में श्रीराम 97
—डॉ. (श्रीमती) गायत्री वाजपेयी
बुन्देलखण्ड के जन-जीवन में राम 107
—डॉ. (श्रीमती) पुष्पा दुबे
वृषभानकुँवरि और उनकी रसिक रामभक्ति 111
—डॉ. लखन लाल खरे
बुन्देलखण्ड के रामभक्त मुसलमान कवि 118
—डॉ. कामिनी
रामकथा ग्रन्थों के रचयिता : परमानन्द प्रधान 123
—डॉ. देवी प्रसाद खरे 'प्रसाद'
खुमान (मान) कवि कृत राम और हनुमान साहित्य 130
—शिवशंकर मिश्र
महारानी कंचन कुँवरि और उनकी कृति कांचन कुसुमांजलि में राम 134
—एन. डी. सोनी
बुन्देलखण्ड की रामलीलाओं की परिष्कृत कृति : लीला नाट्य श्री रामचरित 139
—प्रो. बी. के त्रिपाठी
दतिया (म.प्र.) की रामलीला के आधार-ग्रन्थ 143
—उदय शंकर दुबे
साहित्य, लोक-साहित्य व लोक-जीवन में श्री राम 149
—डॉ. कैलाश बिहारी द्विवेदी
बुन्देलखण्ड के दो अज्ञात राम कथाकार 154
—डॉ॰ गंगाप्रसाद बरसैंया
रामकथा के बुन्देलखण्डी दो महाकवियों की रचनाएँ 163
—डॉ॰ रामेश्वर प्रसाद गुप्त
बुन्देलखण्ड में रामकथा के आधुनिक कवि 168
—डॉ॰ राम नारायण शर्मा
पं. गोकुल चतुर्वेदी कृत : 'रामचरित्र कथानक गीतमाला' रामकाव्य 175
—अजित श्रीवास्तव
बुन्देलखण्ड के कुछ अज्ञात और अल्पज्ञात रामकथा गायक 178
रचनाकारों के पते 190

सम्पादकीय

बुन्देलखण्ड के कण-कण में व्याप्त है: रामकथा

मार्गे मार्गे शाखिनां रसवेदी, वेद्यां वेद्यां किन्नरी वृन्द गीतम्।
गीते गीते मञ्जुलालाप गोष्ठी, गोष्ठ्यां गोष्ठ्यां तत्कथा रामचन्द्र!॥
वृक्षे वृक्षे वीक्षिताः पक्षिसङ्घाः सङ्घे सङ्घे मञ्जुलामोद वाक्यम्।
वाक्ये वाक्ये मञ्जुलालाप गोष्ठी गोष्ठ्यां गोष्ठ्यां तत्कथा रामचन्द्र!।।

—राम कर्णामृतम्, प्रथम प्रकरण—
श्लोक 64-65

“प्रत्येक रास्ते में सुन्दर वृक्षों का कुंज है। कुंजों में चबूतरे बने हैं। यहाँ किन्नरियाँ गीत गाती हैं। गीतों को सुनने के लिए गोष्ठी जुटती है और उस गोष्ठी में जो बातचीत चलती है, है रामकथा है।” ‘‘एक-एक वृक्ष पर पक्षियों का दल बैठता है, पक्षियों का समूह मधुर स्वर में कूजन करता है, कूजन गीत सुनने के लिए लोग एकत्र हो जाते हैं तो वहाँ भी रामचन्द्र की कथा चलने लगती है।’’

बुन्देलखण्ड भारत का हृदय स्थल है। यह पूर्व देशान्तरांश 77/52, पश्चिम 81/39 तथा दक्षिण 23/51 और उत्तर 26/26 अक्षांश पर स्थित है। इस भू-भाग की लम्बाई मध्य से आग्नेय कोण की ओर दो सौ मील और चौड़ाई डेढ़ सौ मील है। इस क्षेत्र विशेष के उत्तर में यमुना, दक्षिण में नर्मदा, पश्चिम में काली सिन्ध, चम्बल व बेतवा नदी तथा पूर्व में टोंस और सोन नदी की धारा निरन्तर प्रवाहित है। विन्ध्य पर्वत की सुरम्य पहाड़ियों से और वनों से यह खण्ड आच्छादित है। चन्देल राजाओं के शासन के पश्चात् यहाँ पर बुन्देला राजाओं का शासन रहा, इसी कारण इस क्षेत्र का नाम बुन्देलखण्ड पड़ा और इस क्षेत्र में प्रयुक्त बोली (भाषा) को बुन्देली (बुन्देलखण्डी) की संज्ञा से अभिहित किया गया।

बुन्देलखण्ड की धरती ऋषि-मुनियों की तपस्यास्थली रही है और आज भी है, भविष्य में भी रहेगी। रामकथा के प्रचार-प्रसार में बुन्देलखण्ड का विशेष योगदान है। यदि अवध की धरती पर राम ने जन्म धारण किया तो बुन्देलखण्ड की धरती पर अपने निर्वासन काल के बारह वर्ष तापस वेष में बिताया। आदि कवि वाल्मीकि का आश्रम लालापुर गाँव में पवित्र चित्रकूट से कुछ पहले पहाड़ियों पर स्थित है। गोस्वामी तुलसीदास ने इसी धरती पर चन्दन घिसा था। भरद्वाज ऋषि की आज्ञा शिरोधार्य कर स्वयं भगवान राम ने चित्रकूट को अपना निवास स्थान बनाया। यहीं पर त्रेता युग की सबसे बड़ी धर्म सभा जुटी थी। चित्रकूट की महत्ता सर्वविदित है। बुन्देलखण्ड की धरती को लोग रामकथा की

उत्पत्ति का केन्द्र मानते हैं। इसका कारण यह है कि वाल्मीकि और तुलसीदास दोनों ही महाकवियों ने इस धरती पर तपस्या कर रामकथा लिखने की शक्ति प्राप्त की थी। गोस्वामी तुलसीदास की रामचरित मानस की रचना के पूर्व ग्वालियर के कवि विष्णुदास ने संवत् 1499 वि. (सन् 1442 ई.) में वाल्मीकि रामायण के आधार पर बुन्देली मिश्रित ब्रज भाषा में 'रामायन कथा' नामक ग्रन्थ की रचना की। इसमें चौपली, दोहा, छन्द एवं संस्कृत के श्लोक सम्मिलित हैं। विष्णुदास की रामायन कथा तीन काण्डों और कई सर्गों में विभक्त है। इनमें बाल काण्ड, सुन्दर काण्ड और उत्तर काण्ड हैं। बाल काण्ड में राम जन्म से लेकर संक्षेप में किष्किन्धा काण्ड तक की कथा है, सुन्दर काण्ड में राम राज्याभिषेक तक की कथा तथा उत्तरकाण्ड में राक्षस वंश और राम स्वर्गारोहण की कथा का वर्णन है। रामायन कथा बुन्देलखण्ड में लिखा गया राम चरित्र से सम्बन्धित हिन्दी का पहला महाकाव्य है। पन्द्रहवी शताब्दी में ही ग्वालियर के जैनी कवि रइधू ने पवित्र तीर्थ सोनागिरि में रहकर पद्म पुराण (बलभद्र पुराण) नाम से अपभ्रंश भाषा में रामकथा का सृजन किया। यह ग्रन्थ साहित्य इतिहास एवं जैनधर्म की दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण है।

विष्णुदास के पश्चात् बुन्देलखण्ड के एकमात्र कवि गोस्वामी तुलसीदास हैं, जिन्होंने संवत् 1631 वि. (सन् 1574 ई.) में अपनी शाश्वत रचना रामचरित मानस लिखकर अपनी कीर्ति पताका फहरायी। यह एक दैव संयोग ही है कि जिस दिन तुलसीदास अयोध्या में ध्यानस्थ होकर रामचरित का श्रीगणेश किया, ठीक उसी दिन 4 अप्रैल, सन् 1574 ई. (चैत्र शुक्ल राम नवमी मंगलवार, संवत् 1631 वि.) को ओरछा की महारानी गणेश दे कुँवरि ने अपने महल में अयोध्या से लायी हुई राम लला की मूर्ति की सविधि प्राण प्रतिष्ठा करायी और पूरा ओरछा राज्य उनके चरणों में समर्पित कर दिया और उसी दिन से राम लला ओरछा के राम राजा बन गये। प्रसिद्ध कवि पद्माकर के पौत्र गदाधर भट्ट ने स्वरचित विजय ब्रज विलास ग्रन्थ में महारानी गणेश दे की तपस्या, भगवान राम के प्रति अगाध श्रद्धा और भक्ति का वर्णन करते हुए लिखा है—

मधुकर महीप महिमा विसाल।
सु गनेस कुँवर रानी नृपाल।।
तिहि न्हात अवध सरजू अमन्द।
प्रगटे सुभक्ति लखि रामचन्द्र।।
श्री मन्मधोर्भूमिपतेर्महिष्या गणेश देव्या कृत भक्तिभावः
साकेत तश्चौडछ पत्रनेस्मित् विराजते श्री रघुराज रामः।

—विजय ब्रज विलास, सर्ग—5, छन्द—30

ओरछा में राम राजा की प्राण प्रतिष्ठा और तुलसीदास कृत रामचरित मानस का बुन्देलखण्ड के जनमानस पर व्यापक प्रभाव पड़ा। यहाँ के समय-समय पर होने वाले राजाओं ने अपनी मुद्राओं (मोहर) पर राम नाम अंकित कराना अपना धर्म समझा। राजा सावन्त सिंह की मुद्रा पर—"राम नाम प्रमान। सब जग मानत आन", मंगल वचन अंकित है। राजा अभय सिंह ने अपनी षट्कोणीय मुद्रा पर—"श्रीसीता राम शरणः", के साथ-साथ—"राम जानकी लखन के चरन सरन मजबूत। है हरबंश उदोत सुत अभैसिंह अवधूत", दोहा भी उत्कीर्ण कराया। (राजकीय पुस्तकालय—दतिया में सुरक्षित एक हस्तलिखित प्रति में बुन्देलखण्ड के राजाओं की मुद्राओं के विभिन्न प्रकार के चिह्न बने हैं और मंगल-वाक्य भी लिखे हैं।)। ओरछा स्थित राम राजा के मन्दिर की दीवारों पर रामकथा के प्रसंगों को लेकर भित्ति-चित्र भी बने हैं।

ओरछा में रामराजा की मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा और तुलसी के मानस के प्रचार-प्रसार से आकृष्ट होकर बुन्देलखण्ड के कवि-पण्डितों का रामकथा की ओर आकृष्ट होना स्वाभाविक था (फलतः ओरछा राज दरबार के कवि केशवदास ने संवत् 1658 वि. (सन् 1601 ई.) में राम चन्द्रिका नामक प्रबन्ध काव्य की रचना की। केशवदास के बाद बुन्देलखण्ड में उन्नीसवीं शताब्दी से लेकर बीसवीं शती तक रामकथा विषयक ढेर सारे ग्रन्थ लिखे गये। इस अवधि में रचे गये ग्रन्थों में प्रबन्ध काव्य अत्यल्प हैं, खण्ड काव्य का आधिक्य है। जानकी प्रसाद रसिक बिहारी ने राम रसायन ग्रन्थ की रचना की। इस ग्रन्थ के छन्द बुन्देलखण्ड की रियासतों में आयोजित राम लीलाओं में अधिक संख्या में अपनाये गये। पद्माकर भट्ट ने वाल्मीकि रामायण को आधार मानकर राम रसायन नामक ग्रन्थ लिखा। इसके अतिरिक्त उन्होंने राम भक्ति प्रबोध पचासा नामक मुक्तक काव्य की भी रचना की। इसमें राम के लोक प्रसिद्ध सभी विशिष्ट गुणों का काव्यमय वर्णन है। बुन्देलखण्ड के अधिकांश कवियों ने राम भक्ति में बुन्देल-रसिक सम्प्रदाय से प्रभावित होने या दीक्षित होने के कारण राम के ऐश्वर्यपरक या माधुर्यपरक रचनाओं का विशेष रूप से प्रणयन किया। राम सखे ने सरस राम भक्ति पदावली का गायन किया तो गोप कवि ने रामचन्द्राभरण जैसे अलंकार ग्रन्थ में राम के ऐश्वर्य का चित्रण किया। ओरछा (टीकमगढ़) की रानी वृषभान कुँवरि द्वारा रचित पद आज भी बुन्देलखण्ड के राम मन्दिरों में गाये जाते हैं। रानी वृषभान कुँवरि ने अयोध्या में कनक भवन और जनकपुर में जानकी भवन का निर्माण कराया जो रामभक्त रसिक जनों का प्रमुख तीर्थ है। उन्नीसवीं शती के अन्तिम चरण में बुन्देलखण्ड में दो ऐसे कवि हुए जिन्होंने रामकथा विषयक सर्वाधिक ग्रन्थों की रचना की। इनमें प्रमुख हैं—नवल सिंह प्रधान उपनाम रामानुज दास शरण। झाँसी निवासी नवल सिंह प्रधान समप्पर नरेश हिन्दूपति के आश्रित थे। ये दीकमगढ़ और दतिया राज दरबार में भी रहे। इनके द्वारा रचित रामकथा ग्रन्थों की नामावली इस प्रकार है—1.अद्‌भुत रामायण, 2. अध्यात्म रामायण, 3. आल्हा रामायण (रचनाकाल—संवत् 1922 वि.), 4. रामायन सुमिरिनी, 5. रूपक रामायण, 6. सीता स्वयंवर, 7. रामचन्द्र विलास—यह बहुत विशाल ग्रन्थ है और कई खण्डों में लिखा गया है, यथा—आदि खण्ड, जन्मखण्ड, पूर्व शृंगार खण्ड, मिथिला खण्ड, राम विवाह खण्ड, रामचन्द्र विलास खण्ड, अश्वमेध खण्ड। प्रत्येक खण्ड में एक हजार से अधिक छन्द हैं। इसमें रीतिकालीन शृंगारिक प्रवृत्तियों के अनुरूप रामकथा का वर्णन है। इसके अतिरिक्त कवि ने अयोध्या माहात्म्य और उर्दू रामायण की भी रचना की। संवत् 1911 वि. (सन् 1854 ई.) में नवल सिंह प्रधान ने मेजर डंकिन मालकम साहब के लिए उर्दू गद्य (नागरी लिपि) में रामायन लिखा था। यह ग्रन्थ फारसी-उर्दू-हिन्दी मिश्रित भाषा में है। उर्दू रामायन की एक हस्तलिखित प्रति दतिया स्टेट लाइब्रेरी में सुरक्षित है।

इसी प्रकार वृन्दावनदास ने तुलसी कृत रामचरित मानस के आधार पर रामचरितावली ग्रन्थ की रचना की। नवल सिंह प्रधान की ही भाँति बुन्देलखण्ड के कवि परमानन्द ने संवत् 1942 और 1960 के मध्य रामकथा और हनुमान से सम्बन्धित सर्वाधिक ग्रन्थों की रचना की। यथा—1. प्रमोद रामायण (रचनाकाल—संवत् 1942), 2. मंजु रामायण (रचनाकाल—सं. 1949), 3. रामायण मानस दर्पण (रचनाकाल—1950), 4. रामायण मानस तरंगिणी (रचनाकाल—अज्ञात), 5. रामरत्न (र. अज्ञात), 6. जानकी विलास, 7. जानकी मंगल (रचनाकाल-संवत् 1948), 8. रामचन्द्र पचासा, 9. हनुमत विरुदावली (रचनाकाल—संवत् 1950), 10. भाषा हनुमन्नाटक, 11. हनुमत पचीसी, 12. हनुमत जस तरंगिणी, 13. मानसचन्द्रिका। इनमें से प्रमोद रामायण सन् 2004 ई. में सार्थक प्रकाशन—गौतम नगर, नयी दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। परमानन्द दास टीकमगढ़ (ओरछा) की रानी वृषभान कुँवरि के आश्रित थे।

बुन्देलखण्ड के रीतिकालीन कवि रीतिपरक ग्रन्थों की रचना करने के साथ रामकथा विषयक ग्रन्थों की भी रचना की। आचार्य कवि प्रताप साहि ने जुगल शिख-नख (राम और सीता का नख-शिख), महाबीर कौ शिख-नख तथा हनुमत-पचीसी ग्रन्थ लिखा। आचार्य कवि मोहनलाल मिश्र ने रामचरित बाल चन्द्रिका के अतिरिक्त हनुमान पचीसी, हनुमान पचासा, हनुमान शतक जैसे वीर काव्य की रचना की। बुन्देलखण्ड में हनुमान को लेकर हनुमत सप्तक, हनुमान अष्टक, हनुमान पचीसी, हनुमान पचासा, हनुमान शतक, हनुमान विरुदावली जैसे ग्रन्थ लिखे गये। बुन्देलखण्ड की छोटी-बड़ी रियासतों के अपने ग्रन्थागार थे जिनमें ओरछा, पन्ना, छतरपुर, अजयगढ़, चरखारी, दतिया और ग्वालियर के राजकीय ग्रन्थागारों में अभी भी रामकथा विषयक बहुत सी पाण्डुलिपियाँ सुरक्षित हैं। यद्यपि नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ने बुन्देलखण्ड में विधिवत् खोज कार्य कराया किन्तु ग्रन्थाधिक्य के कारण बहुत से ग्रन्थों का विवरण नहीं लिया जा सका। बुन्देलखण्ड की रियासतों द्वारा प्रतिवर्ष आयोजित रामलीला के माध्यम से इस क्षेत्र के जनमानस पर रामकथा का व्यापक प्रभाव पड़ा। यहाँ के कवियों ने रामलीला के विविध प्रसंगों को लेकर सवैया, कवित्त छन्दों की रचना की, जिनमें बैजनाथ भोड़ले, नबीबख्श 'फलक', नन्द कवि विशेष उल्लेखनीय हैं।

आधुनिक युग में राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्त ने साकेत और पंचवटी की रचना की तो उनके सहयोगी मुंशी अजमेरी ने पंचदिवसीय रामलीला नाट्य ग्रन्थ की रचना की। आगाहश्र कश्मीरी ने चखारी राज्य में रहकर सीता बनवास नाटक लिखा। कालपी के मथुरादास 'लंकेश' ने लंकेश दिग्विजय की रचना के साथ कालपी में लंका मीनार का निर्माण किया जो सौ फीट ऊँची है और उस पर पचास फीट लम्बा रावण बना है। दतिया के सुन्दर लाल पटैरिया ने सन् 1940 ई. में खड़ी बोली में रावण महाकाव्य लिखना प्रारम्भ किया था किन्तु असमय मृत्यु हो जाने के कारण वह पूरा नहीं हो सका। बुन्देलखण्ड के आधुनिक कवियों ने रामकथा पर विशेष रूप से गीत काव्यों की रचना की। झाँसी के श्री शशिधर पटैरिया ने सर्वप्रथम शुद्ध बुन्देली में रामायन गीत काव्य की रचना की। उनका यह ग्रन्थ संवत् 2044 (सन् 1987 ई.) में बुन्देलखण्ड शोध-संस्थान, झाँसी में प्रकाशित हुआ था। यह तीन खण्डों—आनन्द खण्ड, आदर्श खण्ड और विजय खण्ड नामक शीर्षकों में विभक्त है। इसमें कुल 124 गीत हैं। सभी गीतों के शीर्षक अलग-अलग हैं। यथा—आनन्द खण्ड के प्रारम्भिक गीतों का शीर्षक है—जन्में रघुकुल राम लला, पलना में झूले राम लला आदि। इसी प्रकार श्री भगवानदास शुक्ल 'दास' ने खड़ी बोली में श्री गीत रामायण लिखा। इसमें संक्षिप्त रामकथा का सरस वर्णन है। कवि ने प्रत्येक काण्ड की कथा को सात-सात गीतों में अभिव्यक्त किया है। इस प्रकार इसमें कुल उनचास गीत हैं। सभी गीत मधुर और गेय हैं। गीत रामायण ग्रन्थ मौन साधना केन्द्र महोबा (उ. प्र.) से प्रकाशित हुआ था। ग्रन्थ में प्रकाशन काल का उल्लेख नहीं हुआ है। आधुनिक काल में बुन्देलखण्ड सम्भाग के रामकथा प्रेमी कवियों ने अधिकतर खण्ड काव्य की रचना की। सबका उल्लेख करना मात्र विस्तार है।

बुन्देलखण्ड के चितेरों (चित्रकारों) ने रामकथा को सजीवता प्रदान करने हेतु सम्पूर्ण रामकथा को चित्रांकित करने का श्रमसाध्य कार्य सम्पन्न किया। राज दरबारों के व्यक्तिगत संग्रहों में सुरक्षित रामचरित मानस की प्रतियों में बुन्देली कलम के बने चित्रों को देखकर मन प्रसन्न हो जाता है। इस क्षेत्र के चित्रकारों ने चित्रों में गाढ़े देशी रंगों का प्रयोग किया है जिससे चित्रों का चटकीलापन आज भी ज्यों का त्यों है। बुन्देली कलम में राजा दशरथ और उनके दरबारियों को बड़ी-बड़ी मूँछों से मुक्त दर्शाया गया है। यहाँ के लोग चित्रांकित ऐसी हस्तलिखित प्रतियों को मूँछों वाली रामायण कहते हैं।

बुन्देलखण्ड स्थित राम जानकी मन्दिरों में भित्तिचित्र भी बने हैं। बाबू श्री शारदा प्रसाद जी ने सलना के समीप रामवन की स्थापना की जो आज रामकथा का पवित्र तीर्थ है। राम की वनवास यात्रा के बहुत से पवित्र स्थल इसी क्षेत्र विशेष में हैं।

गोस्वामी तुलसीदास के बाद बुन्देलखण्ड में छोटे-बड़े इतने अधिक रामकथा काव्य ग्रन्थ लिखे गये कि सबकी संक्षिप्त सूची बनाना अत्यन्त परिश्रम साध्य, समय साध्य और व्यय साध्य कार्य है।

हम अपने सुधी लेखक-लेखिकाओं के प्रति हृदय से आभारी हैं जिन्होंने मेरे नम्र निवेदन को सहर्ष स्वीकार कर पत्रिका में प्रकाशनार्थ रामकथा विषयक आलेख भेजने का कष्ट किया।

–उदय शंकर दुबे

बुन्देलखण्डी रामायन कथा

–डॉ. रामनारायण शर्मा

विन्ध्याटवकी कौ मध्य क्षेत्र अतिशय पवित्र अरु पुरातन मानों गयौ। सप्तकुल पवर्तन में जेठौ विन्ध्य पर्वत की महिमा महाभारत के भीष्म पर्व में भायी गयी। इतै के वन-प्रान्तर अनेकन ऋषि-मुनियन की तपस्या और साधना की भूमि रये। नदी-झरनन की जल-धारा की कल-कल धुन, बागन-तड़ागन के विहार में भँवरों की गूँज मानो प्रकृति की वन्दना कर रये हों। ऐसी चित्ररचित सी दिव्य लोक-धरा में महाऋषि पाणिनि औ महामुनि पतंजलि ने छन्द शास्त्रन की रचना कर क्षेत्र कों गौरव प्रदान करौतो। लोपा-मुद्रा अरु शाश्वती जैसी ऋषिकान ने वेदों के नये सूत्र रचे, जीसें नारी की गरिमा बढ़ीती। अरण्यक औ किष्किन्धा की संस्कृति इतै भलीभाँत फूली-फली जो अनार्यन जैसी शक्ति सें दूषित औ कमजोर पड़ी। ऐसें जौ क्षेत्र अनेकन नाँव सें जानों गयो, जिनमें मत्स्य, वत्स्य, चिन्ति, कुन्ति (चेंदि-कौंत वार) दशार्ण—दस नदियन व पहारन (जमुना, टोंस (तमसा), पुष्पावती (पहूज), कुन्ती (क्वांरी), सेंध (सिन्ध), वेत (वत्रवती), केन, चम्बल अरु पवित्र पयस्वनी बालौ देश मानों गऔ। जी के प्रमान अष्टाध्यायी महाभाष्य से पुष्ट भये। जैसें—

'प्रवत्सतर कम्बल वसनार्ण दशानामृणे' है। ऐसी पुन्न, शस्त्र-शास्त्रन को भूमि कौ गुनगान तौ श्रीराम ने करोतो—

न राज्यभ्रशनं भंद्रे सुहृद्‌भिर्विनभवः।
मनो मे बाधते दृष्ट्वा रमणीयमिमं गिरिम्।।

अर्थात् इस रमणीय पर्वत कों देख कें राज छोड़वौ, जैसो 'दुःख नईं संताउत। सुहृद्-मित्रन सें दूर होवौ मोरे पीरा के कारन नईं हैं।

श्रीराम चरन-रज सें पवित्र जा पुन्न भूमि चित्र रचित सी—चित्रकूट बनीं। जितै उदित रामचरित कौ राष्ट्र-निर्मान कौ संकलप की कथा युग-युगान व कल्पान्तरों से जन-मन की कंठहार बनी चली आ रई है। ऐसौ जौ विन्ध्येल खण्ड आज बुन्देलखण्ड मानो जात। जी की सीमा ई तराँ सें हैं—

इत जमुना उत नर्मदा
इत चम्बल उत टोंस

ऐसे सुदर्शन प्रकृति की भूमि श्री राम-कथा 'रामायन' अरु 'रामान' (बुन्देली शब्द) कविता कानन के वास-सुवास सें परिपूरन है। इतै के रचनाकारन की लेखनी राम-कथा सें पवित्र भई। जी कौ सार-संक्षेप आगें बखानों जैहे।

रामचरित काव्य अरु कथा-साहित्य

रामायन कथा तौं 'सतकोटि अपार' हैं, जो देश-देशान की अनगिनत भाषान में रची गयीं। विदेशी विद्वानन में प्रमुख फादर बुल्के ने राम-कथा कों भौत महत्ता प्रदान करीती। ऐसेंई बुन्देलखण्ड के राम कथाकार अनगिनत हैं जिननें महाकाव्य, खण्डकाव्य एवं फुटकर काव्य रचे। काव्य के अलावा नाटक व उपन्यास विधान में राम-चरित लिखे गये। जिनमें प्रमुख नाँव इस प्रकार हैं–

1. वाल्मीकि रामायण–महर्षि वाल्मीकि
2. उत्तर राम चरित नाटक–भवभूति
3. रामायन कथा (बुन्देली भाषा)–विष्णुदास (सं. 1500 वि.)
4. कविवर कन्हरदास फुटकर रचना–(सं. 1580 वि.)
5. गोस्वामी तुलसीदास–रामचरित मानस (सं. 1589 वि.)
6. राम चन्द्रिका–कवीन्द्र केशव दास (सं. 1624-30 वि.)
7. रामचन्द्र नख-शिख वर्णन कवियित्री (ब्रजबुल) प्रेमसखी (सं. 1800 वि.)
8. बुन्देलखण्डी तुलसीदास–पदावली रामायण (बुन्देली) (सं. 1810 वि.)
9. वृषभान कुँवर–श्री रामचन्द्र माधुर्य (ब्रजबुल) लीलामृत सार (सं. 1912 वि.)
10. रामाश्वमेध–कवि मोहन दास मिश्र (सं. 1821 वि.)
11. श्री रामचरित नाटक–मुंशी अजमेरी (सं. 1938 वि.) (रामलीला पद्धति) चिरगाँव, झाँसी
12. बाल रामायण–मुंशी अजमेरी चिरगाँव, झाँसी
13. साकेत–मैथिलीशरण गुप्त (चिरगाँव, झाँसी)
14. कुछ बोलो राम–श्रीनिवास शुक्ल–छतरपुर, म.प.
15. मर्यादा पुरुषोत्तम–रघुवर प्रसाद खरे (सं. 1978 वि.) तालवेहट, ललितपुर, उ.प्र.
16. प्रिया या प्रजा–गोविन्द दास 'विनीत', तालवेहट ललितपुर
17. डॉ. परमलाल गुप्त–महानायक श्रीराम, सतना म.प्र.
18. जय-राष्ट्र–डॉ. राम नारायण शर्मा, बुन्देली भाषा उपन्यास, झाँसी
19. रघवंशम्–भैयालाल व्यास, छतरपुर, (सन् 2009 ई.)

ई तरां रामकथा की पयस्वनी की निर्मल धारा युग-काल के प्रश्नों कों साधत निर्मित भयौ। जो समय के साथ कथा के आधार बने।

रामकथा की भाव-भूमि के आधार

मानव जीवन के सन्ताप और उनसें जूझवै के संघर्ष एक युग सें दूजे युग में जारी रत। सतयुग के आर्य-अनार्य के अनसुलझे दुन्द त्रेता के प्रश्न बने। जीसें एक काल के श्राप दूसरे युग के लिए वरदान के आधार बने। रघुकुल के छोड़े काम दासरथी श्रीराम के संकलप बने। जिनसें धर्म-यज्ञ की मद्धिम पड़ती आग कों बल मिलौ और सुरासुर संग्राम में राम विजयी भये। ऐसें अनेकन शक्तियों के निदान सें विजय दुन्दभी की गूँज चहुँ ओर फैली और आजउँ सुनाई दे रई। युग के कारन व कारक बदलत रये परन्तु श्री राम की शक्ति की पूजा की कथा की पटकथा बदस्तूर चल रई और नित नयी भाव-भूमि सें उजागर भयी। जो आदि कवि बाल्मीकि सें चल कें आज के रामकथाकारन की वाणी सें गुंजायमान है।

रामकथा साँचउँ मानव जीवन के आर्त्तनाद-क्रन्दन व सन्त्रासन सें उपजी। क्रोंच-वध सें दुखी

मन सें ऐसी कविता के सुर निकले जो राम-कथा के प्रमान बने। आपत-विपत के करनधार रघुकुल नन्दन के संकलप-विकल्प की कथा के सूत्रधार बाल्मीकि रये। बाल्मीकि रामायण में श्रीराम कों राज-धरम-धुजा-धारक राजा मान कें पूरी राम की विजय कथा लिखी गयी। ई में मानव के वरदान, संकलप-सन्धान से राक्षसी प्रवृत्ति परास्त हुईं और आर्य संस्कृति की थापना सें राम-कथा की पूर्ति भयी। किन्तु बाल्मीकि रामायण को लव-कुश की कथा और सीता-वनवास, सीता कौ धरती मां में समा जावै सें उपजी नारी विथा की कथा उदित भयी। जिसनें राम-कथा में अनेकन प्रश्न खड़े कर दये ते। जिनके समाधान आजउँ रामके सामें उभर कें आये।

बाल्मीकि रामायण के सीता-वनवास और सीता की सती-कथा कों प्रमुख बना कें भवभूति ने अपने उत्तर रामचरित नाटक में सीता वनवास की बड़ी दारुन कथा लिखी जो आज की रामकथा की सूत्राधार बने हैं। सं. 1500 वि. के लगभग प्रथम बुन्देली भाषा के कवि विष्णुदास (ग्वालियर, म.प्र.) ने राम-कथा रची। किन्तु गोस्वामी तुलसीदास ने हिन्दी जन भाषान में 'रामचरितमानस' की रचना करी। जी में अत्याचारी, अनाचारी एवं आक्रमणकारियन सें दुखी जनता कों 'हारे कों हरनाम' कौ सम्बल प्रदान करौ। तुलसी ने राम कों अवतार मान मानस ताप हरन मानो तो। रामकथा और राम चरित्र कों तुलसी ने तब के समाज में 'कलिमल हरन, तुलसी कथा रघुनाथ की, कह कें दिशा प्रदान करीती। परन्तु सीता-वनवास कों कवि ने समय के निर्णय पै छोड़ दई ती जिये आगे के राम कथाकारन ने पूरी करीती।

नारी अरु नर समाज व कुटुम्ब के दो सम्बल हैं। इनकी एकजुटता समाज कों शक्ति प्रदान करती है। स्वराज्य के कांजें उदित नारी सामर्थ्य की चेतना कों ई समय के राम-कथाकारों ने स्थान प्रदान करों तो। तुलसीदास ने इसकौ आधार गीतावली में 'सीता वनवास' के आठ छन्द लिख कें करोतो। परन्तु कविवर मैथिली शरण गुप्त ने 'साकेत' में न केवल रामकथा कों एक नये रूप में मोड़ दयो वरन नारी-शक्ति स्वरूपा सीता कों नारी-समरथ कौ प्रतीक बनाओ। स्वराज्य के संग्राम में राम ने समाज कों एक नयी दिशा दई। उनके 'राम' पृथ्वी कों ही स्वर्ग बनाने कौ संकलप दे सम्बोधित कर रयेते।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद की रामकथा एक नये आधार पै चल निकली। जीमें कथा में सीता-वनवास के प्रश्न उभर कें सामें आये। श्रीनिवास शुक्ल छतरपुर म.प्र,. रघुवर प्रसाद खरे तालवेहट (ललितपुर) अरु गोविन्द दास' विनीत' ने अपने कथाक्रम—'कुछ बोलो राम' व 'सीता सत्यम्', 'मर्यादा पुरुषोत्तम' एवं 'प्रिया और प्रजा' में सीता-वनवास पै प्रश्न उठाये और मर्यादा में प्रिया (सीता) और प्रजा के दायित्व के बीच न्याय की बातें बड़ी साफगोई सें करीं। जैसें—

प्रश्न (1) नारी उत्पीड़न का तुम पर कठिन कठिनतर है आरोप।
(2) सीता गौण हुई राघव को, अब सत्ता हो गयी प्रधान।

इस पर कवि के विचार भी दये गये हैं। देखिए—

(1) सतत लोकरंजन ही मेरा जीवन व्रत हैं एक महान।
(2) लोकाराधन करने आया, मेरे मन में नहीं विकार।
(3) जिसको कहते हो उत्पीड़न, वही आत्मप्रक्षालन पन्थ।
(4) एक अकिंचन मत के आगे, कोई तन्त्र नही स्वच्छन्द।

ऐसा सोच जहाँ हो निश्चय, धन्य-धन्य वह राज्यानन्द। ई तराँ राम-कथा के लांछित प्रकरन समाधान पा कें दूर भये।

देशांचलों के संग बुन्देलखण्ड अंचल में राम-कथा के पुराने पड़ गये विचारन कों नयी धारा मिली

और बुन्देली कथाकारन ने नीर-क्षीर सें निकरे नये विचार बुन्देली भाषा में रख कें जन-जागरन कों पुष्ट करो। डॉ. परमलाल गुप्त (सतना) ने श्रीराम कों एक महामानव मान कें मानव-व्यौआर की कथा लिखी। जी में तमाम नये विचार रख कथा कों नयी दिशा दई। डॉ. रामनारायण शर्मा (झाँसी और ई लेख के लेखक) ने अपने पैलें बुन्देली भाषा जय-राष्ट्र उपन्यास में नयी दिशा दई। जैसें—अहिल्या उद्धार में राम कौ पाषानवत नारी कों पति-प्रेम दिलाकर जीवन्त करवो, कैकई के वरदान के कलंक कों गुरु वचन सें पूरन करवें सें नओ आधार दयो। मारीच की राम कों युद्ध की ललकार से सोने के मृग की कपोल-कथा कों नये रूप में दिखायो, छिटपुट-बिखरे गणराज्यन कों शक्तिशाली बना श्रीराम ने हिमाद्रि सें सागर-तट तक एकछत्र राष्ट्र निर्मान की कथा रच के नये पटल की रचना करी, जो नये श्री-सुख की कथा बनी।

रामकथा में लोकमंगल के भाव

महापुरुषों कौ चरित्र जन-कल्यान की भावनाओं से जुड़ौ रत। ई. में समाज के संस्कार-सरोकार की झलकी देखवें कों मिलती। इनके कार्यकलाप देश की संस्कृति के प्रमान बनते हैं। श्री राम तो भारत की संस्कृति के प्रान हैं। इनके नाम सें जन-मन के ताप मिटत। ऐइसें राम के चरित्र कों स्वयं सम्भाव्य मानो गओ। राम से अधिक राम कू नामः त्रिविध ताप हारी है। ऐसे राम की कथा जीवन और जन-जन कों जोड़वे में समरथ है। राम सत्यधुरीन हैं तौ उनका औतार लोक मंगल की कसौटी रहा है। राम कौ चरित्र नीति-रसायन और मर्यादा का पुष्ट प्रमाण है, अनुकरणीय है।

रामकथा में श्री राम के आदर्श ने व्यक्ति अरु समाज कों उदिशा दई। माता-पिता, गुरु को आदर भाव, भ्रातृ व सुहृत कौ कों अपार स्नेह देना राम की शील, सुचिता की विशेषता है। यही नहीं रामकथा में संजीवनी बूटी जैसे जीवनदायी प्रसंग जुड़े हैं। राम-कथा में लोक-मंगल के रीति-रिवाज, मंगल-गीत, व्यौआर, लोकलाज के संग लोक रंजन के चित्र देखवे मिलत। श्रीराम के वन-गमन में गाँव-वधूटियाँ हास-परिहास कर सीता से उन दो पुरुष वीरन के बारे में जब पूँछती हैं, तब सीता कौ पूरी मर्यादा सें उत्तर अत्यन्त सुन्दर प्रसंग तुलसीदास ने अपने रामचरित मानस में दर्शाये हैं। देखिए—

कोटि मनोज जलावन हारे,
सुमुखि कहहु को अहहिं तुम्हारे?

ई. बात पै सीता कौ भारतीय संस्कृति के अनुसार बड़ौ मनभावन उत्तर दयो तो। जैसें—

सुनि सनेहमय मंजुल बानी,
सकुचि सीय मन महुँ मुसकानी।

सीता ग्रामीण वधूटियन के चतुर वचन सुन अरु समझ कें सकुचत मन सें मुस्कयात उनकी ओर देखनें से पैलें अपनी धरती माता की मरजाता रक्ख पति परायन धर्म कौ पालन करत अपने ऐसे बोल खोलती हैं—

सहज सुभाव सुभग तन गोरे,
नामु लखुन लघु देवर मोरे।

ईसे जब माननी गाँवनियाँ दूजे पुरुष सिंह कौ परचै
पूँछतीं तो सीता पूरी मान-मरजाद सें संकेत से बतातीं—

बहुरि बदन बिधु अंचल ढाँकी।
पियतन चितइ भौंह कर बांकी।

खंजन मंजु तिरीछे नयननि,
निज पति कहेउ तिहहिंसिय सयननि।

जौई सब रामकथा कौ लोक-मंगल है। अपने वनवास के समय अनेक प्रसंगन में बड़ौं कौ आदर-सम्मान, मित्र की सहायता, लोकाचरन के आधार राम-कथा के आधार हैं। यहाँ तक कि शत्रु संग अच्छौ व्यौआर राम-कथा के प्रेरक प्रसंग बन पड़े हैं जो युग-युगान सें 'राम-लीला कथा' से जन-मानस में अन्दर पैठ बनाये हैं। यही सब सें राम-कथा लोक का खोया विश्वास लोटाती आ रई। जीसें मंगल व कल्याण के भाव प्रगट भये। राम-कथा में गंगा की पवित्रता, जमुना की गैराई अरु लोप होती सरस्वती की संस्कृति अरु बेतवा के फैलाव के भाव हैं।

बुन्देलखण्ड के कन-कन में राम-कथा रची-बसी है जो इतै के जन-मानस की बानी बन ई तराँ मुखरित हैं—

एक राम इक रावन्ना।
वे छत्री वे बाभन्ना।
उन्नें उनकी नार हरी।
उन्नें उनकी कुगत करी।
बातन बड़ गऔ बातन्ना।
तुलसी रच दऔ पोथन्ना।

बुन्देलखण्ड में रामकथा के प्रसंगों का शिल्पांकन

–हरिविष्णु अवस्थी

प्राचीनतम विष्णु मन्दिर हेतु पूरे देश में प्रसिद्ध देवगढ़ का वर्णन करने हेतु गजेटियरकार ई.वी. जोशी ने लिखा है कि–

"A place of great antiquity Deogarh lies in hat 24°15' N., and hong 78°15° E and directly connected with Lalitpur by a unmetalled road about 20 miles distant from the headquarters. It is also connected with the railway station of Jakhlaun about 9 miles away. The village is situated on the right bank of the Betwa at the western end of the table land of the Lalitpur range of hills.

The place has great antiquarian, epigraphical and archaeological importance and has figured in the history of the guptas, the gurjara pratihars, the gonds, the muslim ruler of Delhi Kalpi and Malwa, the Bundlas, the Marathas and the British. It possesses the remains of a fine Vishnu temple of Gupta times and a group of very old jain temples."[1]

देवगढ़ शब्द से ध्वनित होता है कि यह स्थान देवताओं के गढ़ के रूप में स्वीकार किया गया है। गढ़ का शाब्दिक अर्थ दुर्ग होता है तथा यह शब्द किसी सन्दर्भ विशेष के लिए प्रमुख स्थान होने का आभास भी देता है। सम्भव है अनेक देवी-देवताओं से सम्बन्धित होने के कारण इसका नाम देवगढ़ पड़ा हो।

“देवगढ़ का नाम दशावतार मन्दिर के कारण प्रसिद्ध हुआ। यह भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण में है। इस गुप्तकालीन मन्दिर की द्वारशाखा अत्यन्त कलात्मक है। इसमें उकेरे गये दाम्पत्य प्रेम के दृश्य बड़े मार्मिक हैं। बीच-बीच में सुन्दर पत्र बल्लरियों तथा बौनी आकृतियों से गर्भगृह का प्रवेश द्वार अलंकृत किया गया है। ललाट-बिम्ब पर शेषासीन विष्णु की मूर्ति है जिसके आसपास नृसिंह तथा वामन की लघु आकृतियाँ बनी हैं। गर्भगृह में सम्प्रति कोई प्रतिमा प्रतिष्ठापित नहीं है।

इस मन्दिर की ऊँची जगती में फलकों की दो पंक्तियाँ थीं, जिनमें रामायण और कृष्ण लीला के दृश्य भी अंकित थे। सम्प्रति दो फलकों को छोड़ कर शेष निकाल लिये गये हैं जो देवगढ़ स्कल्पचर शेड में सुरक्षित हैं और कुछ राष्ट्रीय संग्रहालय, नयी दिल्ली में प्रदर्शित हैं। रामायण दृश्यों में सीताहरण, अहिल्या उद्धार तथा शूर्पणखा प्रसंग आदि तथा कृष्ण लीलांकनों में नंद-यशोदा, शकटासुर वध आदि उल्लेखनीय हैं।

पहाड़ी पर बना दूसरा गुप्तकालीन वराह मन्दिर है जिसका मात्र अधिष्ठान बचा है। इसकी प्रधान मूर्ति नृवराह यथास्थान लगी हुई है और मन्दिर के ध्वंसावशेष वहीं पर यत्र-तत्र बिखरे हुए हैं। इस

मन्दिर में भी उसी प्रकार के तीन फलक लगे हुए थे जिस प्रकार दशावतार मन्दिर में। कला की दृष्टि से ये फलक उस कोटि के नहीं हैं। ये स्थानीय स्कल्पचर शेड में सुरक्षित हैं।"[2]

देवगढ़ में स्थित गुप्तकाल में निर्मित विष्णु मन्दिर के सम्बन्ध में पर्सी ब्राउन ने लिखा है कि–

"Few monuments can show such a high level of workmanship combined with a ripeness and rich refinement in its sculptural effect as the Gupta temple in Deogarh (Brown P. Indian archietecture) (Buddhist and Hindu periods) (Bombay 1956) P. 61."[3]

देवगढ़ जिला ललितपुर (उ.प्र.) के उपर्युक्त वर्णित रामकथा से सम्बन्धित प्रसंगों के शिलापट्टों के अतिरिक्त उ.प्र. के इसी ललितपुर जिले में ही दूधई-चाँदपुर नामक पुरातात्त्विक स्थलों में श्रीराम के स्वतन्त्र विग्रह भी प्राप्त हुए हैं। यथा–

"दूधई-चाँदपुर के स्मारकों से सुरक्षा की दृष्टि से बहुत-सी मूर्तियाँ निकाल ली गयीं और इन्हें झाँसी लाकर स्थानीय रानीमहल में सुरक्षित रखा गया है। इनकी कुल संख्या एक हजार से अधिक है। कला एवं मूर्ति विज्ञान की दृष्टि से यह संग्रह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। विष्णु की अनेक स्थानक तथा आसन प्रतिमाएँ संग्रहीत हैं। दशावतारों में नृसिंह तथा वामन की दुर्लभ मूर्तियाँ मिली हैं। नृसिंह अवतार की एक प्रतिमा में विष्णु भगवान को हिरण्यकशिपु से आमने-सामने युद्ध करते हुए दिखाया गया है। इस प्रकार का अंकन अपवाद स्वरूप ही प्राप्त होता है। राम की कई सुन्दर प्रतिमाएँ इस संकलन में हैं, जो अग्नि-पुराण के विधान के अनुसार बनायी गयी हैं।"[4]

विश्व प्रसिद्ध पर्यटक स्थल के रूप में विख्यात छतरपुर जिला में स्थित खजुराहो के एक हनुमान मन्दिर में भी एक शिलापट पर रामकथा का एक दृश्य अंकित है। 'मूर्तिकला में श्री हनुमान का संकट मोचन रूप' शीर्षक आलेख में बुन्देलखण्ड पुरातत्त्व के अधिकारी विद्वान डॉ. हरिसिंह और विश्वविद्यालय सागर के पुरातत्त्व विभाग के प्रमुख रहे प्रो॰ कृष्णदत्तजी वाजपेयी ने लिखा है कि–

"श्री हनुमान की इन स्वतन्त्र मूर्तियों के अतिरिक्त खजुराहो के शिलापदृ पर श्रीराम तथा श्री सीताजी के साथ हनुमान दिखाये गये हैं। यह शिलापदृ मठिया के बहिर्भाग में लगा है। इसमें श्रीराम के पार्श्व में श्री सीता खड़ी हैं। दायीं ओर खड़े हुए लक्ष्मण जी की लघु आकृति बनी है। वे करण्ड-मुकुट धारण किये हुए हैं। उनके मस्तक पर श्रीराम अपना दक्षिण कर पालित मुद्रा में रखे हुए हैं। इस शिला पट्ट का निर्माण काल ईसवी दसवीं शती है।"[5]

मध्यप्रदेश के टीकमगढ़ जिला में स्थित मोहनगढ़ नामक स्थान में भी एक शिलापट्ट पर रामकथा का प्रसंग उत्कीर्ण है। मोहनगढ़ की स्थिति टीकमगढ़ जिला गजेटिया में निम्नलिखित अनुसार दर्शायी गयी है–

"Mohangarh (25º0'N, 78° 47' E.)

It is a important village of Jatara tehsil, to lying about 20 kms of Bamhori. The place formerly known as garh and formed an of tapp of Jatara pargana. A fine tank lies near the village."[6]

डॉ. काशी प्रसाद त्रिपाठी के अनुसार–"मोहनगढ़ एक रमणीक आकर्षक कस्बा है। ग्राम में प्रवेश करते ही भगवान गुप्तेश्वर का मन्दिर मिलता है। यहाँ भगवान रामचन्द्र शिवलिंग की पूजा-उपासना कर रहे हैं। यह मन्दिर बाकाटक युगीन ज्ञात होता है जो मिट्टी से दबा हुआ था। इसके समीप दूसरा मन्दिर भूमि समाधिस्थ है, जिसका मात्र शिखर ही दृष्टिगोचर होता है।"[7]

ध्यातव्य है कि इस लेख के लेखक ने स्वयं इस शिला फलक को निकट से देखा है। इस पर भगवान श्री राम को रामेश्वर की स्थापना करते हुए उत्कीर्ण किया गया है।

“म.प्र. के पन्ना जिले में स्थित नचना नामक स्थान में भी गुप्त तथा कलचुरि-चन्देल कालीन वैष्णव प्रतिमाएँ हैं। गुप्तकालीन लगभग आधा दर्जन नाभिकाएँ जिन पर रामायण के दृश्य अंकित हैं।”[8]

ज्ञातव्य है कि इन नाभिकाओं में रामायण के जो प्रसंग उत्कीर्ण हैं, उनमें–

1. धनुष यज्ञ का दृश्य।
2. वनवास के समय राम-लक्ष्मण एवं सीता का वन-पथ पर चलते हुए।
3. लंका में अशोक वाटिका में सीता।
4. नल नील सहित सेतु बन्ध निर्माण के दृश्य को उत्कीर्ण किया गया है।

गत वर्ष राम-वन-गमन पथ शोध एवं संरक्षण दल का गठन म.प्र. के संस्कृति विभाग द्वारा किया गया था। इस दल में विशेषज्ञ के रूप में डॉ. सुरेश ‘पराग’ भी शामिल थे। डॉ. पराग से मुझे ज्ञात हुआ कि म.प्र. के पन्ना जिले में ही स्थित सिद्धनाथ आश्रम, जिसे अगस्त आश्रम के नाम से भी जाना जाता है, में एक मूर्ति, जिसे देवी जी के रूप में पूजा जाता है, को दल ने श्री रामचन्द्र जी का विग्रह माना है। इस विग्रह में वे धनुष-बाण धारण किये हुए हैं, उनकी कमर में कटार घुसी हुई है तथा एक कदम आगे बढ़ा हुआ है। यह मूर्ति प्रहार मुद्रा में उत्कीर्ण की गयी है।”[9]

बुन्देलखण्ड की गणना देश की सम्पन्न पुरा भूमि के रूप में की जाती है। अभी बुन्देलखण्ड के सम्पूर्ण भू भाग का सर्वेक्षण कार्य चल रहा है तथा अनेक स्थानों से अभी भी रामायण से सम्बन्धित प्रसंगों के अनेक शिलापट्ट मिलने की सम्भावना है।

सन्दर्भ

1. E.B. JOSHI– Gazetteer of India, D.P. Jhansi Pub. by gazetteer Department, Lucknow, Page 335.
2. डॉ. एस. डी. त्रिवेदी, बुन्देलखण्ड का पुरातत्त्व प्रका. राजकीय संग्रहालय झाँसी, उ.प्र. पृष्ठ–76-77
3. Broun P. Indian architecture (Buddhisht and HIndu periods)] Bombay] Page 61
4. डॉ. एस.डी. त्रिवेदी, बुन्देलखण्ड का पुरातत्त्व प्रका. राजकीय संग्रहालय झाँसी, पृ. 89
5. स्वामी रामसुखदास, ‘कल्याण’ श्री हनुमान अंक, (जनवरी, सन् 1975 ई.) प्रकाशक-गीता प्रेस गोरखपुर, पृष्ठ 407-408
6. Dr. N.P. Pandey– Tikamgarh Gazetteer Pub-directorate Rajshabha Sanskrit] Bhopal] Page-35
7. डॉ. काशी प्रसाद त्रिपाठी, बुन्देलखण्ड, सांस्कृतिक वैभव, प्रकाशक–समय प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 54
8. डॉ. राजकुमार शर्मा, म.प्र. के पुरातत्त्व का सन्दर्भ ग्रन्थ, प्रकाशक–हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल, पृ. 303
9. डॉ. सुरेश ‘पराग’ द्वारा प्राप्त जानकारी के अनुसार (व्यक्तिगत सम्पर्क)

‘रामराजा सरकार’ की नगरी ओरछा धाम

–वीरेन्द्र बहादुर खरे

ओरछा (बुन्देलखण्ड) के शासक परम वैष्णव, गौ एवं ब्राह्मणों के रक्षक रहे हैं। गढ़ कुण्डार नरेश रुद्र प्रताप ने अपनी नयी राजधानी हेतु परिहार शासकों की प्राचीन राजधानी रहे गंगा नगर को चुना।

प्राचीन ओरछा नगर वर्तमान समय में मध्य प्रदेश राज्यान्तर्गत टीकमगढ़ जिले में एक तहसील मुख्यालय के रूप में 25°-21° उत्तरी अक्षांश एवं 78°-42° पूर्वी देशान्तर रेखाओं के मध्य स्थित है। मध्य रेलवे के झाँसी जंक्शन से मात्र 18 कि.मी. की दूरी पर सड़क मार्ग से सम्बद्ध है।

हिन्दी भाषा के प्रथमाचार्य कवीन्द्र केशव दास जी ने ‘रसिक प्रिया’ ग्रन्थ में ओरछा की स्थिति को निम्नलिखित पंक्तियों में व्यक्त किया है–

“नदी बेतवै तीर जहँ तीरथ तुंगारन्य।
नगर ओड़छो बहुबसै धरनीतल में धन्य।।”[1]

ओरछा जिस बेत्रवती (बेतवा) के तट पर स्थित है उस बेत्रवती की उत्पत्ति और उसके मज्ञहात्म्य के विषय में पद्‌म पुराण के उत्तर खण्ड में उल्लेख है कि–वृत्रासुर ने महागम्भीरा नामक कूप का खनन कर उससे बेत्रवती को प्रवाहित किया था। यह भागीरथी के समान पवित्र है तथा इसके स्तवन एवं दर्शन मात्र से मनुष्य को संसार से मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

पद्‌म पुराण में भी एक कथा है कि चम्पक नरेश विदारुण अत्यन्त क्रूर, अत्याचारी तथा कुष्ठ रोग से ग्रसित था। एक बार वह शिकार खेलने जंगल में गया। प्यास लगने पर वह वहीं प्रवाहित बेत्रवती के तट पर गया और जलपान किया। दूसरे दिन प्रातः जब वह सोकर उठा तो उसे अपने कुष्ठ रोग से गलित अंगों में कुछ लाभ होने का अनुभव हुआ। उसने इसे बेत्रवती के जल का प्रभाव मानकर उसी दिन से बेत्रवती के जल से स्नान करना एवं उसी का जलपान करना आरम्भ कर दिया। फलस्वरूप अल्प समय में ही उसका कुष्ठ रोग जाता रहा। इसके अतिरिक्त उसके क्रूर स्वभाव में भी परिवर्तन आ गया और वह भगवान, गाय, एवं ब्राह्मणों पर आस्था करने लगा। अन्त में वह बैकुण्ठवासी हुआ।

पद्‌म पुराण में ही नहीं, वाराह पुराण में भी बेत्रवती की महिमा का वर्णन करते हुए शृंगवेरपुर में भगवान शिव ने देवताओं को बताया कि भागीरथी एवं बेत्रवती सभी सरिताओं में श्रेष्ठ हैं। इनके दर्शन और स्मरण करने से भक्त पाप मुक्त होकर विष्णु लोक को प्राप्त करते हैं। शिवजी ने कहा कि जो भक्तगण भागीरथी एवं बेत्रवती के जल से मेरा अभिषेक करेंगे उन्हें यज्ञ करने का फल प्राप्त होगा।

आयुर्वेद ग्रन्थ निघण्टु में बेत्रवती जल के गुणों के सम्बन्ध में लिखा है कि–

“तत्रान्यादधते जलं सुमधुरं कान्तिप्रदं पुष्टिदं।

वृस्य दीपनपाचनं बलकरं बेत्रवती तापिनी।।”[2]

यह तो हुई ओरछा में प्रवाहित वेत्रवती की महिमा। और तुंगारण्य? तुंगारण्य की तो अपनी प्रतिष्ठा ही अलग है। अति पावन और पुनीत। आचार्य केशवदास ने वेत्रवती के निकट स्थित ब्रह्मा जी एवं तुंग ऋषि की तपोभूमि तुंगारण्य का वर्णन करते हुए लिखा है कि–

“कैसोदास ओड़छा के आसपास तीस कोस,
तुंगारण्य नाम वन बैरी कौ अजीत है।
निधि कैसो बन्धुवर बरन ललित बाँध,
बानर बराह बहु मिल्लन कौं अभीत है।
जम की जमाति जी कि जामवन्त को सो दल,
महिष सुखद स्वच्छ रिच्छन को मीत है।
अचल अनबरत सिन्धु सी सरित जुत,
सम्भु कैसो जटाजूट परम पुनीत है।”[3]

आचार्य प्रवर मित्र मिश्र ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ ‘वीर मित्रोदय’ में इसे ‘तुंगकम दिव्य तीर्थ की संज्ञा प्रदान की है।

“ओरछेश रुद्र प्रताप ने तुंगारण्य में बेत्रवती एवं जम्बुला (जामनेर) के संगम स्थल पर वैशाख शुक्ल 03 संवत् 1588 वि. तदनुसार 29 अप्रैल रविवार सन् 1531 ई. को नवीन राजधानी ओरछा नगर का शिलान्यास किया।”[4] यथा–

“भानु तीज बैसाख सुद वसु वसु तरु ससि साल।
नगर ओरछो नागरो रुद्र प्रताप नृपाल।।”5

(विजय व्रज विलास छन्द 22)

रुद्र प्रताप धर्म परायण, प्रजापालक, गौ, ब्राह्मणों के रक्षक थे। एक बार जब गढ़ कुण्डार जा रहे थे तो उन्हें जंगल में एक गाय के रम्भाने की आवाज सुनाई दी। वह उस ओर बढ़ गये। उन्होंने देखा कि एक शेर गाय को अपना ग्रास बनाने का प्रयत्न कर रहा है। उन्होंने तलवार निकाल कर शेर पर आक्रमण कर दिया। शेर कहाँ चुप बैठने वाला था। तलवार के वार से शेर तो मारा गया और गाय के प्राण बच गये किन्तु रुद्र प्रताप बुरी तरह घायल हो गये और उसी वर्ष दिवंगत हो गये।”[6]

ज्ञातव्य है कि जिस स्थान पर ओरछा नगर का शिलान्यास रुद्र प्रताप ने किया था। उसका पूर्व नाम गंगापुरी था, जो कभी परमार शासकों की राजधानी रही थी। इसके प्राचीन नाम तुंगगिरि और कंचनपुरी भी जनश्रुतियों में सुरक्षित हैं। तुंगगिरि नाम तुंगारण्य के कारण सम्भव हो सकता है और वेत्रवती के एक घाट का नाम आज भी तुंगारन्य घाट है, जहाँ 12 फरवरी 1948 ई. को राष्ट्र पिता महात्मा गाँधी की अस्थियों का विसर्जन हुआ था। कंचनपुर नाम की जनश्रुति की पुष्टि वेत्रवती के घाट कंचना घाट से भी होती है।

रुद्र प्रताप के पश्चात् उनके ज्येष्ठ पुत्र भारती चन्द्र गद्दी पद बैठे। अपने राजत्व काल में उन्होंने ओरछा दुर्ग एवं नगर के विशाल परकोटे का निर्माण करवाया। पुत्रविहीन दिवंगत होने पर उनके अनुज “मधुकर शाह जू देव (1554-92 ई.) ओरछा के राजा हुए।”[7]

मधुकर शाह जू देव सनातन हिन्दू धर्म के कट्टर अनुयायी एवं भगवान श्री कृष्ण के उपासक थे। वह मथुरा से राधावल्लभ एवं जुगल किशोर के विग्रह ओरछा लाये थे। राधा-माधव के विग्रहों की प्रतिष्ठा किले में हुई और जुगल किशोर के हेतु पृथक् मन्दिर का निर्माण कराकर उसमें प्रतिष्ठा करायी गयी।

मधुकर शाह जू देव की राज महिषी गणेश कुँवरि, काशी नरेश अनिरुद्ध सिंह की पुत्री थी। माता विजय कुँवरि से उन्हें भगवान श्री राम की उपासना विरासत में प्राप्त हुई थी। महाराजा कृष्ण उपासक और महारानी राम उपासक। इस कारण राजा और रानी के मध्य विवाद होने सम्बन्धी अनेक अनुश्रुतियाँ लोककण्ठ में व्याप्त हैं। किसी विवाद की चर्चा करना उचित न समझते हुए इतना निर्विवाद सत्य है कि महारानी गणेश कुँवरि ओरछा से अयोध्या जी गयीं। वहाँ उन्होंने साधना की और जैसी कि लोक मान्यता है सरयू में उन्हें भगवान श्री राम का विग्रह प्राप्त हुआ।

भगवान श्री राम ने उनके साथ ओरछा चलने हेतु निम्नलिखित तीन शर्तें लगायीं—

(1) श्री राम जी की यात्रा अयोध्या से ओरछा तक केवल पुष्य नक्षत्र में ही होगी।

(2) श्री राम जी को जिस स्थान पर विराजमान किया जाएगा, उस स्थान से फिर किसी दूसरे स्थान पर नहीं जाएँगे।

(3) श्री राम ने कहा कि जहाँ मैं रहूँगा वह स्थान उजाड़ हो जाएगा।

“इस घटना का समाचार अयोध्या नगर में जंगल की आग की तरह फैल गया। साधु-सन्तों ने संगठित होकर श्री राम जी के ओरछा जाने की योजना का विरोध आरंभ कर दिया। ऐसा कहा जाता है कि सन्त गोस्वामी तुलसीदास जी की अध्यक्षता में इस विवाद को सुलझाने हेतु पंचायत हुई, जिसमें यह निर्णय हुआ कि श्री राम अकेले ही ओरछा प्रस्थान करें। माता सीता का निवास अयोध्या में ही रहेगा तो इस स्थिति में श्री राम को अयोध्या पधारना ही होगा।”[8]

उपर्युक्त निर्णय अनुसार रानी गणेश कुँवरि ने श्री राम जी के विग्रह को लेकर अनेक साधु-सन्तों के साथ श्रावण शुक्ल पंचमी संवत् 1630 वि. को पुस्य नक्षत्र में अयोध्या से ओरछा हेतु प्रस्थान किया और 8 माह 27 दिन पुष्य नक्षत्र में ही यात्रा करने के कारण ओरछा आने में लग गये। चैत्र शुक्ल नवमी (राम नवमी) को श्री राम का आगमन ओरछा में हुआ। श्री राम हेतु मन्दिर निर्माण का कार्य पूर्ण नहीं हुआ था इसलिए उन्हें फिलहाल महारानी ने अपने महल में विराजमान कर दिया। इस सम्बन्ध में एक दोहा यहाँ के लोगों के कण्ठ में विराजमान है—

“मधुकर शा महाराज की रानी कुँवरि गणेश।
अवधपुरी से ओरछा लाई अवध नरेश।।”[9]

ऐसी मान्यता है कि भगवान श्री राम प्रातः से सन्ध्या पश्चात् तक तो ओरछा में निवास करते हैं और उनका रात्रि निवास अयोध्या में ही होता है।—

“राम राजा सरकार के दो निवास हैं खास।
दिवस ओरछा में रहत रैन अयोध्या वास।।”[10]

अयोध्यापति श्री राम के ओरछा आगमन के साथ ओरछाधिपति श्री मधुकर शाह जू देव ने अपना राज्य भगवान श्री राम के चरणों में समर्पित कर दिया। भला एक राज्य के दो अधिपति होना कैसे सम्भव है? फलस्वरूप भगवान श्री राम ओरछा के ‘रामराजा सरकार’ हो गये और ओरछेश मधुकर शाह जू देव ओरछा के कार्यवाहक नरेश। मन्दिर तैयार हो जाने के बाद भी अपनी पूर्व शर्त के अनुसार श्री राम भगवान महारानी के महल में ही विराजमान बने रहे और महल ही मन्दिर के रूप में परिवर्तित हो गया।

गर्भ गृह में विराजमान ‘रामराजा सरकार’ अपनी पद-प्रतिष्ठा के अनुकूल परमासन में विराजमान हैं। सरकार का बायाँ चरण दाहिनी जंघा पर शोभायमान है तथा चरण के ऊपर सरकार की टिहुनी स्थित है। पोशाक में से पैर का अँगूठा दर्शन हेतु खुला रहता है। जिसके शुभ दर्शन मात्र से भक्तों

की मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं। राजा के अनुरूप दाहिने हाथ में तलवार है जो कंधे से टिकी हुई है तथा बाएँ हाथ में ढाल सुशोभित है। रेशमी जरतारी पोशाक रत्नजटित स्वर्णाभूषण एवं मुकुट से परिपूर्ण छवि निरखते-निरखते आँखें नहीं थकती हैं।

इस मन्दिर की कुछ विशेषताएँ भी हैं। यथा—

“1. ओरछा में श्री राम भगवान के रूप में नहीं, एक नरेश के रूप में विराजमान हैं। विश्व में अन्यत्र नहीं।

2. रामराजा सरकार का विराजमान स्थल किसी मन्दिर के आकार-प्रकार का नहीं अपितु राजमहल है।

3. रामराजा सरकार की आरती के समय पुलिस गार्ड द्वारा विधिवत् सलामी दी जाती है।

4. राजा के अनुकूल अस्त्र-शस्त्र के रूप में वे तलवार और ढाल लिये हुए हैं, धनुष-बाण नहीं।

5. अचल स्थापना होते हुए भी रंग पंचमी, श्री राम नवमी, विवाह पंचमी, श्रावण तीज आदि के विशिष्ट समैया पर रामराजा सरकार गर्भगृह के बाहर जगमोहन में विराजमान होते हैं, जहाँ मात्र एक डेढ़ मीटर की दूरी से सरकार के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त होता है।”[11]

महाराजा मधुकर शाह जू देव एवं महारानी गणेश कुँवरि की भगवन निष्ठा के कारण श्री नाभादास जी ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ ‘श्री भक्तमाल’ में दोनों विभूतियों का उल्लेख किया है। भगवत रसिक जी प्रणीत भक्त नामावली एवं राजा नागरी दास जी रचित ‘पद प्रसंग माला’ में भी मधुकर शाह का उल्लेख है।

तत्कालीन ओरछा का बहुत सुन्दर शब्द चित्र आचार्य केशव दास जी ने निम्नलिखित छन्द में किया है।—

“चहुँ भाग बाग वन मानहु सघन घन,
सोभा की सी साला, हंसमाला सी सरितवर।
ऊँचे-ऊँचे अटनि पताका अति ऊँची जनु,
कौसिक की कीनी गंगा खेलत तरल तर।
आपने सुखनि आगे निन्दन नरिन्द और,
घर-घर देखियत देवता से नारि नर।
केसोदास त्रास जहाँ केवल अदिष्ट ही को,
वारियै नगर और ओरछे नगर पर।”12

तत्कालीन संस्कृताचार्य मित्र मिश्र ने ‘आनन्द कन्द चम्पू’ ग्रन्थ के अष्टम उल्लास में श्लोक संख्या 51 से 64 तक में ओरछा का बहुत सुन्दर चित्रण किया है। बानगी के रूप में एक श्लोक ध्यातव्य है।—

“उतुङ्गैः सौध संघैः स्फटिकसुविशदैर्द्योरिवोद्यत्तारेन्दु
भूपतीन्द्रोरभिमतफलभूरौरछा राजधानी।
पद्मायाः सद्य पद्मान्तिकगत विशदद्वेत्रवत्याः प्रवाहं
तत्यान्तप्राप्तनाहं कलयति तपसां यः परीणाहवाही।।55।।”[13]

अर्थात् ओरछा नगरी उच्चातिउच्च सौध शिखरों एवं स्फटिक मणि पाषाणों से विरचित पृथ्वी पर स्वर्णोपम वैभवशाली बन रही है। लक्ष्मी की निवास भूमि बेत्रवती की जलधारा मानो तपस्याओं को फल प्रदान कर प्रभावित हो रही है।

बुन्देली गरिमा का सजीव स्थल, बेत्रवती एवं जम्बुला का संगम, तुंगारण्य में स्थित ओरछा, रामराजा सरकार के विराजमान होने से परम धाम हो गया। इसकी पावनता, श्रेष्ठता, सम्पन्नता, धार्मिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, शौर्य, साधना, स्थापत्य कला सम्बन्धी वैभव ऐसा समृद्ध और सम्पन्न रहा है कि जिस पर कोई भी युग, कोई भी काल गर्व एवं गौरव का अनुभव कर सकता है।

सन्दर्भ

1. विश्वनाथ मिश्र, सम्पादक केशव ग्रन्थावली खण्ड 2, प्रकाशक हिन्दुस्तानी, एकेडेमी इलाहाबाद, पृ.1
2. आयुर्वेद निघण्टु हस्तलिखित प्राचीन पाण्डुलिपि, पृ. 27
3. विश्वनाथ मिश्र, सम्पादक केशव ग्रन्थावली खण्ड 2, प्रकाशक हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, पृ. 132-33
4. महेन्द्र द्विवेदी, सम्पादक टीकमगढ़ दर्शन, प्रकाशक ग्राम भारती, जयेन्द्रगंज, ग्वालियर, पृ. 1
5. पद्माकर भट्ट, विजय ब्रज विलास दरबार, दतिया, पृ. 22
6. डॉ. काशी प्रसाद त्रिपाठी, बुन्देलखण्ड का बृहद इतिहास, प्रकाशक समय प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 57
7. डॉ. काशी प्रसाद त्रिपाठी, बुन्देलखण्ड का बृहद इतिहास, प्रकाशक समय प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 60
8. ठाकुर लछमन सिंह, ओरछा का इतिहास प्रकाशक ठाकुर लछमन सिंह, ओरछा, पृ. 59
9. हरि मोहन मालवीय, सम्पादक पत्थरचट्टी रामलीला स्मारिका 2011, प्रकाशक पत्थरचट्टी रामलीला कमेटी, इलाहाबाद, पृ. 177
10. ठाकुर लछमन सिह, ओरछा का इतिहास, प्रकाशक ठाकुर लछमन सिंह, ओरछा, पृ. 58
11. हरिमोहन मालवीय, पत्थरचट्टी रामलीला स्मारिका 2010, प्रकाशक पत्थरचट्टी रामलीला कमेटी, इलाहाबाद, पृ. 171
12. विश्वनाथ मिश्र, सम्पादक, केशव ग्रन्थावली, प्रकाशक हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, पृ. 37
13. मित्र मिश्र, आनन्द कन्द चम्पू, सम्पादक महामहोपाध्याय गोपीनाथ कविराज, चौखम्भा प्रकाशन, बनारस, पृ. 47

दतिया के भित्तिचित्रों में रामकथा

–विनोद मिश्र 'सुरमणि'

लोक कला किसी भी अंचल की उस पारम्परिक शैली का प्रतिनिधित्व करती है जिस अंचल के सामान्य से सामान्य व्यक्ति चाहे वह पुरुष हो या महिला दोनों ही किसी पर्व, तिथि, त्योहारों एवं संस्कारों के अवसर पर अपने भावों को उसके माध्यम से प्रस्तुत करते हैं। इसके प्रकार चाहे संगीत से हों या चित्र से, अभिव्यक्ति के ये सशक्त माध्यम होते हैं।

जहाँ तक चित्र कला का प्रश्न है तो चित्र आदिकाल से हमारे संस्कारों में व्याप्त है क्योंकि–

चित्रं हि सर्व शिल्पानां मुखे लोकस्य च प्रियम्

(–समरागंण सूत्रधार/39-71)

अर्थात, चित्र सभी प्रकार के शिल्पों का मुख रूप है, इसे जनमानस पसन्द करता है। महर्षि वेद व्यास लिखते हैं कि–

कलानां प्रवरं चित्रं धर्मकामार्थ मोक्षदम्।
मंगल्यं प्रथमं चैतद् गृहे यत्र प्रतिष्ठितम्।।

(विष्णु धर्मोत्तर पुराण/खण्ड–3-अ-43/श्लोक 38)

शास्त्रों में दिये गये ये उद्धरण जनमानस से परे हैं क्योंकि विष्णु धर्मोत्तर पुराण ही नहीं बल्कि जनसामान्य का तो संस्कृत भाषा से भी कुछ लेना-देना नहीं है। परन्तु शास्त्र ने चित्र के माध्यम से जिस भाव को परिभाषित किया है, वह यही है। जन-सामान्य के साथ जंगल में वास करने वाले आदिवासी उक्त परिभाषाओं से कोसों दूर हैं। अपने-अपने भावों को उन्होंने भी पहाड़ों गुफाओं में शैल चित्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया है, जो हमारी धरोहर के रूप में पहचान रखते हैं।

हर अंचल की अपनी विशेष चित्रशैली होती है, चाहे वह राजस्थानी हो या बिहार की मधुबनी शैली। सभी की अपनी आंचलिक विशेषताएँ हैं। हमारे बुन्देलखण्ड की भी अपनी निजी लोकचित्र परम्परा है। विशेषकर उन क्षेत्रों में जहाँ चित्रकला को राज्याश्रय प्राप्त रहा। साहित्य एवं कला से अपनी पहचान बनाती गयी बुन्देलखण्ड की सांस्कृतिक नगरी दतिया कला साहित्य के साथ 'दतिया कलम' के लिए भी भारतवर्ष में जानी जाती है। यहाँ के लरायटा धरावा एवं फुलटा के पहाड़ों गुफाओं के शैलचित्र, बुन्देला शासकों द्वारा स्थापित स्मारकों, मन्दिरों, मठों व सरायों में बने भित्तिचित्र दतिया कलम का गुणगान करते हैं। यहाँ के पुरातात्विक स्मारकों में बने भित्तिचित्र दतिया की चतेउर।[1] लोकचित्र शैली के अनूठे उदाहरण हैं। ऐसे स्मारकों के चित्रों में जहाँ, यहाँ के नरेशों की गाथाओं का चित्रण किया गया है, वहीं धार्मिक कथाओं को भी सजीवता से चित्रित किया गया है। प्राचीन चित्र शास्त्र में ऐसे चित्रों को 'कुड्य चित्र' कहते हैं।

'दतिया कलम' की अपनी सांस्कृतिक परम्परा है। यहाँ की चित्रशैली धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और साहित्यक परिवेश का प्रतिनिधित्व करती है। कुछ कला समीक्षकों ने 'दतिया कलम' की बुन्देली शैली को मुगल चित्रशैली या राजस्थानी चित्रशैली का एक विकसित रूप माना है। इस सन्दर्भ में इतिहासकार एवं चित्रकार पं. महेश कुमार मिश्र 'मधुकर' का मानना था कि दतिया की अपनी बुन्देली शैली है। परन्तु समीक्षकों की बात को वह उनकी अपनी मान्यता कहते थे। उन्होंने अपनी पुस्तक सुरौती[2] में इस बात का जिक्र किया है परन्तु 'दतिया कलम' की अपनी पहचान या वास्तविकता को उसके पुरातत्त्व एवं इतिहास के अध्ययन उपरान्त ही समझा जा सकता है। यह विषय शोध का या सेमिनारों में परिचर्चा का हो सकता है। इस आलेख में दतिया के ऐतिहासिक स्थलों में बने भित्तिचित्रों में रामकथा चित्रण को लिया गया है। 'दतिया कलम' के उक्त स्थलों पर बने चित्र 'चतेउर' कहे जाते हैं और चित्रकारों को 'चतेउरी' कहते हैं। पूर्व समय में इनका एक मुहल्ला था। जिसे 'चतेउरियों का पुरा' कहा जाता था। ये पीढ़ी दर पीढ़ी इस कला को अपनी जीविका का साधन बनाये हुए इस कला को जीवित रखे रहे। रियासतों के खत्म होने पर ये लोग अन्य धन्धा करने लगे। कुछ अन्य जातियों ने इस कला को सँभाला परन्तु धीरे-धीरे संरक्षण के अभाव में यह कला नष्ट होती गयी। दीपावली पर 'लक्ष्मी का पना' कुछ मुस्लिम परिवार के लोग बना कर बेचा करते हैं। जो चतेउर शैली का एक अंग है।

अवध बिहारी जी मन्दिर का राम दरबार

दतिया चित्रशैली के चतेउरियों के भित्तिचित्र लाड़िली दास का मन्दिर, बिहारी जी मन्दिर, शिवगिरि मन्दिर और विजय गोविन्द मन्दिर में सुरक्षित हैं। यहाँ बड़ी सरकारी[3] जू के अवध बिहारी जी मन्दिर में बने रामकथा से जुड़े चित्र अद्‌भुत कलाकृतियाँ हैं। अवध बिहारी जी के मुख्य दरवाजे के तोरण पर 'राम दरबार' का चित्रांकन देखते ही बनता है। 2x7 वर्गफुट में बना यह चित्र जमीन से 20 फीट ऊँचाई पर बनाया गया है। बुन्देली परिधान में राम जी व चारों भाई तथा हनुमान जी का चित्र सुहावना लगता है। मन्दिर प्रांगण में अन्य भागों में अनेक प्रकार की कलाकृतियाँ अंकित की गयी हैं। अन्य सामयिक विषयों के साथ कहीं-कहीं छज्जों पर हनुमान जी के विग्रह को चित्रांकित किया गया है। इस मन्दिर का निर्माण विपिन बहादुर के काल में सन् 1843 ई. में हुआ। वर्तमान प्रभारी पं. चन्द्र प्रकाश लिटौरिया चित्रों की देखभाल में लिए चिन्तित रहते हैं।

महाराज पारीक्षत में मुकरवा में बने चित्र

दतिया नरेश पारीक्षत के मुकरवा (चैत्य) का निर्माण उनके उत्तराधिकारी विजय बहादुर ने सन् 1839-40 ई. में कराया था। विजय बहादुर एक धार्मिक एवं सांस्कृतिक स्वभाव के व्यक्ति थे। इस कारण उनकी सोच कलात्मक थी। पारीक्षत महाराज के मुकरवे में गुम्बदों की नीची सतह (छत) पर महाराज पारीक्षत के दरबार के चित्रण के साथ-साथ धार्मिक कथाओं का चित्रांकन भी है। इसमें कृष्णलीला को प्राथमिकता दी गयी है, साथ ही कुछ स्तम्भ के ऊपरी भाग में रामकथा से राम का राज तिलक, मुनि वशिष्ठ, विश्वामित्र आदि द्वारा पूजन करवाना दर्शाया गया है। वहीं ब्रह्मा, विष्णु व अन्य देवताओं की उपस्थिति राम दरबार में दिखाई गयी है। एक अन्य चित्र में चारों भाइयों द्वारा गुरु (वसिष्ठ) को प्रणाम करते हुए दर्शाया गया है। मूलतः ये चित्र दतिया के प्रमुख चतेउरी स्व : मौजी[4] एवं नन्है दोनों लोक चित्रकारों के बनाये हुए हैं।

सूर्य मन्दिर उनाव में रामकथा का चित्रण

दतिया से 17 कि.मी. पूर्व की ओर प्रसिद्ध तीर्थ वाला जी का सूर्य मन्दिर प्रहूण नदी के तट पर बना हुआ है। यहाँ का सूर्य मन्दिर भारत के प्रमुख सूर्य मन्दिरों में माना जाता है। यहाँ सूर्य यन्त्र की उपासना होती है। कुष्ठ रोग के इलाज के लिए आये रोगी यहाँ पर लाभ पाते हैं। यहाँ पर सम्पूर्ण देश से तीर्थयात्रियों का आना-जाना सदैव लगा रहता है, अतः उनके रहने-ठहरने की व्यवस्थानुसार धर्मशाला के रूप में कुछ दालानें मन्दिर परिसर में निर्मित हैं। इनका स्थापत्य सन् 1844 ई. के पास का है। इन दालानों की छत के तले जो चित्रांकन किया गया है, वह देखते ही बनता है। रामकथा के लोकचित्रों में राम का राक्षसों से युद्ध, रावण का पंचवटी में ब्राह्मण रूप में भिक्षा लेना, सीताहरण, जटायु का घायल अवस्था का चित्र, हनुमान जी सहित अन्य वानर सैनिकों द्वारा सेतु निर्माण, हनुमान जी का नृत्य कर वानरों का मनोरंजन करना, आदि चित्र बने हुए हैं। ये चित्र भी असुरक्षित हैं क्योंकि ग्रामीण क्षेत्र में आने वाले दर्शनार्थी भोजन आदि इन्हीं दालानों में पकाते हैं। धुएँ से इन चित्रों को नुकसान पहुँच रहा है। अन्य दालानों में चित्रों पर बालाली ट्रस्ट एवं ग्राम पंचायत ने सक्रियता दिखाते हुए कलई पोत दी जिससे दुर्लभ चित्रांकन नष्ट हो गया।

राजा का बाग के चित्र में राम चरित मानस

इस आलेख में पारीक्षत के मुकरवा, अवध बिहारी जी मन्दिर व सूर्य मन्दिर के चित्रों का वर्णन किया जा चुका है। यह बताना भी आवश्यक होगा कि उक्त स्थलों में चित्रों का अवलोकन इतिहासकारों, चित्रकारों, साहित्यकारों एवं शोधार्थियों ने अनेक बार किया होगा। विभिन्न पुस्तकों, स्मारिकाओं में इन पर लेख, रचनाएँ, आलेख प्रकाशित किये होंगे, परन्तु दतिया से मात्र 7 कि.मी. दूरी पर 'राजा का बाग' में स्थापित शिव जी के मन्दिर के भित्तिचित्रों पर किसी का भी ध्यान नहीं गया। इसे अज्ञानता कहें या उपेक्षा? बहरहाल राजा का बाग प्रसिद्ध खैरी की माता मन्दिर से 100 मीटर दूरी पर एक खेत में बना हुआ है। कुछ व्यक्तियों की मान्यता है कि यह बाग प्रख्यात पखावजी कुदऊँ सिंह महाराज को महाराज भवानी सिंह ने पुरस्कार स्वरूप दिया था। यहीं पर उसकी समाधि की लोक चर्चा आ जाती है। राजा के बाग में बने इन चित्रों की अपनी अलग विशेषता है। इनका चित्रांकन राम चरित मानस के सातों काण्डों के आधार पर किया गया है। मन्दिर के मुख्य दालान या जगमोहन की छत पर बने इन चित्रों को खण्डों में विभक्त किया गया है। खण्डों में बने चित्रों के बीच खण्ड में क्षीर सागर में शेष शैया पर विराजमान भगवान विष्णु को दर्शाया गया है। फिर राम अवतार की कथानुसार चित्र बने हैं जिनमें ऋषियों द्वारा पुत्र-प्राप्ति के लिए यज्ञ करना, राम-जन्म, दशरथ का चारों भाइयों को गोदी में खिलाना, विश्वामित्र का राम लक्ष्मण सहित यज्ञ रक्षा करवाना, ताड़का-वध, सीता जी का महल के झरोखे से देखना, राम-विवाह आदि के चित्र सुरक्षित हैं। शेष कथा के चित्रों को नष्ट कर दिया गया है। वर्तमान में शेष बचे चित्र भी या तो झड़ रहे हैं या उनको कलर से रँगने का कार्य किया जा रहा है। अगर इस ओर ध्यान नहीं दिया गया तो स्वामित्व में रह रहे विज्ञान को इन्हें नष्ट करने में कोई कठिनाई नहीं होगी। राजा के बाग के चित्रों की सुन्दरता देखते ही बनती है। बुन्देली पहनावा, राजकुँवरों की पोशाक, राम का घोड़े पर टीका ओर 'बुन्देली वागा' पहनना आदि यहाँ की पारम्परिक पहचान दर्शाता है।

दतिया की लोक चित्रशैली की इस पारम्परिक शैली में रामकथा मन्दिरों में आने वाले भक्तजनों को आध्यात्मिक रूप से जोड़ने में अहम् भूमिका निभाती है। आज यह दुर्लभ शैली नष्ट हो चुकी है।

शेष बची चित्रकारी नष्ट की जा सकती है। अब ना लोक चित्रशैली रही है और ना लोक चित्रकार। अवशेष अगर है तो कुछ स्मारकों-मन्दिरों में बने ये दुर्लभ चित्र। परन्तु संरक्षण के अभाव में असुरक्षा की स्थिति में ये भी नष्ट होने के कगार पर आ चुके हैं। इन्हें सुरक्षित एवं संरक्षित करना शासन प्रशासन के साथ-साथ हम सभी का भी दायित्व है, जिसे हमें निभाना चाहिए। तभी हम अपने आराध्यों प्रति स्पष्ट एवं भावनात्मक रूप से जुड़े प्रतीत होंगे।

1. **चतेउर**—दतिया की लोक चित्र परम्परा को चतेउर कहा जाता है जो एक जाति विशेष में होती थी।

2. **सुरौती**—म.प्र. आदिवासी कला परिषद भोपाल के प्रमाणित बुन्देलखण्ड की चित्रशैली पर पुस्तक-लेखक—प. महेश कुमार मिश्र 'मधुकर' वर्ष 2005।

3. **बड़ी सरकार**—महाराज विजय बहादुर जू की बड़ी रानी विजय कुँअरि।

4. **मौजी एवं नन्है**—दतिया के प्रमुख चतेउरी थे। जिनका उल्लेख पारीक्षत मुकरवे के चित्रों में दिये नामों में है।

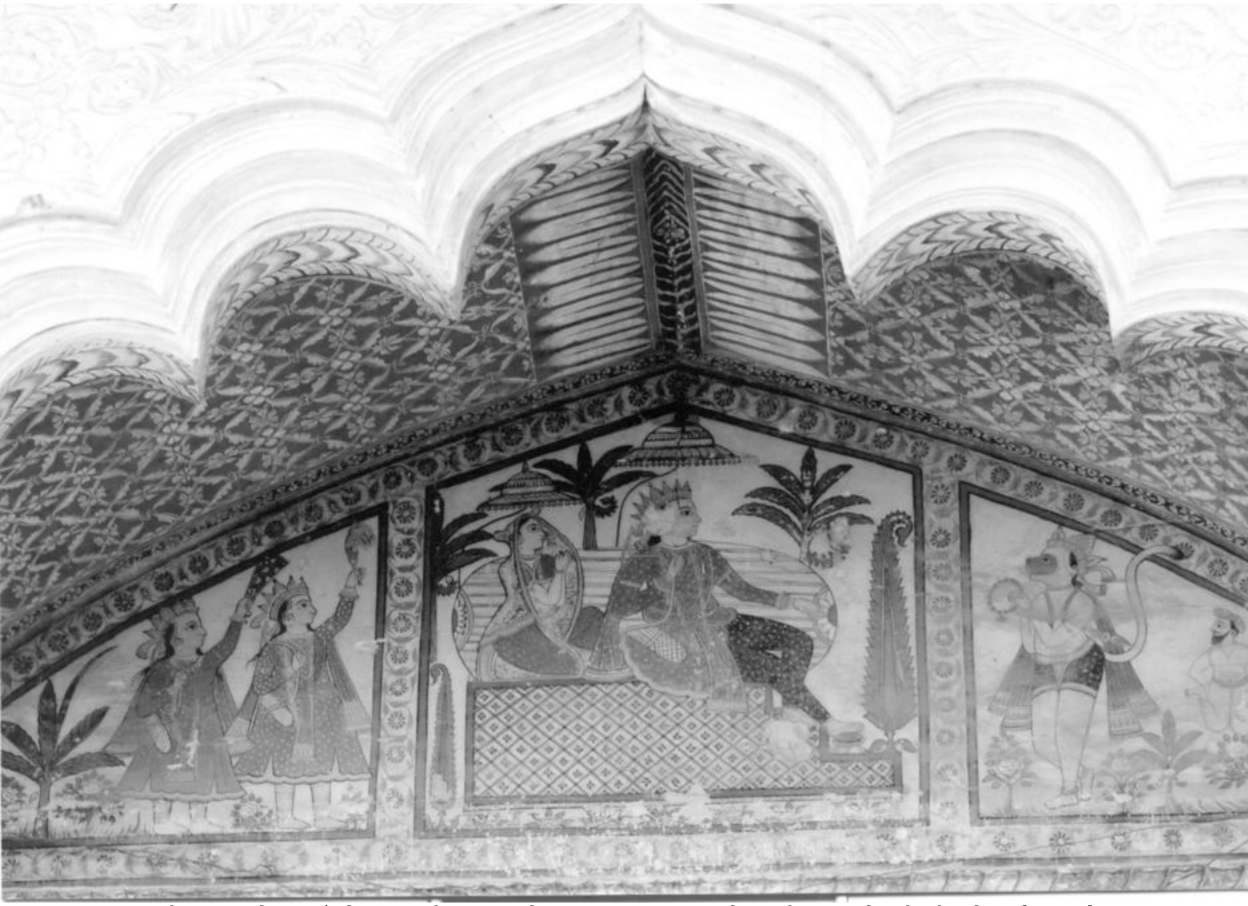

बड़ी सरकार विजय कुँवरि (महारानी महाराज विजय बहादुर) द्वारा स्थापित्य श्री अवध बिहारी जी मन्दिर के दरवाजे पर राम दरबार

छायांकन : यासीन खांन

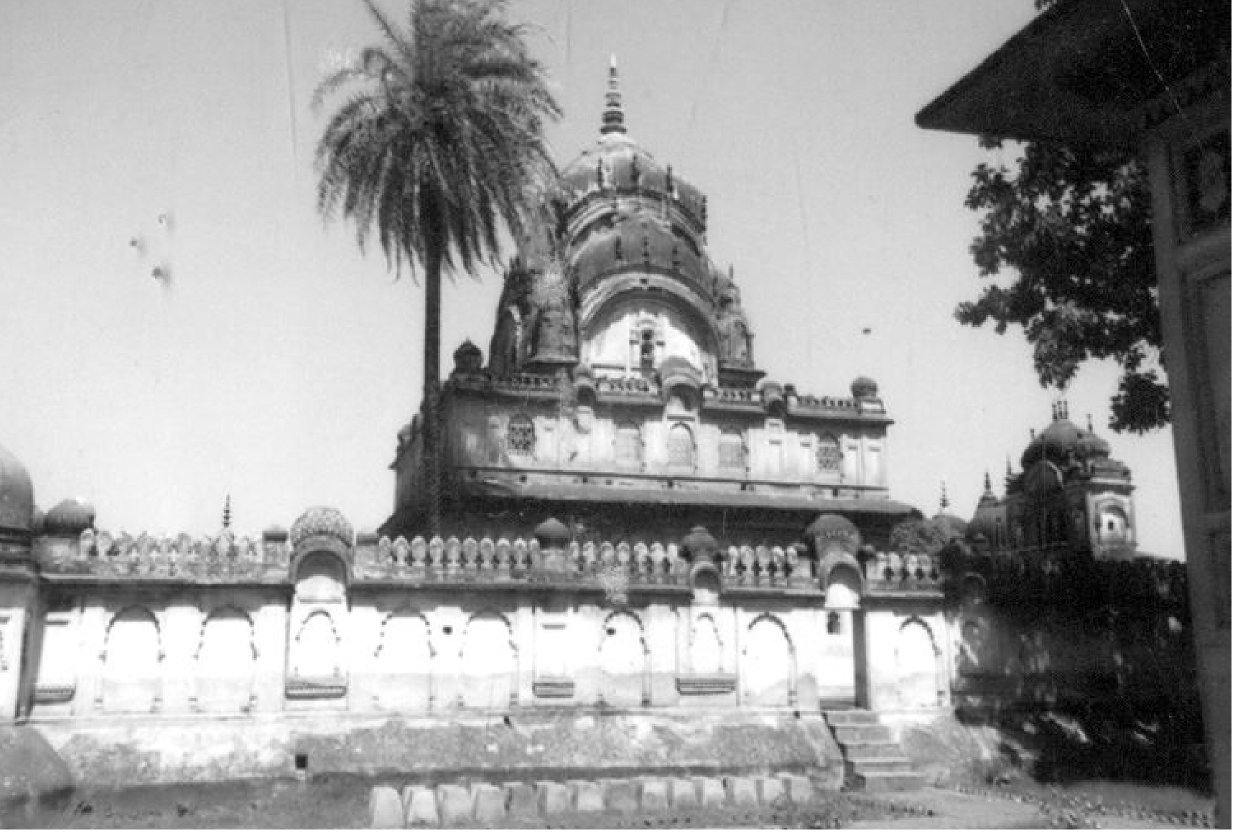

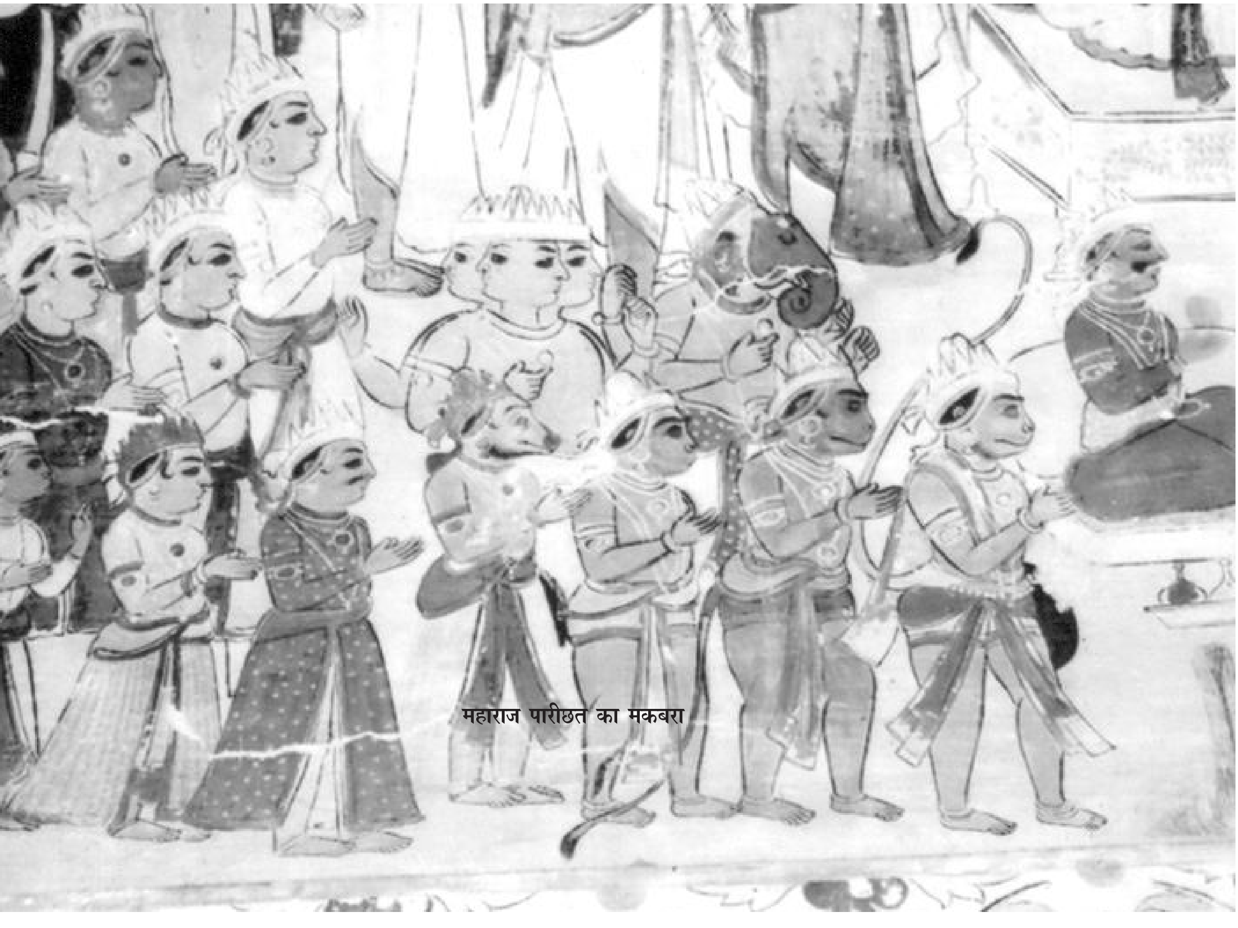

महाराज पारीछत का मकबरा

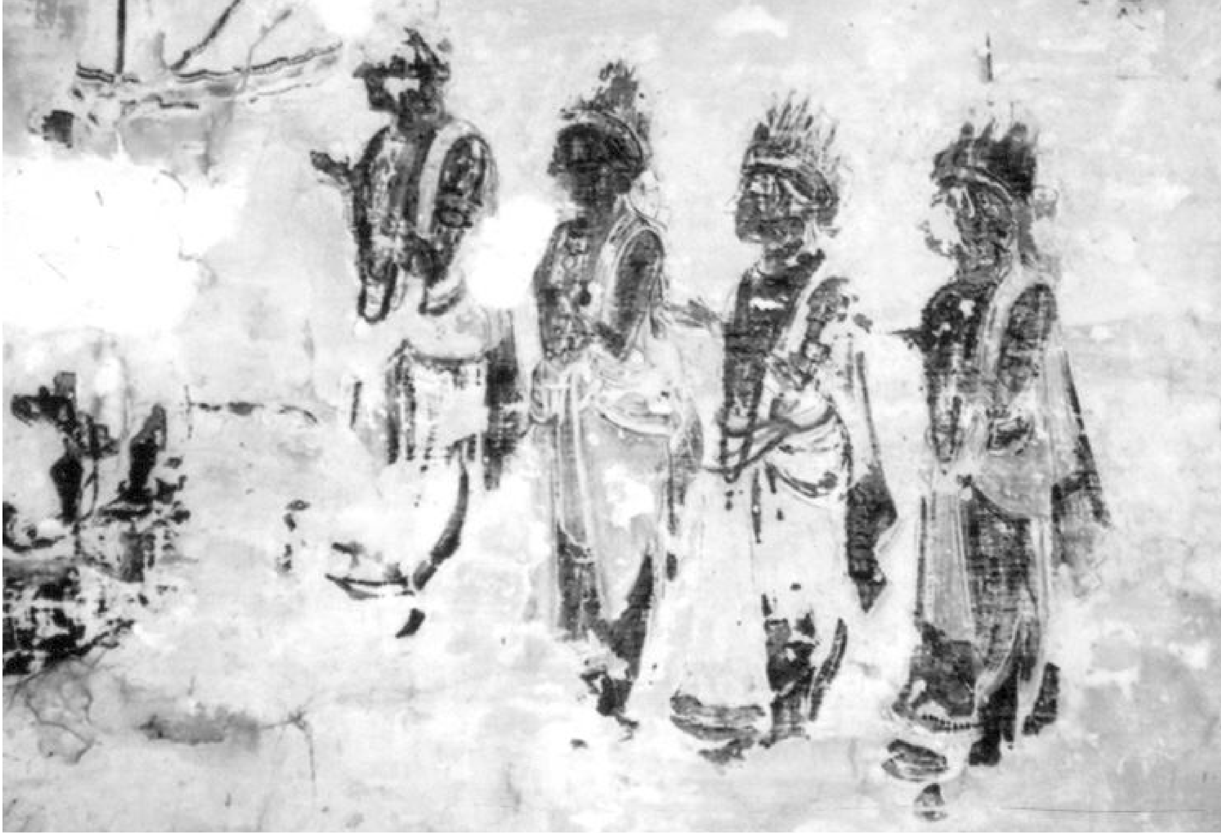

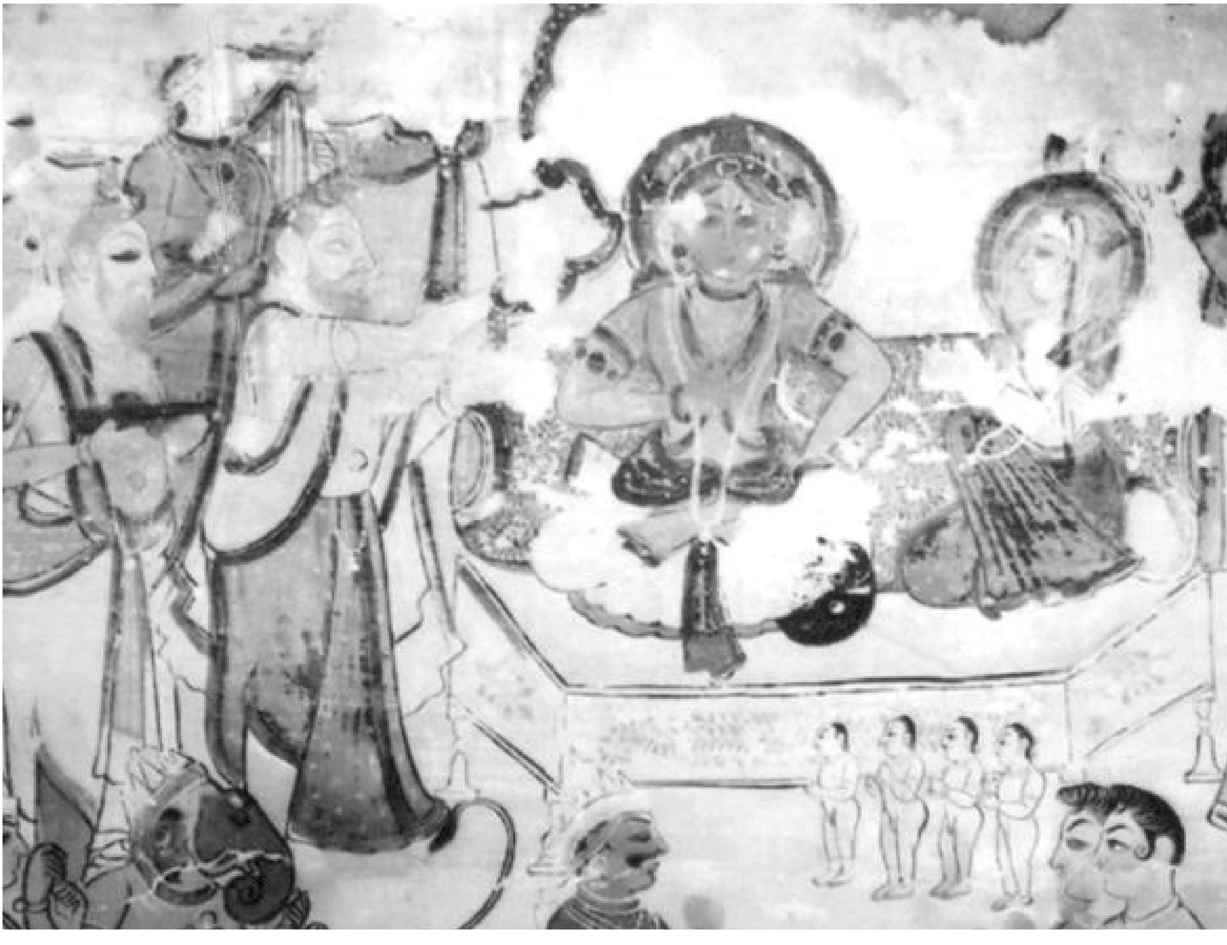

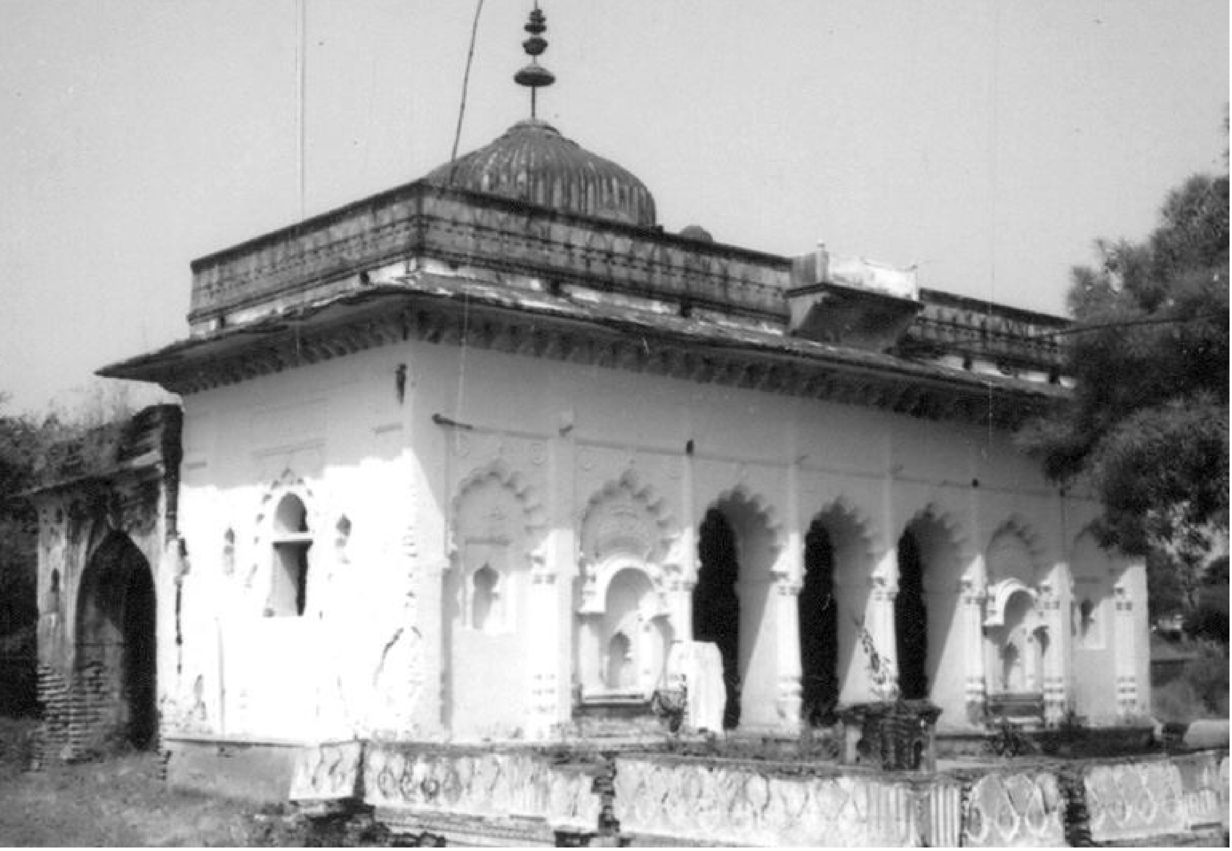

राजा का बाग

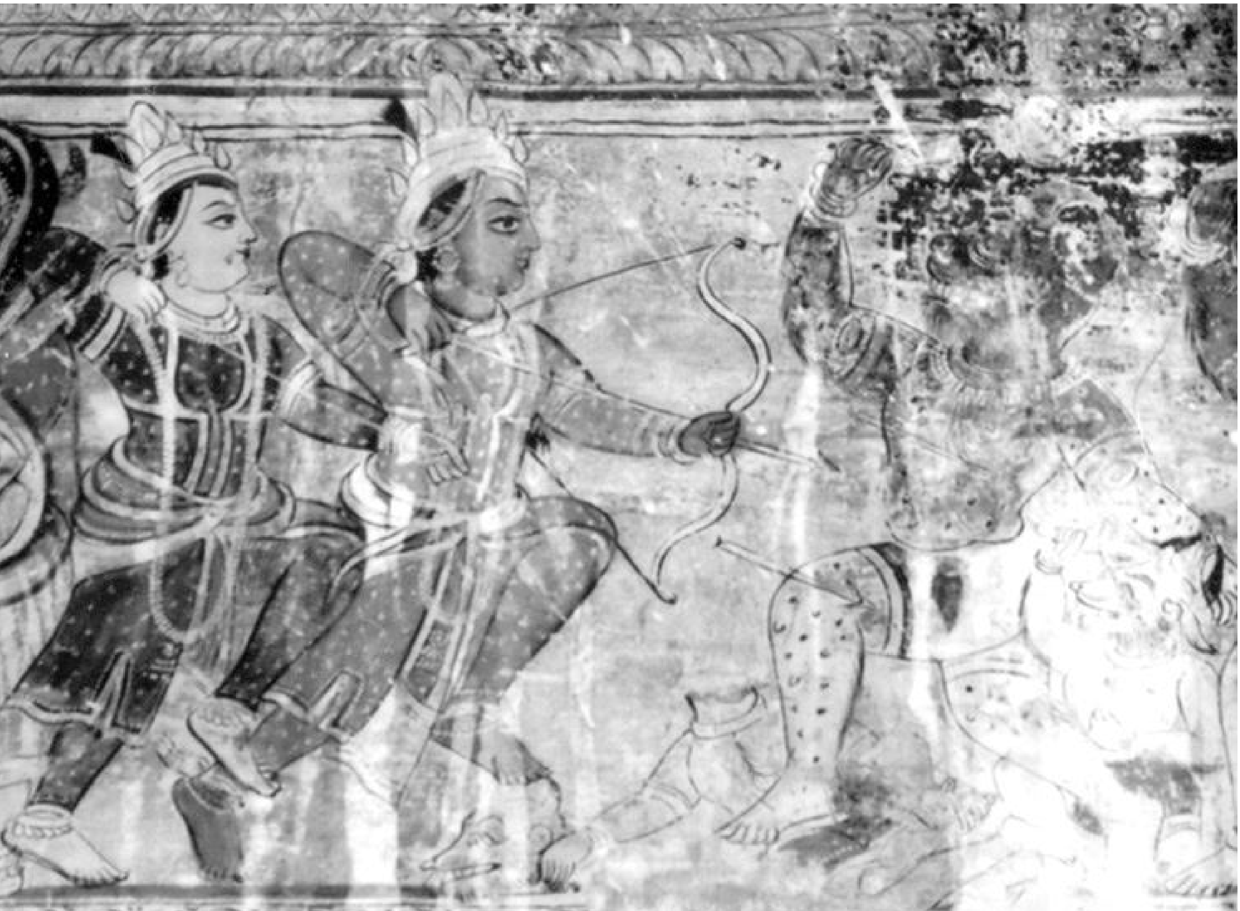

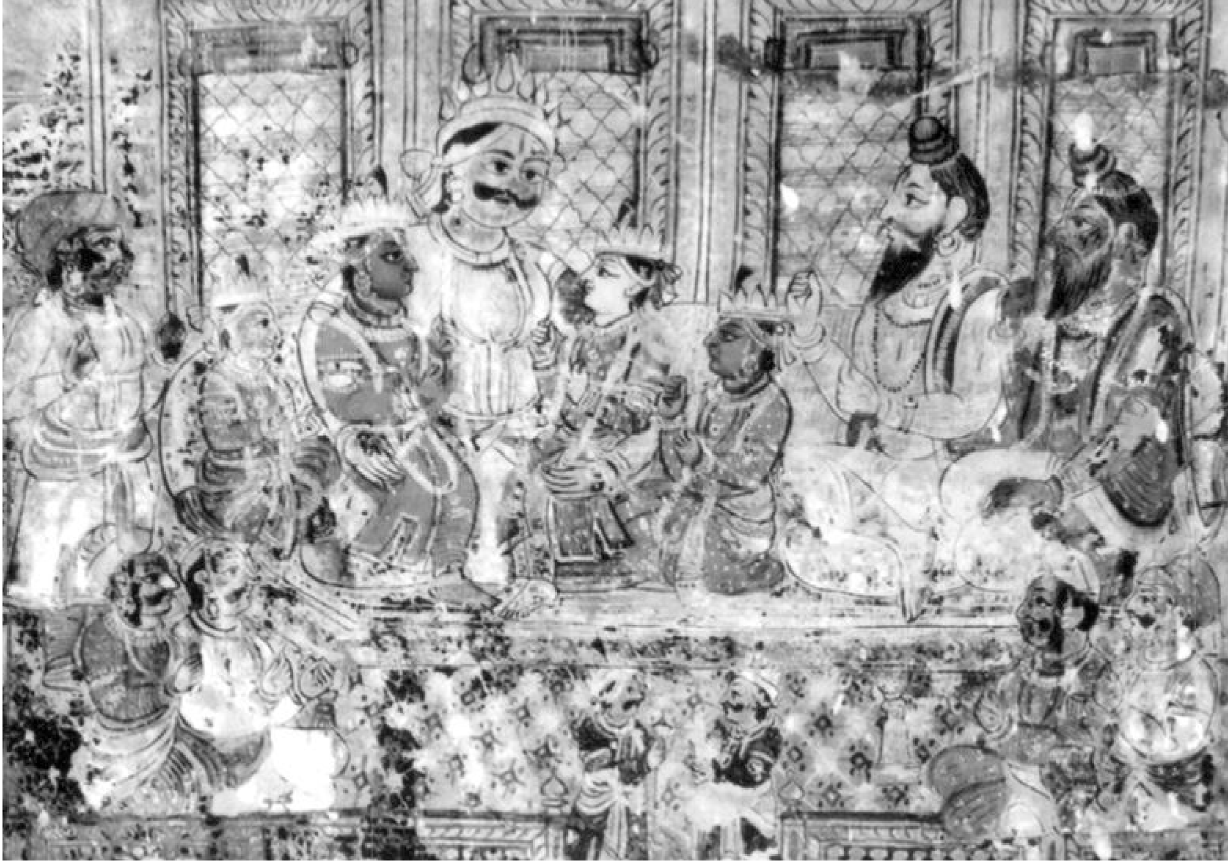

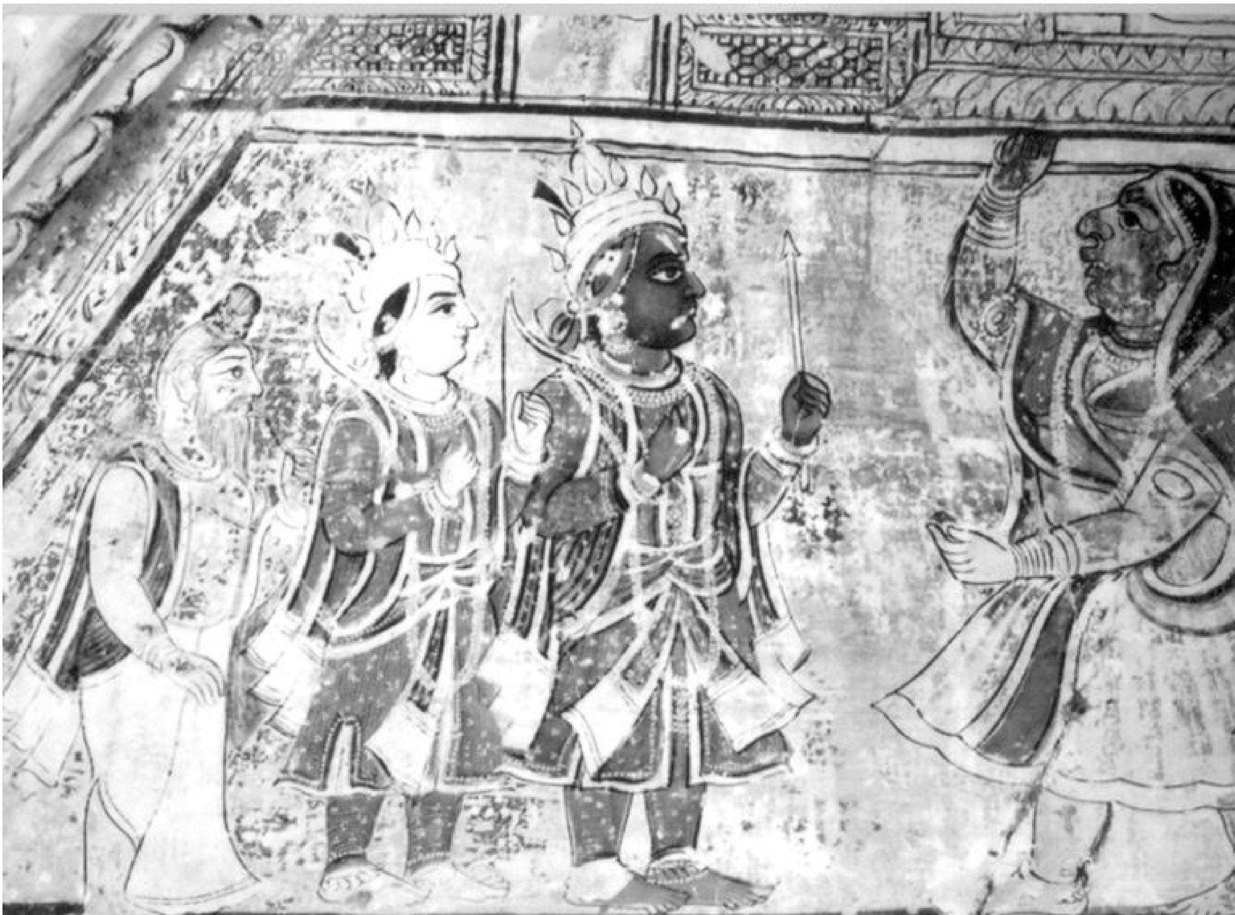

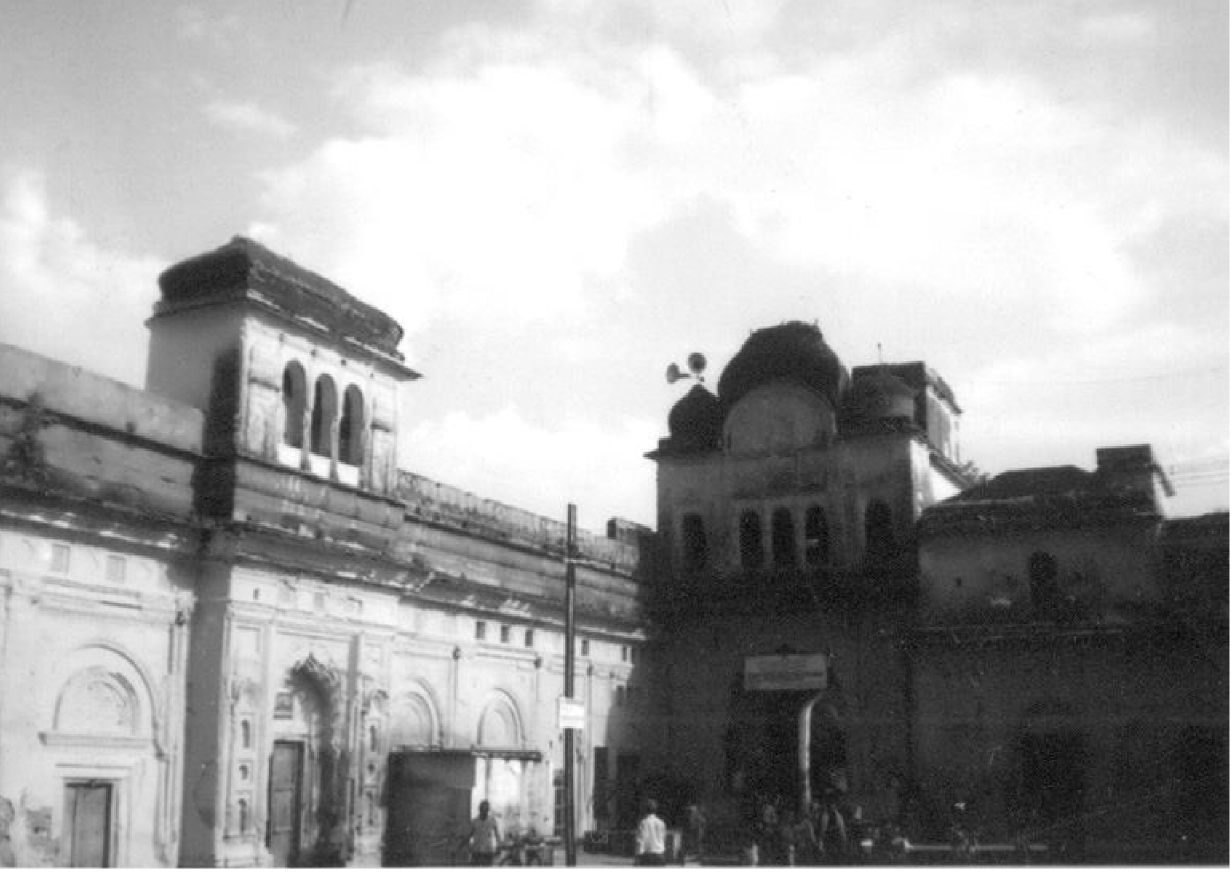

सूर्य मन्दिर उनाव

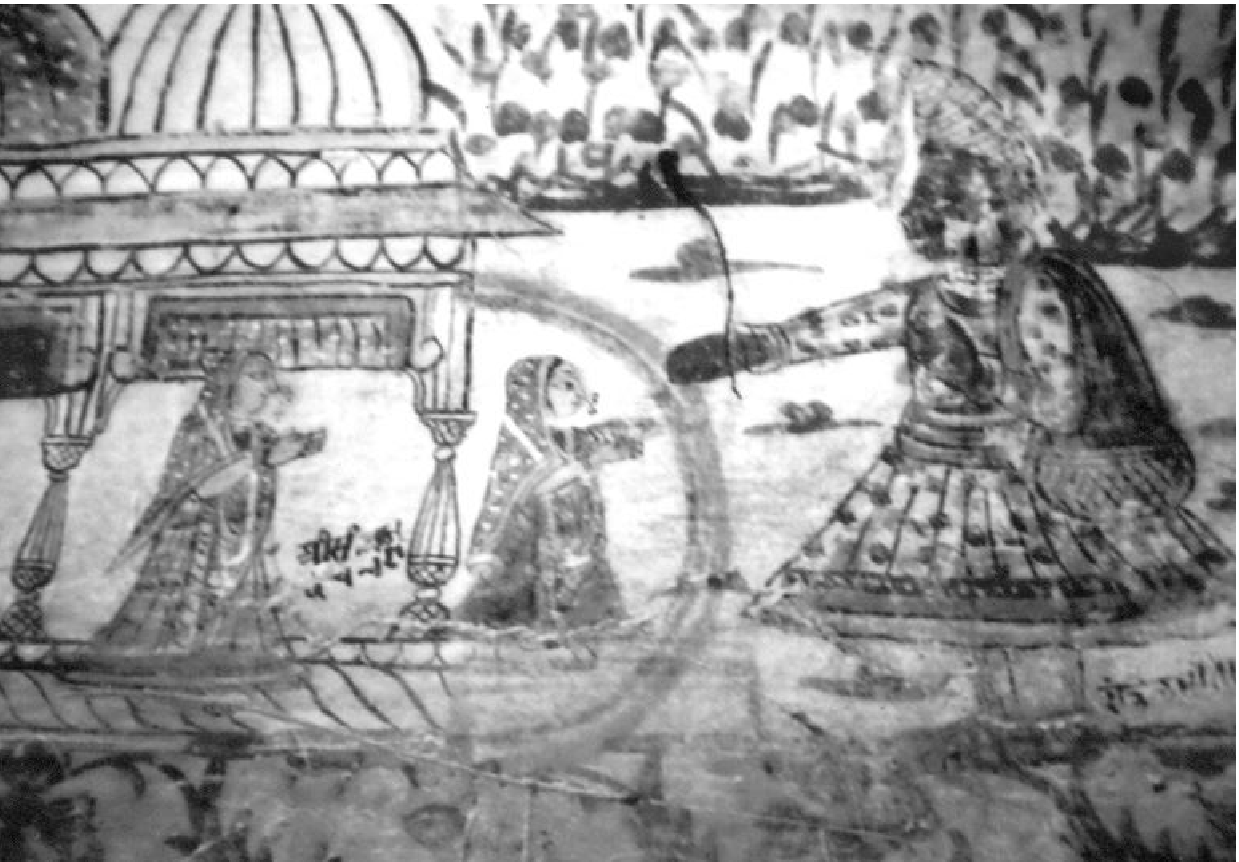

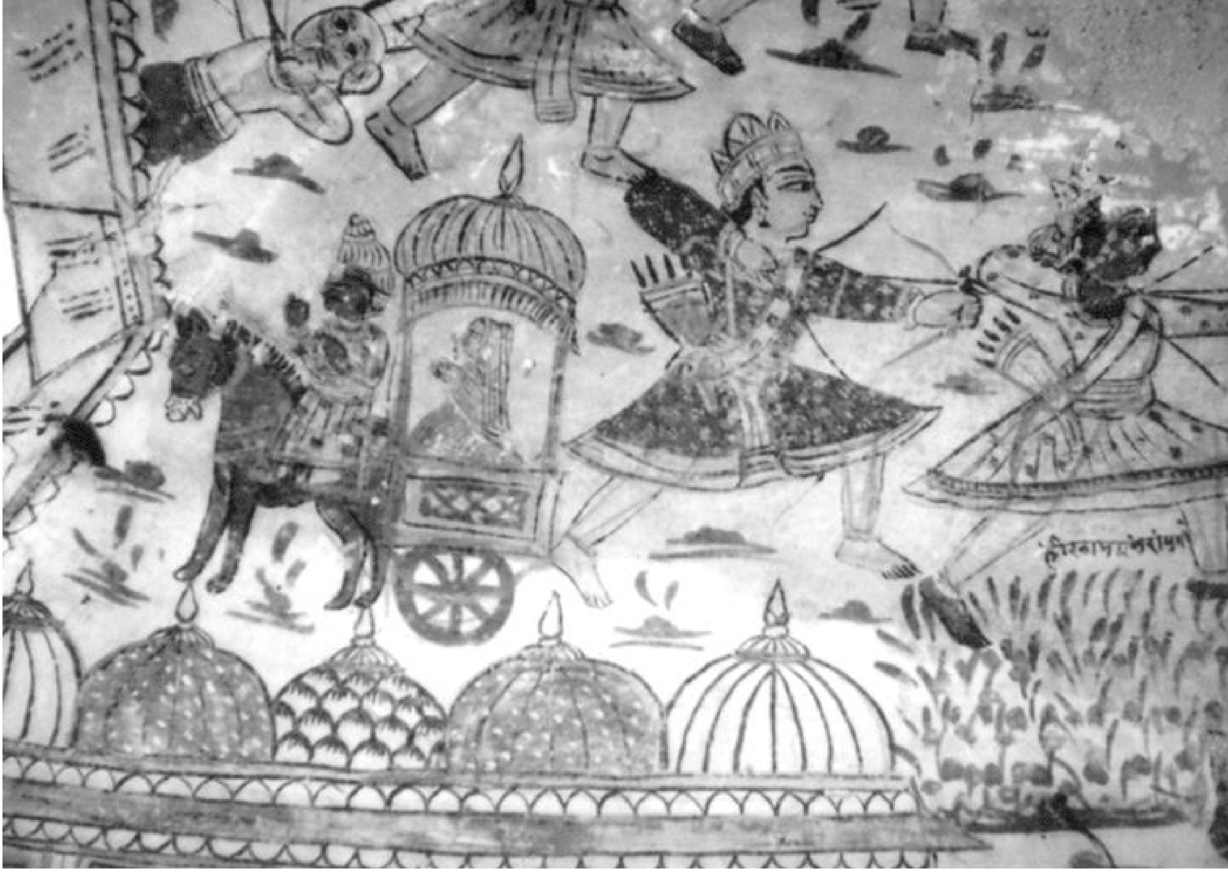

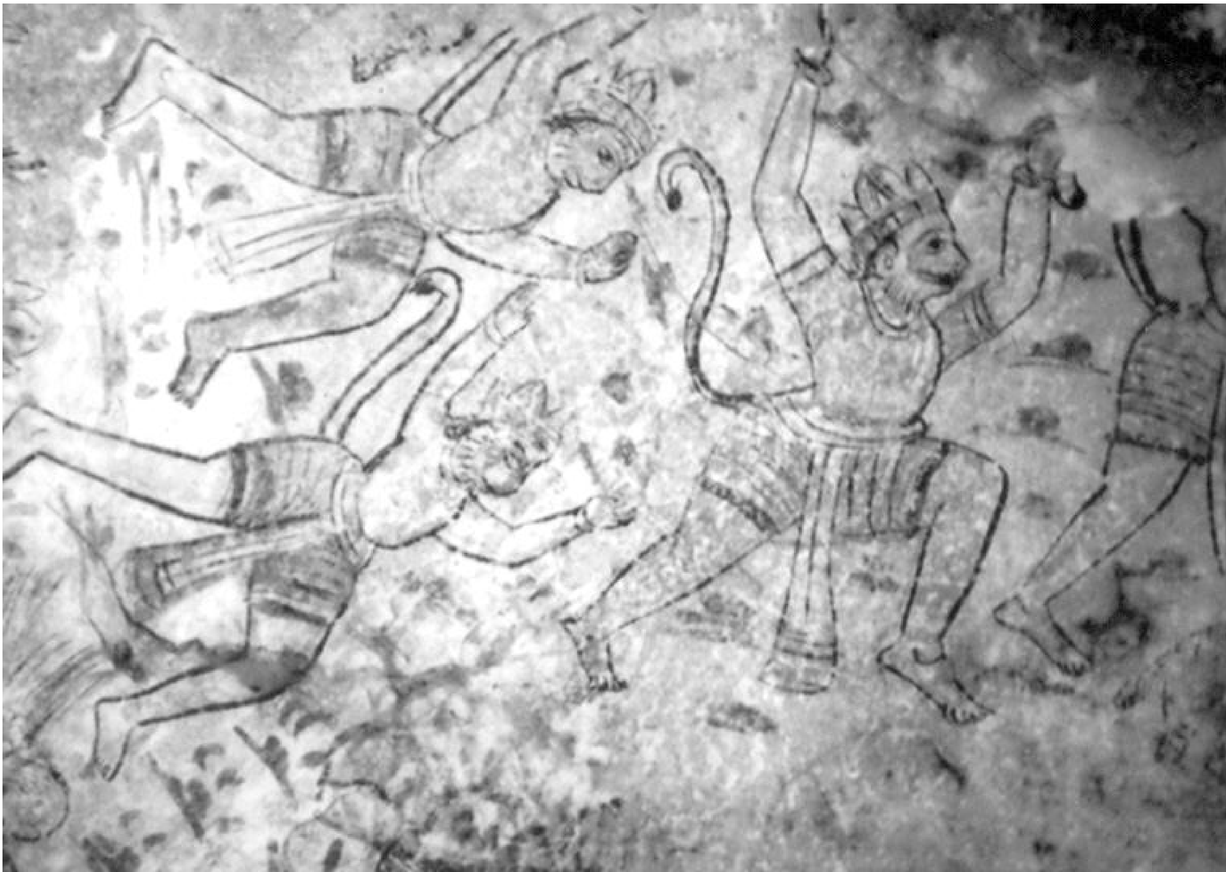

श्री राम की रम्य भूमि ओरछा और वहाँ की चतेउर में राम

–पं. गुणसागर 'सत्यार्थी'

"............चित्रकूट गिरि यहाँ, जहाँ प्रकृति-प्रभुताद्‍भुत
वनवासी श्री राम रहे सीता-लक्ष्मण युत;
हुआ जनकजा-स्नान-नीर से जो अति पावन,
जिसे लक्ष्य कर रचा गया धाराधर धावन;
यह प्रभु-पद रजमयी पुनीत प्रणम्य भूमि है;
रमें राम, बुन्देलखण्ड वह रम्य भूमि है।..........."[1]

ओरछा राज्य के अन्तिम राजकवि स्व. मुंशी अजमेरी जी, जिनका वास्तविक नाम श्री प्रेमबिहारी था, उनकी उपर्युक्त इन काव्य पंक्तियों से सिद्ध होता है कि बुन्देल धरा के कण-कण में श्री राम रमते हैं। फिर ओरछा सहित बुन्देलखण्ड के ऐतिहासिक राजप्रासाद, मन्दिरों और अन्य अनेक भवनों की दीवारों पर लिखी गयी 'चतेउर' (बुन्देलखण्ड में भित्ति-चित्रकारी को चतेउर कहा जाता है और यह चतेउर बनायी नहीं लिखी जाती है) भला श्री रामकथा के प्रसंगों से अछूती कैसे रह सकती थी?'

ओरछा का उल्लेख करते हुए मुंशी अजमेरी जी ने लिखा–

"................नगर बुन्देलों ने बसाया नया ओरछा
जिसका रहा था यशोगान सब ओर छा।
बेतवा के बाम तीर नगर मनोज्ञ वह,
था उन नुकीलों के निवास स्थान योग्य वह।
चारों ओर वन की सघनता न कम थी,
पथ पथरीले भूमि दुर्गम विषम थी।
बहती थी वेगवती बेत्रवती पूर्व ओर
कल-कल नाद से मचाती हुई मीठा शोर।
ऊपर था ओरछे का ऊँचा दुर्ग दर्शनीय
महल महान भव्य, मानो नभ स्पर्शनीय।...................."[2]

और वे नभ स्पर्शनीय महान और भव्य भवन आज भी अपनी दीवारों पर लिखी 'चतेउर' से श्री रामकथा गाकर सुना रहे हैं, जिसे सुनने के लिए देशी और विदेशी पर्यटकों की असीमित भीड़ उमड़ी चली आ रही है।

दीवारों पर लिखी इस 'चतेउर' को चित्रकला की भाषा में 'कलम' कहते हैं। यह 'कलम' नाम

सोलहवीं-सत्रहवीं शती में भित्तिचित्रों ने पाया। इसके पूर्व चित्रकला का इतिहास पाषाण युग से आरम्भ होता है, जो शैलाश्रयों, गुफाओं में आज भी देखने को मिलता है। गुप्तकाल में यह कला अपने चरमोत्कर्ष पर थी, जिसका साक्ष्य है अजन्ता की गुफाओं के भीतर अनूठी चित्रकारी। उसके बाद 16वीं-17वीं शती में राजप्रासादों और मन्दिर आदि अन्य भवनों की दीवारों पर जो चित्र बनाये गये वे प्रमुख रूप में दो शैलियों में थे—‘मुगल कलम’ और ‘राजपूत कलम’। मुगल कलम की विशेषता थी एकचश्मी मानव आकृति का सुन्दर चित्रण, जबकि राजपूत कलम में दोचश्मी, पौने दोचश्मी और डेढ़चश्मी मानव आकृतियाँ विशेष हैं। आभूषण और परिधान पर देश-काल का प्रभाव स्पष्ट दीखता है और इन्हीं देश-काल परिस्थितियों में इन दोनों कलमों का उत्तरोत्तर विकास हुआ तो पहाड़ पर जाकर वहाँ ‘काँगड़ा कलम’ नाम से विख्यात हुई तो बुन्देलखण्ड में आकर वह निश्चित ही ‘बुन्देली कलम’ के रूप में अपनी अलग पहचान बनाने में सफल हुई है। ‘बुन्देली कलम’ का जन्म महाराजा मधुकर शाह जू देव (1554-1592) के शासन काल में हुआ। ओरछा के संस्थापक महाराजा रुद्रप्रताप ने 1531 में ओरछा की नींव रखी थी और 1539 में मय किले के ओरछा आवाद हुआ व राजधानी बनी। जिसे उनके निधनोपरान्त उनके ज्येष्ठ पुत्र महाराजा भारतीचन्द्र (1531-1554) ने आकार दिया और उनके भ्राता महाराज मधुकर शाह जू देव ने उन भव्य भवनों को बुन्देली कलम की नयी चतेउर से शृंगारित किया।[3]

महाराजा मधुकर शाह जू देव प्रथम जैसा धर्मध्रुव नरेश भारतीय इतिहास में दूसरा नहीं है। जिन्होंने शक्तिशाली सम्राट अकबर के शाही हुक्म तिलक न लगाने को चुनौती के रूप में स्वीकार कर तिलक लगाया था।[4] राजकवि मुंशी अजमेरी जी के शब्दों में—महाराज मधुकर शाह जू का सम्राट को दिया गया जबाब इस प्रकार है—

‘........बागी, अनुरागी जो हूँ सामने हूँ चाह से,
चाहता नहीं हूँ मैं बिगाड़ बादशाह से।
चाहें शाह शीष, अभी देने को तैयार हूँ
परवाह नहीं मुझे प्राणों की, जुझार हूँ।
बिना दगा भाल हाल नजर करूँगा मैं
धर्म अपने की आन बान पर मरूँगा मैं।
धर्म मुझे प्राणों से पचासों गुना प्यारा है;
धर्म ही लोक-परलोक का सहारा है।
धर्म दिव्य दीपक है मोक्ष की भी राह का;
धर्म से नहीं है बड़ा हुक्म बादशाह का।
जीते जी कदापि धर्म से न मुँह मोड़ूँगा
डर से किसी के कभी धर्म को न छोड़ूँगा।
तिलक लगाना धर्म मेरा है सदा ही से
धर्म छोड़ सकता नहीं मैं हुक्मशाही से।...................”5

ऐसे धर्मध्रुव नरेश के द्वारा ओरछा के राजमहल, रानीमहल (वर्तमान में श्री राम राजा मन्दिर) इत्यादि भवनों में जो चतेउर लिखवायी थी, वह सगुण उपासना की दो धाराओं में समान रूप में प्रवाहित हुई है। कहा जाता है कि स्वयं महाराज मधुकर शाह जू देव श्री कृष्णोपासक थे और उनकी महारानी गणेश कुँवर जू श्री राम भक्त थीं, जो उस मुगल काल में निर्भीक होकर श्री राम की प्रतिमा

अयोध्या से ओरछा लायी थीं। सम्राट अकबर का हुक्म तोड़कर महाराज का तिलक लगाकर सम्राट से पंगा लेना और मुगलों के अधीनस्थ क्षेत्र से सरेआम श्रीराम की प्रतिमा महारानी जू द्वारा ओरछा में ले आना, ये दोनों ही घटनाएँ स्वयं में हैरतअंगेज थीं। इसीलिए ओरछा में बुन्देली कलम के चित्र महाराज की कृष्ण-भक्ति और महारानी की राम-भक्ति को समर्पित हैं।

राजमहल में दशावतार नामक चित्र में श्री राम के दर्शन विशेष हैं—

'मत्स्रयः कूर्मः वराहश्च वामनश्च जनार्दनः।
रामो रामश्च कृष्णश्च बुद्धः कल्किच रित्यपि।'

दूसरा चित्र राम-परशुराम उल्लेखनीय है। आज भी बुन्देलखण्ड में जो रामलीला खेली जाती है, उसमें परशुराम संवाद लीला अधिक लोकप्रिय है। सारी रात परशुराम-संवाद दर्शक दत्तचित्त होकर देखते हैं। उसी रामलीला परम्परा से प्रभावित बुन्देली कलम का यह चित्र दर्शनीय है। इसमें परशुराम को परशु के साथ एवं श्री राम को धनुष की प्रत्यंचा खींचते हुए चित्रित किया गया है।

राजमहल में श्री राम दरबार का चित्र भी विशेष है। श्री राम जी माता जानकी सहित राज सिंहासन पर विराजमान हैं। श्री लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न को उनके पीछे खड़ा हुआ चित्रित किया गया है। मजे की बात यह है कि श्रीराम को श्याम वर्ण चित्रित किया गया है, शेष तीनों भाइयों को गौरवर्ण, जबकि श्री भरत जी भी श्रीराम की भाँति श्याम वर्ण ही थे। जहाँ तक वर्ण का प्रश्न है तो श्री राम राजा मन्दिर में जो प्रतिमाएँ गर्भ गृह में हैं, उनमें श्री लक्ष्मण जी भी श्याम वर्ण के ही हैं, जबकि वे गौर वर्ण होते हैं। अतः ओरछा में वर्णों का अनूठा ही दृश्य है। जो भी हो, इस चित्र में श्री राम के सम्मुख श्री हनुमान जी एवं जामवन्त जी खड़े हैं। चित्र के ऊपर आलंकारिक बेलबूटे विशेष दर्शनीय हैं।

रख-रखाव के अभाव में इस राजमहल के ज्यादातर चित्र धूमिल और अस्पष्ट-से हो गये हैं। इन चित्रों में प्रायः प्राकृतिक रंगों का प्रयोग किया गया है। इनमें लाल, नारंगी, सुनहरा, पीला, हरा, काला और कत्थई रंग प्रमुख हैं। चित्र बनाने के पहले धरातल को चूने के मसाले से सतह तैयार करके उस पर शंख एवं कौड़ी का चूर्ण विशेष मसाले के सम्मिश्रण के साथ प्रयोग कर बनाया गया है, धरातल की अच्छी तरह से घुटाई की गयी है, जो इतना चिकना है मानो वह संगमरमर का धरातल हो। रंगों को भी प्राकृतिक साधनों से घोंट कर तैयार किया गया है। जैसे नारियल की नारेली में शीशम की लकड़ी से घुटाई करना आदि। इससे चित्र के रंग पानी में भी घुलते नहीं हैं। राजमहल के ज्यादातर चित्र एकचश्मी है।

महाराजा मधुकर शाह जू देव के पश्चात् उनके युवराज श्री रामशाह जू ओरछा की गद्दी पर आये (1592-1605)। उनके पश्चात् उनके भ्राता वीरसिंह जू देव प्रथम (1605-1627) ओरछेश हुए, जिन्होंने अपने पिता की भाँति बुन्देली स्थापत्य भवन-निर्माण और बुन्देली कलम के विकास की दिशा में पर्याप्त कार्य किये। तान्त्रिक साधना के प्रतीक श्री लक्ष्मी मन्दिर का निर्माण तो अनूठा ही है, जो ओरछा में श्री राम राजा मन्दिर के पीछे की ओर पश्चिम दिशा में लगभग एक किलोमीटर की दूरी पर एक छोटी-सी पहाड़ी पर दूर से ही दिखाई देता है। यह मन्दिर चूँकि तान्त्रिक साधना की दृष्टि से निर्मित किया गया था इसलिए इसका स्थापत्य अन्य हिन्दू मन्दिरों से पूर्णतः भिन्न है। दूर से देखने पर यह त्रिभुजाकार समझ में आता है जबकि वह चौकोर है और प्रवेश द्वार पूर्वी कोने पर इस प्रकार बनाया गया है कि वह सम्पूर्ण मन्दिर योनि पीठ पर निर्मित हो गया। मध्य में तीन मंजिला शिखर अधिक लम्बा ऐसा प्रतीत होता है मानो योनि में महालिंग स्थित किया गया है। छत बुन्देली स्थापत्य की परिचायक पालकी जैसी है। गर्भगृह के चारों ओर परिक्रमा के लिए जो दहलानें

हैं, वे आधुनिक आर्ट गैलरी से होड़ ले रही हैं। इन्हीं दहलानों की दीवारों पर चतेउर लिखी गयी है। यह चतेउर 17वीं शती से लेकर 19वीं शतीं तक देशकाल के अनुसार समय-समय पर लिखी गयी है। एक दहलान इसका साक्ष्य है कि उसमें 1857 की क्रान्ति से सम्बन्धित झाँसी की रानी और फिरंगियों के युद्ध के दृश्य लिखे गये हैं। निश्चय ही वे वीरसिंह जू देव प्रथम के काल के बहुत बाद में लिखे गये हैं। वीरसिंह जू देव के काल की चतेउर में भी उनके पिता की भाँति सगुण भक्ति के दोनों स्वरूप हैं—श्री रामकथा से सम्बन्धित और श्री कृष्ण लीला के भी।

सामने की ओर पूरी दीवार की चतेउर में रामायण का पूरा बालकाण्ड दर्शनीय है। कहीं बाल श्री राम माता की गोद में हैं तो कहीं पालने में झूल रहे हैं। नीचे भित्ति पर घुटुरन खेल रहे हैं तो कहीं बाल स्वरूप में खड़े हुए भी हैं। श्री राम को अधोवस्त्र पहनाये गये हैं। कमर में करधनी, पैरों में पायल और हाथों में कंघन तो देखते ही बनते हैं। इस मन्दिर की चतेउर की यही विशेषता है कि वस्त्राभूषण बुन्देलखण्ड के पारम्परिक दर्शाये गये हैं। माता कौसल्या जी का लहँगा जिस पर पारदर्शी ओढ़नी आँगिया आदि सभी बुन्देली शैली में ही हैं। श्रीराम तथा कौसल्या जी की भौंहें धनुषाकार आँखें बादाम के आकार में दोचश्मी, डेढ़चश्मी हैं।

लक्ष्मी मन्दिर की दहलानों में श्री रामकथा की छवियाँ भरी पड़ी हैं। कहीं ताड़का वध करते हुए श्री राम हैं और ताड़का काले वस्त्रों में। उसके खुले बाल, नाखून और दाँत बड़े तथा भयावह हैं तथा श्रीराम पीताम्बर धारण किये ताड़का के सम्मुख सौम्य मुद्रा में भूमि पर ताड़का को गिराते हुए हैं। श्री राम के आभूषण सुनहरे रंग के और गले में सफेद और लाल रंग की मालाएँ हैं। इन चित्रों में दीवार का रंग गेरुआ है।

इसी प्रकार मारीच वध का चित्र है जिसमें श्री राम मारीच के पीछे दौड़ते हुए चित्रित हैं। धनुष बाण सहित दौड़ने की मुद्रा में श्रीराम का डेढ़चश्मी चेहरा अनुपम है। वन का दृश्य विशेष मोहक है।

धनुष यज्ञ का दृश्य हो या श्रीराम-विवाह का या फिर चारों भ्राताओं सहित राम दरबार का दृश्य, इन सभी चित्रों में सहज स्वाभाविक अभिव्यक्ति रंगों-रेखाओं से ऐसी बन पड़ी है कि चतेउर सजीव होकर हमारे समक्ष प्रस्तुत हुई है। धनुष यज्ञ का चित्र तो बहुत विशाल आकार में है। इस चित्र के दाहिनी ओर श्री राम-लक्ष्मण एक ऊँचे आसन पर बैठे हैं। इस चित्र के बायीं ओर देश-देश से धनुष यज्ञ में पधारे भूप चित्रित हैं। सीताजी अपनी सखियों के साथ हैं। रंगबिरंगे परिधान बुन्देलखण्डी वस्त्राभूषण धनुष यज्ञ की शोभा को बहुगुणित करते हैं।

धनुष यज्ञ वाले चित्र के आगे इसी पैनल पर राम-विवाह का चित्र है। श्री राम एक चौकी पर वरमाला हाथ में लिये खड़े हैं। उनके सामने सीताजी भी वरमाला लिये हुए हैं। इस चित्र में क्रम से विवाह के सभी नेग-दस्तूरों के दृश्य हैं, जो बुन्देली संस्कृति से ओतप्रोत हैं। वरमाला, वेदी पर बैठे, फेरे लेते हुए और अन्त में सीता जी डोली में विदा होते हुए दर्शायी गयी हैं। सभी वस्त्राभूषण बुन्देली शैली के हैं। चेहरा कहीं डेढ़चश्मी तो कहीं पौने दोचश्मी। विवाह का ठाठ-बाट देखते ही बनता है।

राम-रावण के युद्ध सम्बन्धी दो चित्र इस मन्दिर में हैं। एक तो बड़े पैनल पर है जिसके दो भाग हैं—पहला भाग श्री राम दल का है और दूसरा रावण दल का। रामदल में हनुमान, लक्ष्मण तथा वानर सेना है। राम-लक्ष्मण धनुष बाण लिये हुए धोती पहने, कमरबन्ध, बाजूबन्द एवं कमर तक खुले बाल, गले में माला, तरकश में बाण। हनुमान व सभी वानर सेना हाथों में छोटे-बड़े पत्थर व भाला आदि अस्त्र-शस्त्र लिये हुए हैं। दूसरी ओर दूसरे भाग में रावण सेना काले वस्त्रों में अपने अस्त्र-शस्त्र के साथ है। यह चित्र बड़े आकार में है। राम-रावण युद्ध का दूसरा चित्र मन्दिर के बायीं ओर वाली

दहलान में है। इस चित्र के चारों ओर फूल-पत्तियों के अलंकरण से सुन्दर बार्डर बनाया गया है। चित्र में राम-रावण परस्पर युद्ध करते हुए दर्शाये गये हैं। श्रीराम को घोड़े पर बैठकर युद्ध करते चित्रित किया गया है, जबकि रावण को रथ पर। रामदल दाहिनी ओर एवं रावण सेना बायीं ओर है। युद्ध-स्थल पर घोड़े भी हैं। यह चित्र अत्यन्त स्वाभाविक रूप में बुन्देली कलम का परिचायक है।

रामायण में भरत और हनुमान प्रसंग आया है, जिसे लक्ष्मी मन्दिर में बड़े ही सलीके से चित्रित किया गया है। चित्र के बायीं ओर आधे भाग में भरत के बाण से घायल होकर पर्वत सहित हनुमान आकाश से धरती पर आ गिरे और भरत जी यथार्थ जानने के बाद हनुमान की पीठ सहलाते हुए खड़े हैं।

'तौ कपि होउ बिगत श्रम सूला, जौं मो पर रघुपति अनुकूला।
सुनत बचन उठि बैठ कपीसा, कहि जय जयति कोसलाधीसा।।[6]

तो दायीं ओर के दूसरे भाग में भरत पूरी ताकत से बाण पर हनुमान को बैठाकर आकाश मार्ग से लंका की ओर भेजते हुए दिखाई देते हैं।

'तात गहरु होइहि तोहि जाता, काज नसाइहि होत प्रभाता।
चढ़ मम सायक सैल समेता, पठवहुँ तोहि जहँ कृपा निकेता।।''[7]

इस चित्र में कूँची का कमाल देखते ही बनता है। रामकथा का यह प्रसंग जीवन्त हो गया है।

एक चित्र में अहिरावण, जो काले वस्त्रों में दर्शाया गया है, श्री राम-लक्ष्मण को अपने कन्धों पर बैठा कर भागा चला जा रहा है। अहिरावण के दाढ़ी-मूँछ है तो श्री राम-लक्ष्मण धोती पहने जनेऊ धारण किये गले में माला, कन्धे पर उत्तरीय और कमर तक लम्बे केश, बाहुओं में बाजूबन्द, हाथों में कंगन, आँखें नुकीली, भौहें धनुषाकार हैं। इस चित्र में चेहरे एकचश्मी व दोचश्मी हैं।

एक चित्र में चारों भाइयों का दरबार दर्शनीय है। श्री राम-जानकी एक ऊँचे आसन पर बिराजे हैं, दायीं ओर लक्ष्मण तथा बायीं ओर भरत-शत्रुघ्न हैं। नीचे चरणों में नील, नल, अंगद और हनुमान हैं। श्रीराम-जानकी राजसी वेशभूषा में हैं, दोनों के सिर पर मुकुट आभूषण, धोती, उत्तरीय एवं जानकी जी साड़ी-चोली में, जिसके दोनों किनारों पर सुनहरा बार्डर है। शेष तीनों भ्राता भी उसी प्रकार के वस्त्राभूषणों में हैं। इस चित्र में चेहरे एकचश्मी व दोचश्मी हैं। आँखें नुकीली व गोल हैं। हनुमान आदि के चेहरे सामने दोचश्मी/ओरछा दुर्ग परिसर के बाहर उत्तर दिशा में तीन मन्दिरों का समूह है। इन मन्दिरों के अतिरिक्त तीन छतरियाँ भी हैं। पश्चिमाभिमुख ये सभी मन्दिर चहारदीवारी के अन्दर स्थित हैं। मन्दिर गर्भगृह, अन्तराल, मण्डपयुक्त हैं परन्तु इनमें मूर्तियाँ नहीं हैं। पंचमुखी महादेव मन्दिर के नाम से जाने जाने वाले ये मन्दिर भी चतेउर का आकर्षण लिये हुए हैं। श्री रामकथा से सम्बन्धित एक चित्र यहाँ पर भी विशेष उल्लेखनीय है—

14 वर्ष वनवास व्यतीत करते हुए लंका विजय करके जब श्रीराम अयोध्या वापस भ्राता लक्ष्मण एवं भार्या सीता सहित आये उसके बाद उनका राज्याभिषेक व राजतिलक गुरु वसिष्ठ के द्वारा सम्पन्न हुआ। उसी अवसर का मनोहारी दृश्य इस चित्र में विशेष बन पड़ा है। श्री राम-जानकी के साथ लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न के अलावा हनुमान, जामवन्त, अंगद भी इस चित्र में दर्शाये गये हैं। गुरु वसिष्ठ तिलक का थाल अपने हाथों में लिए हुए दर्शाये गये हैं।

निष्कर्ष यह कि बुन्देलखण्ड की सबसे बड़ी रियासत ओरछा के खँडहर आज बता रहे हैं कि इमारत बेशक बुलन्द थी। यहाँ के भवन, मन्दिर अपनी विशिष्ट चतेउर में पूरी रामकथा को सहेजे हुए हैं। श्री लक्ष्मी मन्दिर में चित्रित श्रीराम की बाल-लीलाओं के चित्रण से शुरू होकर पंचमुखी

महादेव मन्दिर के श्री राम राज्याभिषेक के चित्रण तक सम्पूर्ण रामायण यही बुन्देली माटी की सोंधी सुगन्धयुक्त रंग-रेखाओं में सहज स्वाभाविक रूप में मुखरित हुई है। अन्तिम राजकवि की बुन्देलखण्ड शीर्षक की वे पक्तियाँ जो इस आलेख के प्रारम्भ में उद्धृत की गयी हैं, उन पंक्तियों से आगे उनके पौत्र होने के नाते मैं कहना चाहता हूँ कि–

‘यहाँ ओरछा राम अयोध्या से चल आये,
बुन्देली कण-कण में आकर सहज समाये;
मन्दिर-महल भीतियों पर चित्रांकन अनुपम,
रामकथा अनुगुंजित इन चित्रों में हरदम;
राजा हैं श्रीराम जहाँ वह पूज्य भूमि है;
रजधानी यह रामलला की पुण्य भूमि है।।”

सन्दर्भ

1. काव्य पंक्तियाँ–प्रेमपयोनिधि ग्रन्थ, प्रकाशक–प्रेम प्रकाशन, सन्त सदन, चिरगाँव, सम्पादक–पं. बनारसीदास चतुर्वेदी, पृष्ठ सं. 112 से उद्धृत
2. काव्य पंक्तियाँ–प्रेम पराग ग्रन्थ, प्रकाशक–प्रेम प्रकाशन, सन्त सदन, चिरगाँव, सम्पादक–पं. विद्या सागर शर्मा, पृष्ठ सं. 1 एवं 17 से उद्धृत
3. ऐतिहासिक सन्दर्भ–बुन्देलखण्ड का बृहद इतिहास ग्रन्थ–ले. डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी, प्रकाशक–समय प्रकाशन, दिल्ली, से लिये गये।
4. महक बुन्देली माटी की–गौरव ग्रन्थ में प्रकाशित, इतिहासकार डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी का आलेख–‘पूर्वराज्य ओरछा का इतिहास’, पृष्ठ सं. 459, प्रकाशक–स्मृतिशेष दादा मगनलाल गोइल, गौरव ग्रन्थ प्रकाशन समिति, टीकमगढ़, म.प्र.
5. चित्रकारी का अध्ययन–‘ओरछा के भित्ति चित्र’ ग्रन्थ द्वितीय संस्करण, सम्पादक–आई. एम. चहल. आयुक्त, प्रकाशक–पुरातत्व अभिलेखागार एवं संग्रहालय, म.प्र., भोपाल

6-7. श्रीराम चरित मानस लंका काण्ड चौपाई क्र. 58/4 एवं 59/4

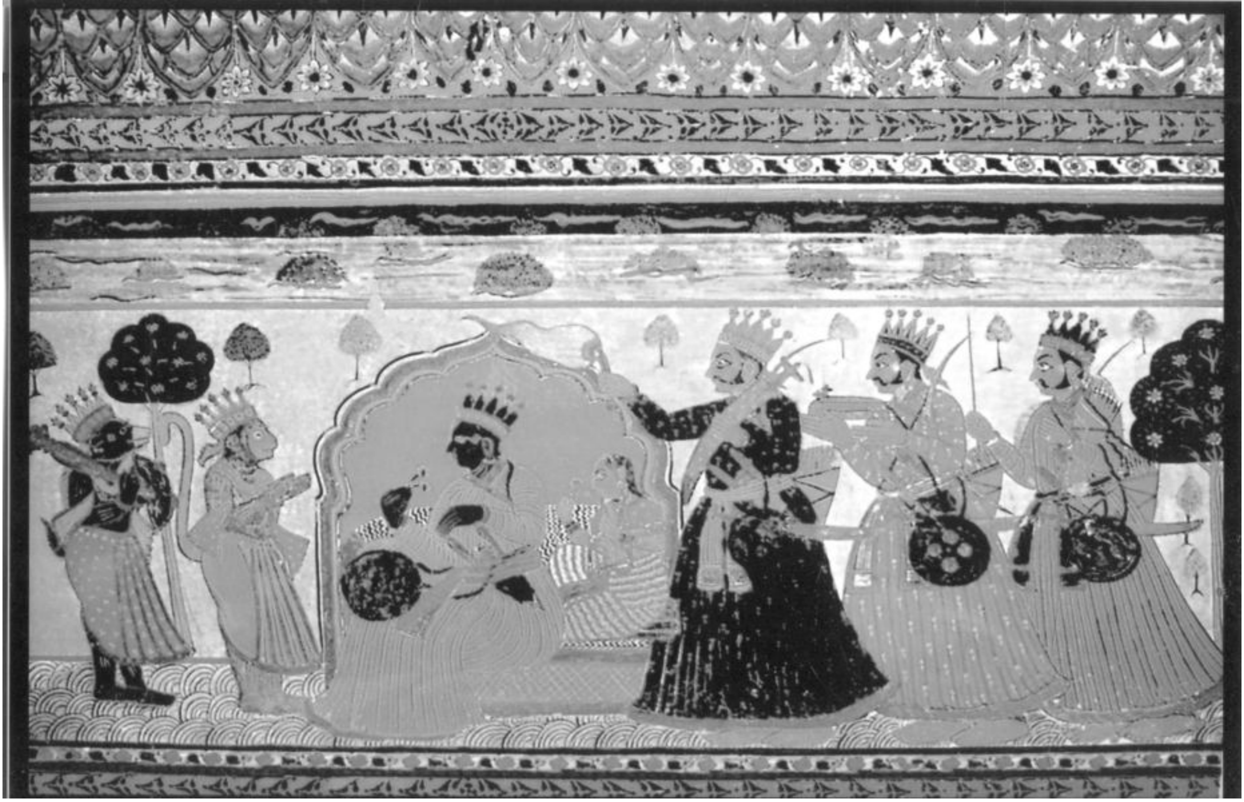

श्रीराम दरबार राजमहल ओरछा की चतेउर

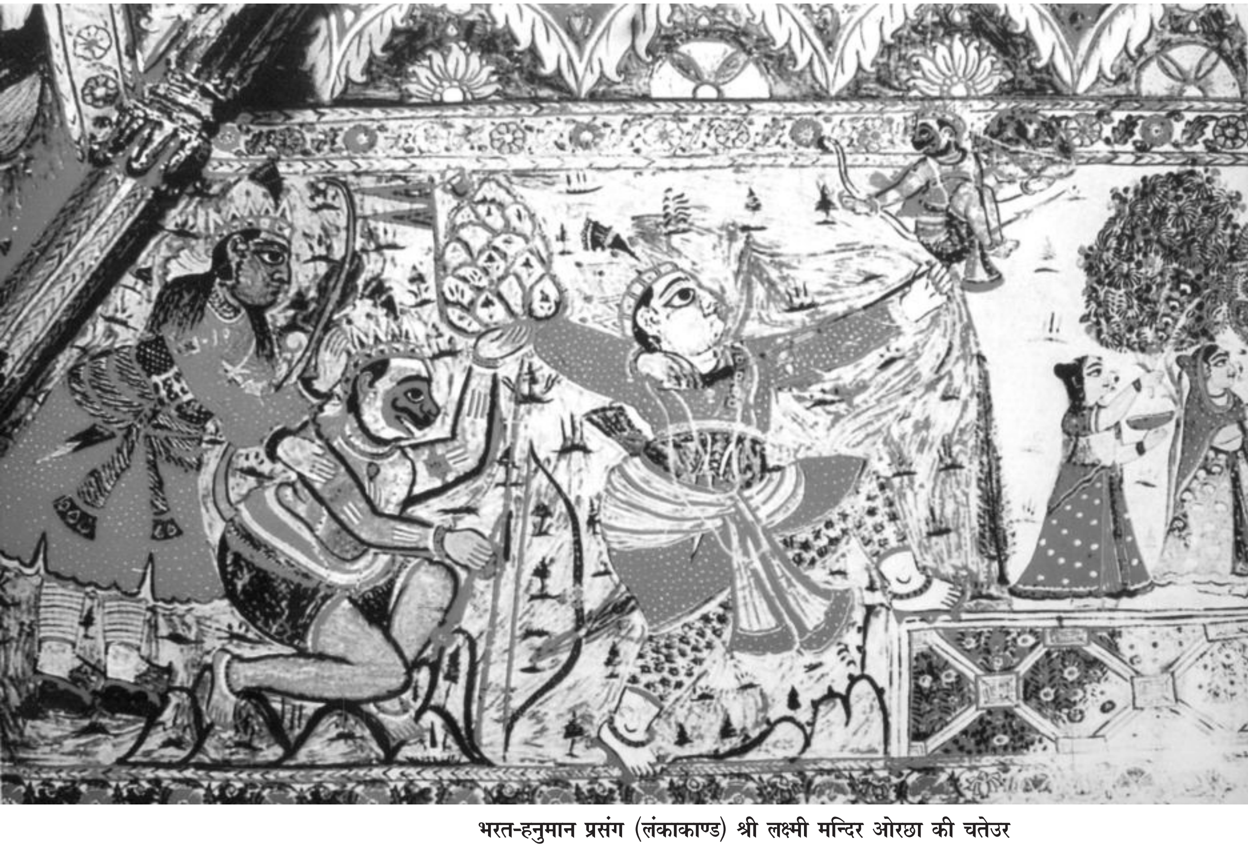

भरत-हनुमान प्रसंग (लंकाकाण्ड) श्री लक्ष्मी मन्दिर ओरछा की चतेउर

विष्णुदास की रामायन कथा

–डॉ. श्रीमती प्रमोद पाठक

बुन्देलखण्ड का साहित्य वैभव अपने आप में अप्रतिम है। एक ओर यहाँ भक्ति काव्य की पावन पयस्विनी प्रवाहित हुई है तो दूसरी ओर काव्यशास्त्रीय परम्पराओं को पुनर्जीवन प्रदान करने वाले विपुल साहित्यशास्त्र का निर्माण हुआ है। वहीं लोक साहित्य का उन्मुक्त निर्झर यहाँ की वीथियों में प्रवाहित हुआ है। भक्ति का आधार यहाँ राम और कृष्ण रहे हैं। राम और कृष्ण के लीला प्रसंगों से यहाँ का जनमानस आकण्ठ डूबा हुआ है, जिससे यहाँ विपुल साहित्य का निर्माण हुआ है।

प्राचीन काल से ही बुन्देलखण्ड रामभक्ति का प्रमुख केन्द्र रहा है। राम के चित्रकूट आगमन से ही राम के प्रति भक्तिभाव का आविर्भाव हो जाता है। तभी से राम के प्रति भक्तिभाव की अभिव्यक्ति हुई होगी। भले ही यह अभिव्यक्ति प्रामाणिक और लिखित रूप में बहुत से कारणों से उपलब्ध नहीं हो सकी पर वह बीज रूप में अवश्य ही रही होगी। वाकाटक और गुप्तकाल से बुन्देलखण्ड में रामभक्ति के प्रमाण मिलते हैं। कालिदास के 'मेघदूत' में चित्रकूट के रामगिरि आश्रम को प्रतिष्ठित रामतीर्थ कहा गया है। श्री सम्प्रदाय के प्रथम आचार्य नाथमुनि ने चित्रकूट तीर्थ के दर्शन किये थे। रामानुजाचार्य (1016-1117 ई.) ने शैव नरेश से चित्रकूट का उद्धार करवाया था। ऐसा इतिहास ग्रन्थों में उल्लेख मिलता है। इन तथ्यों से स्पष्ट होता है कि ईसा की तीसरी-चौथी सदी से चित्रकूट रामभक्ति का प्रमुख केन्द्र रहा। बाद में चन्देल और बुन्देल जैसे शक्तिशाली राजवंशों में इस भक्ति को संरक्षण मिला इसीलिए यह राम भक्ति का प्रमुख केन्द्र रहा।

रामकथा ने संस्कृत जैन साहित्य, बौद्ध साहित्य व विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में प्रतिष्ठा पायी है। हिन्दी साहित्य के आदिकालीन उपलब्ध ग्रन्थों में आल्हाखण्ड, पृथ्वीराज रासो में रामभक्ति विषयक तथ्यों का पता चलता है। मध्य युग का बुन्देलखण्ड में विपुल साहित्य प्राप्त हुआ है। यह साहित्य लम्बे समय तक उपेक्षा के कारण प्रकाश में नहीं आ सका। नवीन शोधों से यह सम्पदा सामने आ रही है। यहाँ की धर्मप्रवण जनता की आस्था के केन्द्र राम और कृष्ण रहे हैं अतः इन महत् चरित्रों को लेकर साहित्य का निर्माण यहाँ होता रहा है।

बुन्देलखण्ड की रामकाव्य परम्परा

मध्य युग में विष्णुदास रामायन कथा उपलब्ध ग्रन्थ है जो रामचरित मानस से लगभग 100 वर्ष पूर्व में लिखी गयी। विष्णुदास के उपरान्त महाकवि तुलसी ने रामकाव्य को चरम उत्कर्ष पर पहुँचा दिया। 'मानस' में जहाँ भक्ति, नीति और दर्शन की पराकाष्ठा है, वहीं उसका साहित्यिक सौनदर्य अक्षुण्ण है। 'मानस' से सम्बन्धित सहस्त्रों शोध प्रबन्ध लिखे जा चुके हैं फिर भी शोध प्रक्रिया लगातार चल

रही है। इससे ग्रन्थ का महत्त्व स्वतः ही सिद्ध हो जाता है।

यही कारण है कि रामकाव्य का नाम लेते ही रामचरित मानस और विनय पत्रिका आ जाते हैं। इन प्रबन्धों में देवत्व का आरोपण इतनी सहजता से हुआ है कि राम पौराणिक प्रतिस्थापना के स्थान पर जन-सामान्य में दशरथ-सुत के लिए रूढ़ हो चुके हैं।

केशवदास की 'रामचन्द्रिका' मानस के बाद की रचना है जिसमें केशव ने आदर्श और यथार्थ की प्रतिष्ठा कर ग्रन्थ को कलात्मक उत्कर्ष पर पहुँचा दिया। रामचरित मानस के प्रत्येक पात्र-अन्तर्द्वन्द्व का पर्यवसान भक्तिमय होता है जबकि केशव के यागों मनोभावों का पर्यवसान यथार्थ को संस्पर्श करता हुआ भक्ति में प्रविष्ट होता है। केशव ने आदर्श और यथार्थ के मध्य सेतु का कार्य किया। वे रामकथा के उन पहलुओं को उभारना चाहते थे जो मानस में कम उभर पाये हैं। रामकथा के बहुचर्चित प्रसंगों का चित्रण कवि ने प्रबन्ध कथा की दृष्टि से तो किया पर उसमें अपेक्षित विस्तार कम हुआ है। केशव रामकथा के महनीय चरित्रों को उभारना चाहते थे। पर उत्कृष्ट साहित्यिक कौशल भी दर्शाना चाहते थे, इस कारण बहुछन्दों का प्रयोग करके कवि ने परवर्ती कवियों के लिए नये द्वार खोल दिये। पद्माकर का 'राम रसायन', वृन्दावनदास की 'रामचरितावलीय' मधुकर शाह के आश्रित केशरी सिंह की 'वाल्मीकि रामायन' इस परम्परा की महत्त्वपूर्ण कड़ियाँ हैं।

मध्य युग से ही रामकाव्य परम्परा में माधुर्य भावना का समावेश हो गया था। मधुर अली इस परम्परा के अग्रगण्य कवि हुए। माधुर्य भावना चित्रकूट में निवास करने वाले सन्तों के आकर्षण का विषय बनी, इसलिए उन्होंने रामसीता की युगल मूर्ति की उपासना माधुर्य भावना से की। इन कवियों में चरखारी नरेश आश्रित मानकवि व बुन्देलखण्ड की भक्त कवयित्रियों का अवदान सराहनीय रहा। 'वृषभानु कुँवरि', 'कांचन कुँवरि', 'युगलप्रिया' ने रामकथा को लोक प्रचलित छन्द शैली में श्रेष्ठ काव्य की रचना की, जो लोक में अत्यन्त प्रचलित हुई।

आधुनिक युग में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त कृत 'साकेत' महाकाव्य इस परम्परा का महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। वहीं छतरपुर के कवि भैयालाल व्यास की 'सीता सत्यम्' एवं 'रघुवंशम्' रचनाएँ इस परम्परा की महत्त्वपूर्ण कड़ी हैं।

विष्णुदास की रामायन कथा

विष्णुदास की रामायन कथा[1] लम्बी कालावधि तक उपेक्षा का शिकार रही। प्राचीन साहित्य के इतिहास ग्रन्थों में उसे कोई स्थान नहीं मिला। पं. गौरी शंकर द्विवेदी ने 'बुन्देलखण्डी वैभव' में विष्णुदास का जन्मस्थान ग्वालियर और जन्म संवत् 1470 बताया है। हिन्दी साहित्य के आलोचनात्मक इतिहास में भी इसे कोई स्थान नहीं दिया गया। पण्डित हरिहर निवास द्विवेदी ने गौरीशंकर द्विवेदी द्वारा बताये गये जन्मस्थान एवं जन्म संवत् का समर्थन किया है। नवीन शोध ग्रन्थों में इसे स्थान दिया गया है। रामायन कथा के रचनाकाल के सम्बन्ध में कवि ने स्वयं लिखा है।

चौदह निन्यानवे लियो। पूनी पवित्र रमायन कियो।
गुरुवासर रेवती नक्षत्र। माघ मास कवि कियो पवित्र।।[2]

विष्णुदास भी रामायन कथा 'रामकाव्यमाला' में पहली मणि के समान सुशोभित है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में भी रामायन कथा को रामकाव्य धारा की प्रथम कृति के रूप में स्थान दिया गया है।

विष्णुदास ने ग्रन्थ की प्रेरणा महर्षि वाल्मीकि से स्वप्न में पायी और ग्रन्थ की रचना की। ग्रन्थ लिखने के विषय में कवि ने बताया है कि—

लोभ बीज मानुष को बयो, दुर्लभ बाढ़ि पाप तरु गयो।
ताहि कुकर्म भये फल फूल, जिहिं विष स्वाद लयो विषमूल।
प्रथम लोभ दूजै अविवेक, द्वै तरुवर दो से फल एक।
दुष्ट सबद नौका ता पाप, ता हरत परत सन्ताप।
रामतै हैं अच्छनि कुठार, सिरी करत अति तीछन धार।
जौ अवलम्ब जीभ कौ धरै, मूल छन्द के पातक हरै।
पूरव जनम करम के भाई, तीरथ दान न सक्यों सिराई।3

मनुष्य के हृदय में जब लोभ और अविवेक के बीज गिर जाते हैं तब उसमें पाप वृक्ष उत्पन्न होता है और उसके विष जैसा प्रभाव उत्पन्न करने वाले फल-फूल उगते हैं जिसके प्रभाव से मनुष्य के गुण क्षीण हो जाते हैं और वह सन्तापग्रस्त हो जाता है। तब पाप वृक्ष को नष्ट करने का उपाय क्या है? 'राम' नाम के दो अक्षर रूपी कुठार को जिह्वा में ग्रहण कर उसके सहारे इस पाप वृक्ष को समूल नष्ट किया जा सकता है।

स्पष्ट है कि मोक्ष की प्राप्ति हेतु कवि ने ग्रन्थ की रचना वाल्मीकि रामायन के समान की। विष्णुदास ने चरित्र नायक की कल्पना 'पुरुषोत्तम' राम के रूप में की, रामायन कथा के सभी पात्र अवतारी हैं–

सीता माया करि अवतार, रामचन्द्र त्रिभुवन अवतार।

रामायन कथा मूल स्रोत एवं कथा वस्तु संघटन

रामायन कथा में राम का चरित्र विश्वविख्यात है। विष्णुदास से पूर्व संस्कृत, उड़िया, बंगाली, कश्मीरी, सिन्धवी, तमिल, तेलुगु, मलयालम, कन्नड़ और भी न जाने कितनी भाषाओं में रामकथा लिखी गयी है। बौद्ध और जैन अनुयायियों ने रामकथा लिखी। इससे स्पष्ट होता है कि रामकथा प्राचीन परम्पराओं से ग्रहीत है।

रामायन कथा की कथावस्तु का गठन तीन विशाल काण्डों एवं 51 सर्गों में किया गया है। ये तीन काण्ड हैं बाल काण्ड, अयोध्या काण्ड और सुन्दर काण्ड। बाल काण्ड में रामजन्म से लेकर हनुमान के लंकागमन तक की कथा का समावेश किया गया है। सुन्दर काण्ड में कथा का शेष भाग आता है। रामराज्य वर्णन के उपरान्त ऐसा प्रतीत होता है कि रामायन कथा का मूल भाग समाप्त हो गया है। किंतु उत्तर काण्ड में भक्त शिरोमणि विष्णुदास ने राक्षसों की उत्पत्ति, इन्द्र हत्या, अहल्या उत्पत्ति, राजा नृग आख्यान, रामचन्द्र स्वर्ग आरोहण आदि प्रसंगों को जोड़कर कथा के टूटे हुए अंशों को सूत्र में पिरो दिया गया है।

कथावस्तु की दृष्टि से रामायन कथा के प्रत्येक सर्ग में स्वतन्त्र कथा का निर्वाह हुआ है। इन समस्त कथाओं का योग रामकथा के विकास में है। फिर भी उनका स्वतन्त्र अस्तित्व है। कथा का प्रारम्भ कवि ने भारती वन्दना से किया है। तदनन्तर गणेश वन्दना वाल्मीकि वन्दना, गुरु वन्दना व अन्य देवी-देवताओं की वन्दनाएँ हैं सम्पूर्ण ग्रन्थ में वाल्मीकि रामायन संस्कृत के चरित्र काव्य और पुराणों में वर्णित रामकथा के सार से लिया गया है।

दूसरे सर्ग में 204 छन्द हैं जिसमें ऋषि की देखरेख में राजा दशरथ पुत्रेष्टि यज्ञ करते हैं, जिसमें राम लक्ष्मण भरत और शत्रुघ्न का जन्म होता है। राम-लक्ष्मण का अवतार देवगणों की रक्षार्थ हुआ। ब्रह्मा ने राम-लक्ष्मण की सहायतार्थ रीछ और वानर के रूप में देवताओं को सहायतार्थ भेजा। इन्द्र, सूर्य और पवन क्रमशः बालि, सुग्रीव और हनुमान के रूप में अवतरित हुए। अवतार के पश्चात् विश्वामित्र द्वारा राम लक्ष्मण को यज्ञ की रक्षा के लिए माँगा जाना, राम द्वारा ताड़का वध, सीता

स्वयंवर, राम परशुराम संवाद, कैकेयी द्वारा दशरथ से दो वर माँगना हैं। तृतीय सर्ग में 93 छन्द हैं। इसमें रामसीता, लक्ष्मण का वन गमन एवं नदीपार कर भारद्वाज ऋषि से भेंट का वर्णन है। चतुर्थ सर्ग में दशरथ का राम के विरह में प्राण त्यागना व अन्तःकथा के रूप में श्रवण कुमार के पिता के शाप की कथा का वर्णन है। इस प्रकार राम से जुड़ी हुई कथा, अन्तःकथाएँ, राम राज्य की स्थापना का वर्णन है।

अन्तिम सर्ग में राम के स्वर्गारोहण की कथा 90 छन्दों में वर्णित है। राम राज्य सभा में विचार-विमर्श कर रहे होते हैं। एकाएक आकाशवाणी द्वारा उन्हें ज्ञात होता है कि उनके स्वर्ग प्रस्थान का समय आ गया है। फलतः राम अपना राज्य लव और कुश को सौंप कर स्वर्गलोक जाने की तैयारी करते हैं। राम से मिलने देवताओं का दूत आता है। दुर्वासा ऋषि से राम भेंट करते हैं और स्वर्ग की ओर प्रस्थान करते हैं। शेष राक्षस और वानर स्वर्ग चले जाते हैं। ग्रन्थ के अन्त में रामायन कथा के माहात्म्य का वर्णन है।

विष्णुदास कृत रामायण कथा का प्रबन्धत्व—महत् उद्देश्य

रामायन कथा का उद्देश्य मानवतावादी है। राम प्रेम, त्याग, उदारता, वीरता, धीरता, शक्ति, शील, सौन्दर्य के प्रतिरूप में वे राक्षसों का संहार करके मानवता की प्रतिष्ठा करते हैं।
राम राज्य में—

रोग शोक आपदा न होई, विधवा नारि न दीखत कोई।
परजा चरन सकल विधि धरै, परधन लोभ न कोऊ करै।
मीत्रु अराज होइ नहिं काल, नित माँगै धन बरसै माल।
कछू अनीति न होइ अकाज, सात दीप मँह पाजत राज।

—रामायन कथा, पृ. 204/178-180

रामायन कथा में लोकहित को परमधर्म माना गया है। भगवान का अवतार ही लोकहित के लिए हुआ है। उनके भक्तों का परम धर्म अपने आराध्य के आदर्शों का पालन करना है। विष्णुदास की भक्ति-भावना लोकहित की साधना है।

शाश्वत जीवन मूल्यों की विवेचना

राम का समस्त जीवन उत्साह, त्याग, दया, करुणा, क्षमा की प्रतिमूर्ति है। लक्ष्मण शक्ति के समय और सीता-विरह के समय राम फूट-फूट कर रोते हैं, वही प्राणप्रिया को लोक अपवाद के कारण वनवास भी देते हैं। व्यक्तिगत रूप से यह कार्य श्रेष्ठ नहीं कहा जा सकता है किन्तु समाज के लिए स्वहित का बलिदान उन्हें महान् सिद्ध करता है।

युग जीवन का समग्र चित्रण

रामायन कथा में राम-रावण युद्ध महत् कार्य है। राम को विजय, सीता उद्धार और राम राज्य की स्थापना उसका फल है।

रामायन कथा में वर्णित देशकाल अतीत से लिया गया है, जिसमें राक्षसों के अत्याचार का वर्णन मध्ययुगीन मुस्लिम शासकों और हिन्दू धर्म शासकों द्वारा जनता पर किये गये अत्याचारों से सम्बन्ध रखता है। अधिकांश मुस्लिम शासकों ने हिन्दू राजाओं व सामान्य जनता की बहू-बेटियों को छल-बल से छीन लिया था, जिसका वर्णन विष्णुदास ने रावण के माध्यम से किया है—

रावन राजनीति परिहरे, सब जग लोग सतावत फिरै
पर धन पर तिय लेत छुड़ाई, दुखी करै सब पृथ्वीराई ॥1॥

तत्कालीन राजाओं की विशालता का वर्णन रावण के ऐश्वर्य वर्णन के समय किया गया है—

लंका फिरि देखी बहुपास, बैठो रावन तनै अवास।
चौदह सहस तासु पर नारि, तिनको रूप न सकहिं विचारि।
तरुनी चौर झकोरहिं काऊ, पौढ़्यो तहाँ लँक को राऊ।[2]

कथानक की जीवन्तता

रामायन कथा में वर्णित रामचरित प्रख्यात है। तक रामकथा अनेक भाषाओं में लिखी जा चुकी है। रामायण की तुलना में इसका कलेवर न अति स्वल्प हैं न अति दीर्घ है लेकिन सम्पूर्ण कथा में सुनियोजित विकास क्रम है। उत्तरकाण्ड में वर्णित अन्तःकथाएँ यद्यपि आवश्यक सिद्ध नहीं होती हैं परन्तु उद्देश्य की प्राप्ति तो सुन्दरकाण्ड में ही हो जाती है। फिर भी कवि ने एक-दूसरे के साथ उन कथाओं का सम्बन्ध स्थापित कर ही दिया है, जिससे कथानक में जीवन्तता बनी रहती है।

कथात्मक संघटन में नाटकीयता

प्रारम्भ में राक्षसों के अत्याचारों से पीड़ित देवगण ब्रह्मा के पास जाकर विनती करते हैं—

रावन सरवस भौ अति बरी, तेहि सम्पति देवनि की हरी।
सुरनि सतावै करत न संक, दुर्गम ठौर रहै गढ़ लंक ॥3॥

राम-वन-गमन से लेकर शूर्पणखा प्रसंग तक कथा अत्यन्त तीव्र वेग से फलागम की ओर बढ़ती है। खरदूषण वध और सीताहरण से लेकर हनुमान के लंका से सीता की खबर लेकर लौटने तक की घटनाओं में राम द्वारा रावण-वध किये जाने से विश्वास बढ़ता है, वहीं सीता-हरण, जटायु-मरण जैसे प्रसंगों में आशंका बनी रहती है। सुग्रीव की मैत्री से आशा बँधती है।

राम की युद्ध यात्रा, सेतु-बन्धन, विभीषण-मैत्री, मेघनाद और कुम्भकरण का वध आदि घटनाएँ नियताप्ति के भीतर आती हैं।

रावण-वध और रामराज्य की स्थापना फलागम है। उत्तरकाण्ड की कथाओं में नाटकीय तत्त्वों में बाधा होती है फिर भी अन्तःकथाओं का सम्बन्ध राम से जुड़ा रहता है।

आदर्श और श्रद्धा का केन्द्र चरित नायक

राम रामायन कथा के मुख्य नायक हैं जो प्राचीन काल से लेकर आज तक जन-मानस की आशा एवं श्रद्धा का केन्द्र हैं। राम का महत् कार्य उन्हें भारतीय संस्कृति का सच्चा लोकनायक सिद्ध करता है। वे नीतिवान धीर-वीर, शत्रुजयी, लोक रक्षक, यशस्वी, भावुक और महान् हैं। कवि ने राम का नर और नारायण दोनों रूपों में चित्रण किया है। वे पतित-पावन कृपा-निधान हैं, कठोर व्रतों का पालन करते हुए आदर्श राज्य की स्थापना करने में सफल हुए हैं।

गरिमामयी उदात्त शैली

रामायन-कथा काव्य होते हुए भी महाकाव्य के औदात्य से परिपूर्ण है। वर्ण्य विषय, कथा-प्रवाह, लोक-कथात्मक शैली के कारण इतने प्रभावी हैं कि पाठक और श्रोता दोनों का साधारणीकरण हो

जाता है। कवि ने साहित्यिक बुन्देली ब्रजभाषा व ग्वालियरी भाषा का प्रयोग किया है। कथा दोहा, चौपाई शैली में छन्दोबद्ध है, जिसमें नाद सौन्दर्य विद्यमान है। ग्रन्थ में संस्कृत श्लोकों की वैचित्र्य योजना द्वारा कवि ने काव्य शास्त्रीय परम्परा का निर्वाह किया है। दोहा-चौपाई के अतिरिक्त कवि ने झूलना, सरसी, चामर, रूपमाल, आदि छन्दों का भी प्रयोग किया है।

लोक शैली में रामायन कथा निबद्ध है इसलिए छन्द की मूल आत्मा लय और प्रवाह की ओर कवि का ध्यान अधिक है।

प्रभान्वित और रस योजना

रामायन कथा में वीर, करुण, शृंगार, वात्सल्य व रौद्र रस की निष्पत्ति हुई है। फिर भी प्रधानता वीर और शृंगार रस की है। सम्पूर्ण कथा की प्रमुख घटना विध्वंसक राक्षसों के साथ रावण का वध और सीता की मुक्ति। इन दोनों महान् कार्यों का उद्देश्य के लिए अद्वितीय वीरता की आवश्यकता है। वीर रस के प्रसंग, हनुमान-रावण संवाद, विभीषण संवाद, मेघनाद-लक्ष्मण सवाद, अतिकाय वध, सुग्रीव सेनापति सन्देश, रावण-वध आदि सर्गों में फलित होते हैं। शास्त्रीय वर्णित युद्ध वीरता, दान वीरता, धर्म वीरता, दया वीरता का विस्तृत वर्णन है। यथा–

रघुवीर कोपित अतिहिं सोकित, लियो औरे बान।
तिहि देखि आवत हाँकि धावत, हन्यो निज सखान ॥1॥

राम की वीरभावना धर्मपरक है। वीर के सहयोगी शृंगार रस का वर्णन अधिक विस्तृत नहीं है। संयोग शृंगार का वर्णन कवि ने अधिक नहीं किया। वियोग के साथ प्रकृति का चित्रण है। इसके अतिरिक्त शान्त, वात्सल्य व रौद्र रसों का भी यथोचित वर्णन है।

जीवनी शक्ति और प्राणवत्ता

रामायन-कथा का जीवन दर्शन मानवतावाद है, जो तत्कालीन लोक मानस में जीवनी-शक्ति का संचार करने वाला है। राम का चरित्र-वर्णन लोकप्रिय सुगम रीति से हुआ है। यह वर्णन कथा-प्रवाह और लोक-शैली के कारण इतना सरस है कि पाठक और श्रोता कथारस से भाव-विभोर हो जाते हैं।

समग्रतः कहा जा सकता है कि प्रबन्ध के अन्तर्गत कथा काव्य होते हुए भी महाकाव्यात्मक, औदात्य से परिपूर्ण है। जिसमें नाटकीय तत्त्वों का संयोजन कथा का प्रभाव स्थायी बना देता है। यद्यपि ग्रन्थ में स्वतन्त्र दार्शनिक दृष्टियों का अभाव है किन्तु बीच-बीच के वर्णनों में समाज, संस्कृति, लोकनीति, लोक-व्यवहार आदि का सुन्दर ज्ञान प्राप्त होता है।

इस प्रकार ग्रन्थ का सामाजिक सांस्कृतिक महत्त्व अक्षुण्ण है। सबसे विशिष्ट महत्त्व भाषा सम्बन्धी है, जो अपने सहज लोक प्रचलित रूप में विद्यमान है और समसामयिक भाषा का एक प्रामाणिक रूप प्रस्तुत करती है।

सन्दर्भ

1. रामायन कथा का सम्पादन पं. लोकनाथ द्विवेदी ने किया। साहित्य भवन (प्रा.) लिमिटेड, इलाहाबाद कृते बुन्देलीपीठ हिन्दी विभाग, सागर विश्वविद्यालय से प्रकाशन हुआ। प्रकाशन काल का उल्लेख नहीं है।
2. रामायनकथा, छन्द-11, पृ. 1
3. रामायनकथा, छन्द-11, पृ. 1

बुन्देली लोक साहित्य में रामचरित

–डॉ. बहादुर सिंह परमार

दर्प व स्वाभिमान की धरती बुन्देलखण्ड के कण-कण में व्याप्त राम के प्रति आस्था यहाँ के रहवासियों को जीवन में नयी आशा व नयी उमंग पैदा करती है। "राम लोक और वेद के सेतु समुद्र हैं। 'श्रुति सेतु पालक राम तुम' उनके उत्तरीय का एक छोर लोक में फहराता है, तो दूसरा छोर वेद के विधानों में फबता है। ये जो राम का लोकस्पर्शी छोर है, इसी ने राम को लोक-व्यापी बनाया है। जीवन के छोटे-छोटे हिस्सों, छोटे-छोटे दुःखों-सुखों में सम्मिलित हमारे राम ही हैं।"[1] राम का चरित उदात्तता से परिपूरित लोकग्राह्य है। बुन्देलखण्ड के चित्रकूट जैसे धाम में राम ने अपने विपदा के दिन व्यतीत कर यहाँ के लोगों, पशु-पक्षियों और वनों को वह सौभाग्य दिया, जिसे पाने के लिए तपस्वीजन आजीवन साधना कर तरसते रहते हैं। ऐसे राम का चरित बुन्देली के रचनाकारों को सदा से आकर्षित करता रहा है। विष्णुदास की रामायन कथा से लेकर समकालीन कवियों की रचनाओं तक में राम चरित का गान विविध रूपों में बुन्देली में उपलब्ध है।

बुन्देलखण्ड के जयदेव कहे जाने वाले महाकवि ईसुरी के काव्य में राम के चरित्र का गुणगान सीधे तौर पर मिलता है। बुन्देलखण्ड में राम को जीवन का रक्षक माना जाता है। यहाँ की आस्तिक जनता मानती है कि जिस पर राम की कृपा होती है, उसका कोई बाल भी बाँका नहीं कर सकता। इसी भाव को ईसुरी इस तरह कहते हैं–

जीके रामचन्द्र रखवारे, को कर सकत दगा रे।
बड़े भये प्रहलाद बचाये, हिरनाकुस खों मारे।
राना जहर दओ मीरा खाँ, प्रीतम मान समारे।
मसकी जाय ग्राह की गरदन, गह गजराज निकारे।
ईसुर प्रभु ने गाज बचायी, सिर पै गिरत हमारे।[2]

रामचरित की अनेक लीलाओं पर ईसुरी ने चौकड़ियाँ कही हैं। उनमें राम नाम की महिमा, राम-जन्म, मुनि-आगमन, ताड़का-वध आदि का उल्लेख मिलता है। ईसुरी जीवन पर्यन्त साहित्य साधना करते रहे। जब जीवन के उत्तरार्ध में अस्वस्थ हो गये तो अन्तिम दिनों में अपने चंचल मन को समझाते हुए वे कहते हैं–

ये मन जपत काये ना रामें आय आखरी कामें।
सुआ पड़ाउत गनका तर गयी, लेत हरी के नामें।
अपने जन को पठा देत हरि, बैकुण्ठन के धामें।
जो न भजै राम को ईसुर, परे नरक के ग्रामें।[3]

ईसुरी के अन्य समकालीन बुन्देली कवियों ने भी चौकड़ियों के माध्यम से जनमन में रमे राम के चरित को अपनी कविता का विषय बनाया है। बुन्देलखण्ड जनपद के गाँव-गाँव में फाग साहित्य रचने वाले कवि हुए हैं, जिनमें महोबा जिले के श्रीनगर में जुझौतिया ब्राह्मण कुल में जन्मे पं. परशुराम पटैरया ने रामनाम के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए लिखा है कि आज राम नाम ही भवसागर से पार होने का आधार है। वे लोगों को समझाते हुए कहते हैं–

जिननें राम भजन करलीना, बड़ा मजा उन कीना।
पूरे पगे लगा तन मन धन सब अरपन कर दीना।
राखो गोय कपट तज मन में, निर्गुन नाम नगीना।
भव गम्भीर जलधि उतरन कों, नौनों नाम अधीना।
परसराम भज लेव हरि नामें, नहीं जगत में जीना।[4]

महोबा जनपद के ग्राम तेइया में विक्रमी संवत् 1945 में जन्मे बुन्देली कवि हीरालाल तिवारी ने अपनी रचनाओं में भी राम चरित को विषय-वस्तु बनाकर लोकमन को प्रभावित किया है। जब विश्वामित्र के साथ राम-लक्ष्मण यज्ञ के रक्षार्थ वन प्रान्त में भ्रमण हेतु जाते हैं, उसी समय जनकपुरी में सीता स्वयंवर का आयोजन राजा विदेह द्वारा किया जाता है। जनकपुर के भ्रमण की लालसा रामानुज लखन के मन में उत्पन्न होती है किन्तु मर्यादा व संकोचवश वे अग्रज राम से अपनी भावनाएँ प्रकट नहीं करते हैं। राम अपने भाई की मनोभावनाओं को समझ कर मुनिवर से आज्ञा लेकर जनकपुर जाते हैं जिसको हीरालाल तिवारी इस प्रकार लिखते हैं–

देखो लखन जनकपुर चावें, प्रभु सन प्रगट न कावें।
रामचन्द्र मन की गति जानी, मुनि सन विनय सुनावें।
आयसु पाय चले अवलोकन, नर नारी उठ धावें।
हीरालाल श्री रामचन्द्र पै, कोटिन काम लजावें।[5]

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के सौन्दर्य को निहारकर मिथिला की युवतियाँ आपस में चर्चारत होकर यह कहती हैं कि श्यामल वर्ण के राजकुमार अपनी राजकुमारी जानकी के लिए योग्य वर हो सकते हैं। इसी प्रकार के भाव बुन्देली कवि की वाणी में देखिए–

दरसन करे सखिन ने आकें, कोउ झरोखन झाँकें'।
कोउ फिरें खिरकिन में हिरकीं, कउ छाजन पै छाँकें।
स्यामल सुवन जानकी लायक, कोउ कये नृप सो जाकें।
हीरालाल पुरी के बालक, आगूँ चले लुआकें।[6]

भगवान राम की लीलाएँ बुन्देलखण्ड अंचल के लोकमन को सदैव से न केवल आकर्षित करती रही हैं बल्कि वे प्रेरक बनकर जीवन का पाथेय भी रही हैं। राम के बचपन से लेकर रावण-वध तक का कथानक बहुविध कवियों की लेखनी से निःसृत हुआ है। छतरपुर रियासत के गिरदावर कानूनगो रहे लाला रामचरण लाल ने सन् 1935 ई. से 1940 ई. के मध्य जो कविताएँ बुन्देली लोकभाषा में रचीं उनका प्रकाशन उनके पुत्र बृजभूषण खरे ने 2000 ई. में 'राम राम भज लेव' काव्य संग्रह के रूप में कराया है। इस पुस्तक में कवि ने राम के जीवन प्रसंगों को लोक भाषा बुन्देली में मनोहारी रूप से प्रस्तुत किया है। राम जन्म का चित्रण कर कवि रामचरण लाल ने लिखा है कि रामचन्द्र अवतार का समाचार पाकर अयोध्या नरेश दशरथ के द्वार पर सकल विप्र समाज के साथ सारे नगर के नर-नारी उपस्थित होकर अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हैं। गुरु वसिष्ठ को बुलाकर घड़ी मुहूर्त

दिखवाया जाता है। धूम-धाम से बाजे बजते हैं, दान दिया जाता है और पूरी अवधपुरी में आनन्द छा जाता है। आप भी देखें—

लीन्हों रामचन्द्र अवतार, ता दिन रही सम्पदा छायी।
दीन्हों है विप्रन को दान, कीन्हों अधिक-अधिक सनमान
हू है नृप तुम्हारौ कल्यान, जय-जय विप्रन भूप सुनायी
लीन्हों रामचन्द्र अवतार..........
नभ में बाजत घने निशान—करतीं अजब अपसरा गान
श्रीपत रामचन्द्र को जान सुन्दर सुरन फूल बरसायी
लीन्हों रामचन्द्र अवतार...........
हो रहो अवध पुरी आनन्द जन्में श्री दशरथ के नन्द
हैं जे जग के आनन्द कन्द जिनकी छब बरणन नहिं जायी
लीन्हों राम चन्द्र अवतार................
प्रभु के राम चरण गुन गाऊँ निशदिन चरणन सीस नवाऊँ
तुम्हरे बार-बार बल जाऊँ जनखाँ वरस देव रघुराई
लीन्हों रामचन्द्र अवतार, ता दिन रही सम्पदा छायी।[7]

पन्ना दरबार के राजकवि रहे पंडित कृष्णदास का जन्म माघ कृष्ण 13 संवत् 1964 वि को छतरपुर जिले के बमनी गाँव में हुआ था। इन्होंने अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया। ये सच्चे वैष्णव भक्त तथा उदात्तमना थे। इन्होंने भागवत धर्म चरितामृत, हनुमन्तकृपा षोडशी, तुलसी चरितामृत, वैष्णव जन की कसौटी तथा संत चरितामृत जैसे ग्रन्थ रचे। इनके काव्य का विषय राम का चरित्र तथा हनुमत चरित रहा है। वे राम की प्रशस्ति में लिखते हैं कि आप राजाओं और महाराजाओं में श्रेष्ठ, शाहों के शाह और अन्तर्यामी हो सब कुछ देखते हैं। आप देवों के भी देव, सेवितों के महासेव, सभी धर्म-कर्म की रक्षा करने वाले हैं। आप वीरों के वीर, धीरों के धीर तथा गरीबों की सहायता करने वाले कृपालु हैं। आप सूर्यकुलमणि, सद्गुणों से युक्त वर देने वाले सूर्य वंश के सूर्य रामचन्द्र हों। हे रामचन्द्र जी, तुम्हारे राज्य में सुख व आनन्द सभी पाते हैं।

कृष्ण कवि का यह छन्द देखिए—

राजन के राजा महाराजन के महाराज,
साहन के शाह बात ऐन के लखैया हौ।
देवन के देव सर्व सेवन के महासेव
धर्मिन के धर्म कर्म, कर्म के रखैया हौ।।
कृष्ण कवि वीरन के वीर, धीर धीरन के,
परम कृपालु दीन दास के सहैया हौ।
भानु कुल तिलक सुजान वरदायक हौ,
भानु कुल भानु सो हमारे रघुरैया हौ।।

तेरे राज्य रामचन्द्र पाइये अनेक सुख,
तेरे राज्य रामचन्द्र आनन्द विसाहिए।
तेरे राज्य रामचन्द्र सिद्धि रिद्धि कोटि मिलै।

तेरे राज्य रामचन्द्र सर्व सुख दाहिए।।
तेरे राज्य रामचन्द्र, सकल सुतन्त्र जीव,
कृष्ण कवि मुक्ति मुक्त युक्त सीस वाहिए।
भानु कुल भानु प्यारे अवध नृपाल राम,
उमर दराज महाराज तेरी चाहिए।।[8]

कृष्ण कवि उक्त छन्द में राज दरबारी परम्परा का पालन करते हुए प्रभु राम की दीर्घायु की कामना करते हैं। बुन्देली के श्रेष्ठ टकसाली कवि डॉ. अवध किशोर जडिया भी भगवान राम के चरणों में शीश झुकाकर अपनी जीवन की डोर रघुनाथ को सौंपते हुए लिखते हैं–

राजत राजिवलोचन राम सुवाम विराजीत सीय दुलारी।
दीनन के दुख दारिद दारिवे दीढ दया की ढरै अवढारी।
मंजुल मोदमयी मुस्कान हिये में मयंक मरीचि प्रसारी।
नाथ अनाथन के जो उन्हीं रघुनाथ के हाथ में डोर हमारी।[9]

बुन्देलखण्ड की अयोध्या ओरछा को कहा जाता है। यहाँ भगवान राम राजा के रूप में महारानी गणेश कुँवरि की तपस्या से विराजमान हैं। यह वेत्रवती सरिता किनारे अवस्थित तीर्थलोक आस्था का केन्द्र है। यहाँ पुष्य नक्षत्र का बड़ा महत्त्व है। इसके अतिरिक्त रामनवमी के दिन भव्य समागम होता है। ओरछा के राजाराम की महिमा में अनेक बुन्देली रचनाकारों ने कविताएँ लिखी हैं। वि.संवत् 1972 की बैकुण्ठ चतुर्थी को जन्मे लक्ष्मी प्रसाद शुक्ल 'वत्स' का यह छन्द देखिए जिसमें उन्होंने रामलला की प्रशस्ति गायी है–

राम लला लेने को ही कुँअर गणेश रानी
अवध में आयीं रामनौमी की बधाई में।
मैया सरयू ने दिये बाल रूप राम उन्हें
लेके राम आयी वह मधु अँगनाई में।।
बाल राम अवध में न देख सके शिवजी तो
कहा यों भुसुण्ड चलो बेतवा अथाई में।
बनो है बुन्देलखण्ड अब तो अवध जहाँ
राम लला खेलें ओरछा की अमराई में।।[10]

इस छन्द में कवि ने महारानी गणेश कुँवरि को याद किया है जिनकी कृपा से ओरछा अवधपुरी बन सका है। मैया सरयू की कृपा से बाल रूप राम की मूर्ति ओरछा में स्थापित हुई है। जिनके दर्शन करने महादेव भुसुण्डी के साथ बुन्देलखण्ड की धरा पर अवस्थित ओरछा पधारते हैं। यहाँ बाल रूप राम को ओरछा की अमराई में क्रीड़ारत पाते हैं। यह सब कवि शुक्ल की कल्पनाशीलता व भक्ति भाव का कमाल है।

बुन्देलखण्ड अंचल में मन्दाकिनी सरिता की कल-कल निनादित धारा से चित्रकूट धाम नवजीवन पाता है। चित्रकूट अंचल की प्राकृतिक सुषमा सम्पन्न गिरि कन्दराओं में श्री राम ने वनवास के समय अपना आश्रम बनाया था। यहाँ की धरा पर श्री राम के चरण. पड़े थे। वो इस अंचल में निवासरत रहकर वनवासियों के प्रिय थे। आज यही चित्रकूट अंचल एक तीर्थ है। इस तीर्थस्थल में अत्रि ऋषि का आश्रम है, जहाँ सती अनसूया ने सीता को शिक्षा दी थी। यह स्थल आस्था का केन्द्र तो है ही, इसकी महिमा को भी बुन्देली कवियों ने अपनी लेखनी से वर्णित किया है। भिण्ड जिले के आलमपुर

में 3 मार्च 1930 को जन्मे गुलजारी लाल गुप्ता 'लाल' ने राम जन्म जैसी पुस्तक रची है। उन्होंने अपने एक छन्द में अत्रि आश्रम की महिमा इस प्रकार गायी है–

दीनबन्धु दीनानाथ लखन समेत सिय,
बिहरत विपिन आये अत्रि जू के आँगना।
आश्रम पधारे राम अत्रि, ब्रह्मानन्द लयो
दण्ड जिमि पौढे पग मोहि लायौ अँगना।।
कहै मुनि हाथ जोर विनती मैं काह करौं
नाथ के चरित्र कह सकत भुजंगना।
पतिव्रत धर्म के महान् भेदभाव मर्म
सीता को सुनावें धन्य अत्रि जू के अंगना।"[11]

स्वतन्त्रता सेनानी रहे बुन्देली कवि गोपालदास रूसिया ने बुन्देली में लोकानुभवों को चौकड़ियों में अभिव्यक्ति प्रदत्त की है। उन्होंने लोक नायक राम के चरित पर कई रचनाएँ लिखीं हैं। इन्होंने उनके जन्म, बाल-लीला तथा धनुष यज्ञ पर केन्द्रित कविताएँ रचीं। वे आज की समसामयिक परिस्थितियों से विचलित होकर राम को पुकारते हुए कहते हैं कि हे राम! तुमने एक ताड़का का वध करके जग की रखवाली की थी किन्तु आज अधिकांश लोगों के मन में ताड़का रूपी राक्षसनी बस गयी है। इसको मारकर लोगों की मति को निर्मल कीजिए–

तुमने राम ताड़का मारी, जग की कर रखवारी।
धरम-करम अब सब मूले हैं छायी है अन्धियारी।
न्याय नीत को अनरीती ने, कर दओ छारी-छारी।
कहत गुपाल ताड़का मन की, मार करो उजयारी।।[12]

पान नगरी के रूप में विख्यात महाराजपुर के वैश्य परिवार में आश्विन शुक्ल प्रतिपदा सम्वत् 1992 को जन्मे लक्ष्मी प्रसाद गुप्ता ने राम भक्ति को अपनी कविता का प्रमुख कथ्य बनाया है। इन्होंने अपनी फागों में श्री रामलला के यशगान के साथ अपने कर्मो पर पश्चाताप व्यक्त कर प्रभु से उद्धार करने की विनती की है। वे राम की राजधानी अयोध्या धाम को ही अपना पावन धाम मानते है। उनकी प्रत्येक कविता में राम भक्ति का भावपूर्ण समर्पण द्रष्टव्य है। उदाहरण देखें–

अपने रामलला के लानें हमें अजुध्या जानें।
सरजू जू के पावन जल में, हमखाँ रोज नहानें।
अपने दुःख दरद की बातें, उनसे जाकें कानें।
अब ना कबहुँ भेजियों जग में फिरतन पाँव पिरानें।

अपने रामलला कें जैबी, मन की बातें कैबी।
बटतन भोग गिरे धरनी पै, उठा-उठा के खैबी।
साँझ सबेरे चरणामृत संग, तुलसी दल खाँ लैबी।
अपने रामलला के द्वारें, तान पिछौरा रैबी।।[13]

ग्राम बसारी में जन्मे बुन्देली कवि प्राध्यापक डॉ. कुंजी लाल पटेल 'मनोहर' अपनी चौकड़ियों में भगवान राम का यशगान करते हैं। आज का कवि समसामाजिक अन्याय, अनाचार तथा भेदभाव देखकर आक्रोशित है। वह व्यवस्था सुधारने का आह्वान जहाँ एक ओर समाज के नियन्ताओं से

करता है, वहीं उसका आस्तिक मन अपने प्रभु राम से कह उठता है कि हे प्रभु आप कहाँ सो गये हैं? आज आपके भक्तों पर मनमाने जुल्म ढाये जा रहे हैं? आपकी जन्मभूमि में अब दीन-हीनों की लाज बचाने वाला कोई नहीं है—

प्यारे कौशल्या के छैया, सोये कहाँ रघुरैया।
अपनी जनम भूमि को भूले, कैसे असुर मरैया?
जुलम करें मनमाने भक्तों ऊपर नीच कसैया।
बिना तुम्हारे दीन हीन की, को है लाज बचैया।
आओ मनोहर जनमभूमि में फिर से चारउ मैया।[14]

राम के जीवन के कई प्रसंग लोक में प्रचलित हैं। जिन्हें बुन्देलखण्ड के कवियों ने अपनी लेखनी से नयी परिभाषाएँ नये सन्दर्भों में देने का प्रयत्न किया है। 'सीता वनवास' एक ऐसा ही प्रसंग है जिसे अनेक दृष्टियों से देखा जाता है। नैगुवाँ टीकमगढ़ के कवि रतिभानु तिवारी 'कंज' ने 'वैदेही वनगमन' कृति लिखकर काफी लोकप्रियता अर्जित की है। यह प्रबन्ध काव्य पीड़ा को मुखरित करने वाला ठेठ बुन्देली में लिखा गया है। इसमें केन्द्रीय कथा सीता निर्वासन को लेकर है। इस कथा को लिखते हुए कवि ने प्रकृति का सौन्दर्य, लोक संस्कृति का सूक्ष्म चित्रण तथा भारतीय जीवन-मूल्यों का निर्वहन कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है। इसमें सीता की दृढ़ता, सहनशीलता तथा पतिव्रत धर्म का निर्वाह प्रदर्शित करने के साथ कवि ने नारी की संघर्षधर्मिता प्रस्तुत की है। आप देखें जब सीता निर्वासन के बाद भी पति राम को सन्देश प्रेषित करते हुए कहती हैं—

सीता हती राम की अपनी, जनम-जनम तक रै है।
आन राखवें खों रघुवर की, दुःख-पीरा खों सैहै।
अपनो धरम पालबें स्वामी, मोरो सोक बिसारें।
अपने पथ पै अडिग रयें बे, साँच धरम खों धारें।[15]

सीता वनवास को लेकर राम को कटघरे में खड़ा किया जाता रहा है। बुन्देलखण्ड में आस्तिकता व परम्परा के कवि श्रीयुत श्रीनिवास शुक्ल इससे आहत होते रहे हैं। वे पेशे से अधिवक्ता रहे और वे राम की ओर से वकालत करते हुए उनके पक्ष को 'कुछ बोलो राम' में काव्य रूप में रखते हैं। इस पुस्तक के दो खण्ड हैं। प्रथम खण्ड में वे वकील की हैसियत से रामजी पर सदियों से मढ़े जा रहे आक्षेपों को सिलसिलेवार प्रस्तुत करते है और अन्त में उनका प्रतिवाद कर पाने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हैं। द्वितीय खण्ड में श्री राम जी के मुख से ही प्रत्येक आक्षेप का सोदाहरण समुचित उत्तर देते हैं। यह कृति रामचरित की महत्त्वपूर्ण रचना है।

विन्ध्य कोकिल पण्डित भैयालाल व्यास ने भी राम की अनन्य सीता को केन्द्र में रखकर 'सीता सत्यम' कृति समाज को दी है। जिसमें चार सोपानों के माध्यम से सीता के चरित्र को नयी परिभाषा देने का प्रयत्न किया गया है। प्रथम खण्ड में वन्दना, द्वितीय में विनय, तृतीय में कथ्यम् तथा चतुर्थ में सत्यम् शीर्षक से अपने भाव परोसे हैं। इनकी सीता नये युग के सन्दर्भों की सीता हैं। इस कथा में सीता को प्रेम, सतीत्व, मर्यादा, तपस्या, साधना तथा जगत जननी के रूप में प्रस्तुत किया गया है—

सीता नारी अवतारी है, सबकी सुखकारी है।
सीता प्यारी है, प्रभुता है जगती से न्यारी है।
सीता दुखियों की देवी है, सुखियों की दूरी है।
सीता नहीं अधूरी किंचित, प्रभा-पुंज पूरी है।

साधन हीन जनों की सीता, पूरन नहीं अधूरी है।
अनजानों की जान है सीता, अरु जीवन मूरी है।[16]

राम आस्था व आशा के प्रतीक के साथ मन की उलझन सुलझाने वाले हैं। तभी तो बुन्देली के टकसाली कवि शंकरदयाल खरे 'मोरे राम, मोय मिल जावें' में कहते हैं–

मोरे राम, मोय मिल जावें मन-उरजन सुरजावें।
भाई-बन्द उर कुटुम कबीला, माया में भरमावें।
राम बिना जौ जग सपनें सौ, मन की कीसें कावें।
मोरे राम, मोय मिल जावें मन-उरजन सुरजाबें।[17]

इस तरह हम पाते हैं कि राम बुन्देलखण्ड के जन-जन बसे हैं जिससे यहाँ के रचनाकार मी सतत रूप से उनको केन्द्र में रखकर आज भी रचनाएँ लिख रहे हैं।

सन्दर्भ

1. डॉ. श्याम सुन्दर दुबे, राम-रंग-रस भींजी चुनरिया, पृ. 99, प्रकाशक-ग्रन्थ निकेतन, दिल्ली, 2001 ई.
2. ईसुरी, महक बुन्देली माटी की, गोइल गौरव ग्रन्थ के पृष्ठ 421 से
3. ईसुरी, महक बुन्देली माटी की, गोइल गौरव ग्रन्थ के पृष्ठ 473 से
4. बुन्देली का फाग साहित्य–श्याम सुन्दर बादल, पृष्ठ 340, प्रकाशक-म.प्र.आदिवासी लोक कला परिषद, भोपाल, 2000
5-6. बुन्देली का फाग साहित्य–श्याम सुन्दर बादल, पृ. 383 1904, प्रकाशक-म.प्र. आदिवासी लोक कला परिषद, भोपाल, 2000
7. राम राम भज लेव, लाला रामचरण लाल, पृ. 24, प्रकाशक–नीरज प्रकाशन, डेरा पहाड़ी, छतरपुर, 2000
8. बुन्देलखण्ड की छन्दबद्ध काव्य परम्परा–डॉ. बहादुर सिंह परमार, पृ. 235-236, प्रकाशक–आदिवासी लोककला अकादमी, भोपाल, 2005 ई.
9. स्तुति की शब्दभूमि–डॉ. अवध किशोर जड़िया, पृ. 7, प्रकाशक–बुन्देली विकास संस्थान, बसारी, 2009 ई.
10. बुन्देलखण्ड की छन्दबद्ध काव्य परम्परा–डॉ.बहादुर सिंह परमार, पृ. 295, प्रकाशक–आदिवासी लोककला अकादमी, भोपाल 2005 ई., पृ. 61
11. बुन्देलखण्ड की छन्दबद्ध काव्य परम्परा–डॉ.बहादुर सिंह परमार, पृ.295, प्रकाशक–आदिवासी लोककला अकादमी, भोपाल 2005 ई., पृ. 36
12. छतरपुर जिले का आधुनिक फाग साहित्य (लघुशोध परियोजना प्रतिवेदन), पृ. 40
13. छतरपुर जिले का आधुनिक फाग साहित्य (लघुशोध परियोजना प्रतिवेदन), पृ. 87
14. छतरपुर जिले का आधुनिक फाग साहित्य (लघुशोध परियोजना प्रतिवेदन), पृ. 124
15. वैदेही वन गमन–रतिभानु तिवारी 'कंज', पृ. 71, प्रकाशक–अर्चना प्रकाशन, नैगुवाँ (टीकमगढ़), 2001 ई.
16. पं. भैयालाल प्यास, अभिनन्दन ग्रन्थ परख-परखाव खण्ड, पृ. 36
17. शंकर दयाल खरे 'शंकर', रस बरसै राम, बुन्देली में, पृ. 4, प्रकाशक–चित्रांश प्रकाशन, नौगाँव (छतरपुर), म.प्र.

ईसुरी की रामायन

–डॉ. कुंजीलाल पटेल 'मनोहर'

लोककवि ईसुरी मूलतः ग्रामीण लोकभावनाओं का लोकभाषा बुन्देली में साकार चित्रण करने वाले रचनाकार हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में विन्ध्यकोकिल ईसुरी को सुरीली चौकड़ियों का रामबोला माना जाता है। आधुनिकता के दौर में भी यदाकदा ईसुरी की चौकड़ियाँ यत्र-तत्र बुन्देली फागप्रेमियों द्वारा तल्लीनतापूर्वक बड़े आदर के साथ गायी और सुनी जाती हैं। इतना ही नहीं, आपसी बातचीत के दौरान अनेक जीवन-प्रसंगों पर ईसुरी की फागें बात-बात में आज भी अधरों पर थिरक उठती हैं।

मानस के प्रणेता तुलसी की–**'कलि युग केवल नाम अधारा, सुमरि सुमरि नर उतरहिं पारा'** नामक चौपाई के आधार पर लोककवि ईसुरी मानवजीवन में रामभक्ति विषयक असंख्य बुन्देली चौकड़ियाँ रचकर लोकमानस में मानसकार से बहुत आगे निकल गये हैं। ईसुरी ने अपने जीवन के उत्तरार्द्ध में तुलसी और उनकी रामभक्ति की फलीभूत महत्ता को लोकमानस में स्थापित करने के लिए अनगिनत चौकड़ियों की रचना की। संगीत सम्राट तानसेन की रागिनी, मानसकार तुलसी की रामायन और ईसुरी की चौकड़ियाँ फागों का हमारे साहित्य और लोकसाहित्य में कोई अन्य विकल्प नहीं है। इसीलिए तो बुन्देली का प्रत्येक जनमन यही कहता सुनाई देता है–

रामायन तुलसी कही, तानसेन ज्यों राग।
सोई या कलिकाल में, कही ईसुरी फाग।।[1]

बुन्देली कवि ईसुरी गाँव की चौपाल में सन्ध्याकालीन रामायन कथा नियमित रूप से हमेशा सुना करते थे। इसलिए उनको चौपाइयों सहित सम्पूर्ण रामकथा और रामनाम की महिमा का आत्मज्ञान तथा भान हो चुका था। उस समय जनमन में रामकथा का क्या महत्त्व था? इसको लोककवि ईसुरी भली भाँति समझ चुके थे। जनमानस को रामचरित मानस से और अधिक जोड़ने के लिए ही ईसुरी अधिकांश लोगों को अधिकतर यह फाग गाकर सुनाया करते थे–

रामें लयें रागनी जीकी, लगै सुनत में नींकी।
छैऊ शास्त्र पुरान अठारा, चार वेद से झींकी।
गैरी भौत अथाँय भरी है, थाँय मिलै न ईकी।
ईसुर साँसऊँ सुरग नसैनी, रामायन तुलसी की।।[2]

बुन्देली वाचिक परम्परा में ईसुरी की रामचरित विषयक अनेक फागें लोकगायकों से संकलित करने को मिली हैं। कथाक्रम के अनुसार विश्लेषित करने पर रामजन्म से लेकर विभीषण को लंका की राजगद्दी सौंपने तक लगभग मुख्य-मुख्य प्रसंगों की फागें प्रस्तुत आलेख के माध्यम से पाठकों के सामने लाना हमारा मूल उद्देश्य है। निश्चित ही इससे ईसुरी के कृतित्व पर भक्ति की दृष्टि से

अनुशीलन करने वाले शोधार्थियों को एक नवीन दिशा मिलेगी।

अयोध्या नरेश दशरथ के महलों में चार पुत्रों के रूप में भगवान अबध बिहारी बनकर प्रकट हुए हैं। सभी देवता प्रसन्न हैं क्योंकि पृथ्वी पर भक्तों की रक्षा करने वाले, राक्षसों का दमन करने वाले, अब अयोध्या नगरी में अवतरित हो गये हैं। पूरी अयोध्या आज पूर्णतः धन्य हो गयी है। ईसुरी की रामजन्म विषयक एक फाग यही उदाहरणीय है–

महलन प्रगटे अवध बिहारी, दशरथ कुल सुतचारी।
भगतन के प्रत पालन हारे, करन धेनु रखबारी।
जनहित जीवन मूर सजीवन, दुष्ट दलन औतारी।
खेले कौशिल्या तहो गोदी, सन्तन के हितकारी।
धन्य अजुध्या भई ईसुरी, माया अजब तुमारी।।[3]

जिस समय भगवान अयोध्या में प्रगट हुए उसी समय सारे देवी-देवता, ऋषि-मुनि, नर-नारी, राजभवन में आकर जन्मोत्सव की खुशियाँ मनाने लगे। गगन से देवता फूलों की वर्षा करने लगे। ईसुरी प्रभु के जन्मोत्सव का वर्णन करते हुए कहते हैं–

सोभा का बरनों उन छन की, दशरथ राज भवन की।
देवगन रिसी सबई जुर आये, बहुयें नचत सुरन की।
नाँचत सबरे देव गगन सें, बरसा करत सुमन की।
नर नारिन की आस ईसुरी, चरन कमल बन्दन की।।[4]

एक साथ चार पुत्रों की खुशी में महलों के बाहर और भीतर नगरवासियों की भीड़ देखते ही बनती है। दान-दक्षिणा दिये जा रहे हैं, आनन्द मनाये जा रहे हैं, सोहर गाये जा रहे हैं, बाजे बजाये जा रहे हैं। पापियों के पाप से भारी हुई पृथ्वी का भार हटाने वाले अवतरित हो चुके हैं। दान-दक्षिणा के लिए राजा दशरथ सभी कुछ लुटाने के लिए इच्छाधारी नाग हो गये हैं। इन सभी का वर्णन ईसुरी की एक खड़ी फाग में देखते ही बनता है–

महलन में भीर भई भारी, जुरे नगर के नर नारी।
दान दच्छना देत सबै नृप, जैसे नाग इच्छाधारी।
भओ आनन्द अवध नगरी में, प्रभु पै सबकी बलहारी।
मंगल सोहर सुजस बधाई, बाजे बाजें सुखकारी।
हरन भये भूभार ईसुरी, रघुवंसी प्रभु औतारी।।[5]

कुछ समय बाद महामुनि विश्वामित्र अपनी यज्ञ रक्षार्थ दशरथ से राम लक्ष्मन को माँग कर अपने साथ ले जाते हैं। दोनों बालक सुसज्जित वेश में धनुष-बाण धारण किये कितने मनोहारी लगते हैं। अलंकारों से अलंकृत ईसुरी की यह चौकड़ियाँ कितनी प्रभावी लगती है, देखिए–

मुनि संग चले जायँ दोउ भाई, कृपा सिन्धु रघुराई।
जलजनैन मुखजलज गौरतम, सील सलज सुखदाई।
कटपट पीत काँछनी काछें, कर सर-चाप चढ़ाई।
असुर सँघार भगत प्रतपालन, सन्तन के सुखदाई।
मुनिवर संग लयें जात ईसुरी, मनो महा निधि पाई।।[6]

मुनि विश्वामित्र के साथ नृपपुत्रों को देखते ही राक्षसी ताड़का उन पर झपट पड़ती है। राम एक ही बाण से उसका काम तमाम कर अन्य राक्षसों को मार भगाते हैं। यज्ञ की रक्षा करते हैं। गौतम

ऋषि की अभिशापित पत्नी अहल्या का उद्धार करते हुए विश्वामित्र के साथ जनकपुरी की ओर गमन करते हैं। पूरा प्रसंग एक चौकड़िया फाग में दर्शनीय है–

मुनि संग नृप सुत दिये दिखाई, तुरत ताड़का धाई।
एक बान में प्रान हरे प्रभु, तनक न देर लगाई।
गाध सुअन की रच्छा करकें, हने दनुज समुदाई।
गौतम रिसि की नारि तारकें, पाई प्रभु बड़बाई।
करे जनकपुर गमन ईसुरी, लखन सहित रघुराई।।[7]

जनकपुर में प्रवेश करते ही विश्वामित्र के साथ दो दिव्य बालकों को देखकर राजा जनक को बड़ा आश्चर्य होता है, किन्तु महामुनि विश्वामित्र बालकों को अपने साथ होने का सम्पूर्ण वृत्तान्त बताते हैं। तब कहीं विदेहराज जनक विश्वामित्र सहित राजकुमारों के ठहरने की उपयुक्त व्यवस्था करते हैं। इस आशय का सहज और सरलतम बयान ईसुरी की यह फाग किस प्रकार करती है, देखिए–

दोइ सुत नृप दसरथ के जाये, मुनि हित भूप पठाये।
दोइ बरजोर लखत के कौमल, मार मरीच भगाये।
जासु चरनरज परसत पावन, मुनि तिय ताप नसाये।
सुनके मुनि के बचन ईसुरी, नृप ने बास कराये।।[8]

राजकुमारों का सौन्दर्य, दिव्य प्रतिभा, प्रतापी बदन, ईश्वरीस्वरूप देखकर राजा को विश्वास नहीं होता है कि ये असाधारण प्रतिभाएँ किसी राजा महाराजा की सन्तानें हो सकती हैं। ईसुरी दोनों राजकुमारों का दिव्यरूप कितनी लोकदक्षता से चित्रित करते हैं–

मुनिवर हमे ना जानों जाता, को इनके पितमाता।
चन्दन बदन कमल लोचन मृदु, मन्द मन्द मुसकाता।
सुसमा सोम साँवरे गोरे, मृदुल मोह चकराता।
छोटी उम्मर नरम कलइयाँ, धनुष वान लये हाँता।
जोड़ी जुगल देखकें ईसुर, कोटन काम लजाता।।[9]

राजा जनक दोनों राजकुमारों को, उनके रूप-रंग को, सुन्दर मुकुट-मणियों को, उनके शीलवान गुणों को, बार-बार देखकर उनके माता-पिता के भाग्य की सराहना करते हुए विश्वामित्र मुनि के पैर लगकर सुकोमल वचनों का उच्चारण किस प्रकार कर रहे हैं, ईसुरी के ही शब्दों में देखा जा सकता है–

दोउ सुत राजा जनक निहारें, सुन्दर मुकुट समारें।
स्यामल गौर सरूप देखकें, तनक दृगन नईं हारें।
सोभा शील गुनन में अगरे, बारी बैस कुमारें।
धन धन मात पिता बे इनकें, जनमें जिनके द्वारें।
मुनि के चरन जनक गहँ ईसुर, कौमल बचन उचारें।।[10]

दोनों राजकुमार गुरु विश्वामित्र की आज्ञा पाकर पूजा के निमित्त पुष्पवाटिका फूल लेने के लिए जाते हैं। वहाँ बाग के माली से वाटिका की सुन्दरता का वर्णन कर राजा जनक की प्रशंसा करते हैं। चुनिन्दा पुष्प संकलित करते हुए राम-लक्ष्मण पुष्पवाटिका में भ्रमण करते हैं। प्रस्तुत प्रसंग पर ईसुरी कहते हैं–

बागन राम-लखन दोउ आये, गुरु अनुशासन पाये।
बगिया में पूँछें माली सें, लखें फूल फुलवाये।
टोरत फूल मनोहर चुनचुन, नृप की करत बड़ाये।

तौलौ जनक सिया कों ईसुर, पूजन गौर पठाये।।[11]

पुष्पवाटिका में गौरी पूजन के लिए आते ही जानकी श्यामगौरवर्ण के दो सुन्दर, सुकोमल तेजस्वी स्वरूपों को देखते ही अपने तनमन की सुध खो बैठती हैं। लोककवि ने सीता जी की इस दशा का यथार्थ चित्रण एक रचना के माध्यम से किस प्रकार किया है, उसे साकार रूप में यहाँ देखा जा सकता है–

इनको लख-लख भई दिवानी, बोली सिया भुमानी।
गद्‌गद कण्ठ मनईं मन भाखे, भरै दृगन में पानी।
तन की सुध बिसराई जानकी, छोड़ दई कुल कानी।
मनों चित्त की पुतरी ईसुर, कीके हाँत बिकानी।।[12]

सीता की ऐसी मनोदशा का होना और पुष्पवाटिका में कुलदेवी गौरी की पूजा के निमित्त जाना तथा विधि के विधान का ऐसा संयोग विचारणीय है। सीता जी की ऐसी मनोकामना और गौरी पूजन के अवसर पर इसी को पूर्ण करना, ईसुरी की एक फाग में अवलोकनीय है–

गिरजा मनो कामना कर दे, हो प्रसन्न मन भर दे।
भरत सत्रुघन लछमन देवर, रामचन्द्र से वर दे।
दसरथ ससुर सास कौशिल्या, अवधपुरी सौ घर दे।
ईसुर प्रेम नाम की मुदरी, श्याम नगीना धर दे।।[13]

गौरी-पूजन के दौरान जानकी की मनोकामना को भावनात्मक आश्वासन, धनुषयज्ञ में सीता का मन विचलित होना, अनेक महारथियों द्वारा धनुष तक पहुँच ही न पाना, जनक का अपनी प्रतिज्ञा पर अटल रहना, सीता की सहेलियों के मन में जो है सो है और वही हुआ भी। इसीलिए ईसुरी ने इस प्रसंग को बड़े मनोयोग से अपनी एक रचना के माध्यम से इस प्रकार दर्शाया है–

दुल्हा साँवरिया रंग बारौ, देखौ सिया तुमारौ।
मन हर लेत हँसन हेरन में, रघुकल राजदुलारौ।
ऐंसौ रूप आज लौ आली, देखो कहाँ बिचारौ।
तज तो आन पिता अपने की, जै माला दै डारौ।
टोरो धनुष राम ने ईसुर, बाजो बिजै नगारौ।।[14]

धनुष भंजन के बाद नगरवासियों द्वारा बरातियों का स्वागत, मांगलिक गान, विधि-विधान से वैवाहिक कार्यक्रम, चमत्कारिक आतिशबाजी, देवताओं द्वारा पुष्पवृष्टि आदि का मनोहारी चित्रांकन रचनाकार द्वारा एक रचना में किया गया है। राम और सीता के विवाह की एक रचना यहाँ प्रस्तुत है–

ऊबें जनकराज के द्वारें, राम मौर सिरधारें।
कंचन कलस धरें सिर ठाँड़ी, मिथलापुर की नारें।
नभ से देव सुमन के गजरा, बना-बना के डारें।
टीका होत तिरलोक धनी के, बिरमा वेद उचारें।
ईसुर कान दये ना जाबें आगौनी के मारें।।[15]

रामजन्म से अभी तक सारी खुशियों के प्रसंगों के बाद राजतिलक की तैयारी चलते-चलते विधि का विधान ऐसी करवट लेता है कि राम को सर्वाधिक प्यार-दुलार करने वाली माता कैकेयी उनके चौदह वर्षीय वनवास को अंजाम देती है। लोक में माता कैकेयी की अभूतपूर्व छीछालेदर होती है। रानी की मतिहीनता को सभी कोसते हैं। इस सम्बन्ध में ईसुरी स्वयं कहते हैं–

प्रभु को कैंकई ने बन दीना, ऐंसो अपजस कीना।
अपने सुत को राज माँग लयो, ऐसी मति की हीना।
रामचन्द बनवासै निकरे, संग लक्ष्मन को लीना।
सुन बनगमन जानकी ईसुर, चरनन में चित चीना।।[16]

प्रभुराम के वनगमन से अयोध्या अनाथ हो जाती है। इसका सारा दोषारोपण माता कैकेयी पर जनता द्वारा थोपा गया है, क्योंकि सुमित्रा और कौशल्या के एकमात्र सहारे राम और लक्ष्मण को सीता सहित वनवास की विपत्तियाँ भोगने के लिए इस कठिनतम कार्य को अंजाम दिया है। इस आशय का एक फाग देखिए—

बनखौं पठै दये दोइ भइया, काये कैकई मइया।
हती सुमित्रा कौशिल्या कें, इकई एक डरइया।
संगै जनक सुता पठवा दई, बन में दैन तसइया।
ईसुर परी अवध में कारी, को है पार लगइया।।[17]

ननिहाल से आकर भरत को अयोध्या में प्रवेश करते ही प्रभु के वनवास का वृत्तान्त मालूम होता है। अयोध्या की पूर्व और बाद की सुखद और दुखद स्थिति के लिए जिम्मेदार भरत स्वयं अपनी माता को क्या-क्या कहते हैं, इसे ईसुरी ने एक रचना के माध्यम से इस प्रकार प्रकट किया है—

पूछें भरत बता दो माई, काँ गये लक्षमन भाई।
जा नगरी रमनीक लगत ती, अबना मोय सुहाई।
जा जलनी जननी भई बैरन, कपटन कुटिल कहाई।
काँ गये अवध नरेश ईसुरी, अवध में सूनी छाई।।[18]

वनवास के दौरान सीता सोने के मायावी मृग को देखकर उसकी चर्म के लिए पति से याचना करती हैं। मृग की मायावी हरकत को भगवान भी नहीं समझ पाते और धनुष-बाण सन्धान कर मृग के पीछे चल पड़ते हैं। मृग की मायावी हरकतों का वर्णन लोककवि ईसुरी अपनी चौकड़िया फाग में किस प्रकार करते हैं, यहाँ देखिए—

माया रूप मिरग नईं जानौं, राम धनुस सन्धानों।
ज्यों-ज्यों बढ़त जात आँगे हाँ, त्यौं त्यौं होत रवानों।
कउँ-कउँ छिपत अलोप होत है, कऊँ को जात दिखानौं।
ईसुर दूर गओ जब जानों, देखत देय बिलानौं।।[19]

भगवान लौटकर जब अपनी कुटिया के पास आते हैं, तब वह सब कुछ हो चुका होता है जिसकी किसी ने कभी परिकल्पना नहीं की होगी। राम के भाग्य की इस विडम्बना, व्यग्रता तथा वेचैनी का बड़ा ही संवेदनात्मक वर्णन लोककवि ने लोकशैली में चित्रित किया है। सब कुछ जानने वाले भगवान राम साधारण लौकिक मनुष्य की भाँति कुछ न जानने वाले कितने दुखी हैं, ईसुरी की एक चौकड़िया में देखते ही बनता है—

जीवन प्रान जौनकी मेरें, बेई झाँखन हम हेरे।
हिरा गयी बनखण्ड विपत में, ज्वाब ना देबें टेरें।
बिछरन पर गयी बेग सिया की, परमेसुर खौं घेरें।
भल आई की बात ईसुरी, विधना कबै निबेरें।।[20]

इधर लंका में मन्दोदरी को जैसे ही छलपूर्वक सीताहरण का पता चलता है, वैसे ही वह अपने

पति के इस कुकृत्य को धिक्कारती है। क्योंकि इतना तो मन्दोदरी भी जानती है कि सीता कोई साधारण मानवीय स्त्री नहीं है बल्कि लंका का भावी विनाश सीताहरण में ही सम्भावित है। इसीलिए वह अपने पति को समझाते हुए खुलकर स्वयं कहती है—

तुमने मोरी कईना मानीं, सीता लाये बिरानीं।
जिनकी जनक सुता मँहरानी, वे हरि अन्तरध्यानीं।
कनक कँगूर धूर में मिल हैं, लंका की रजधानीं।
लैकें मिलौ सिखावत जेऊ, मन्दोदरी सयानीं।
ईसुर उपत हात हरयानी, लाये मौत निसानी।।[21]

यहाँ मन्दोदरी द्वारा रावण को नीतिपूर्वक प्रार्थना करकर समझाना, वहाँ अशोक वाटिका में पवनपुत्र हनुमान द्वारा सीता का पता लगाना, बड़े-बड़े बलशाली राक्षसों को मारना-पीटना, बाग उजाड़ना आदि प्रसंगों को ईसुरी ने अपनी एक रचना में सफलतापूर्वक किस प्रकार चित्रित किया है, यहाँ उदाहरणीय है—

जितने हते बाग रखबारे, एक बन्दर ने मारे।
जो फल पाये भाये सो खाये, कतर-कतर कें डारे।
बाराबाट बाग कर डारो, बिरवा विरुद उखारे।
जो मारे से बचे आयकें, नृप दरबार पुकारे।
ईसुर हुकम पाय दसकंदर, अछै कुमार सिधारे।।[22]

अपने राज की इस तरह बरबादी सुनकर मन्दोदरी अभी भी रावण को समझाती है कि आपने सीता हरण कर बहुत बड़ी गलती की है। आप ईश्वर की ताकत को नहीं जानते हैं। जानबूझ कर अपने सारे लंकावासियों की मौत के कारण को छलपूर्वक लंका में लाये हैं। इसलिए भूल सुधार कर मेरी बात मानिए और उस दिन की खबर करिए जिस दिन आप स्वयं सीताहरण कर लाये थे—

चोरी लाये जानकी जिनकी, खबर करै ऊ दिन की।
ढीलो रथ लंका दरबाजें, धुजा रोप लई रनकी।
तुमहौ उनको कूरा करकट, बे है झार अगन की।
कौनउँ दिना तुमाई फिरहै, सबरी लंका भिनकी।
ईसुर कऊँ लैन नईं जानें, मौत सीस पै ठिनकी।।[23]

आगे वह और भी कहती है कि उनके एक लंगूर ने पूरी लंका में तहसनहस का ताण्डव मचा रखा है। इस कंगूरे से उस कंगूरे पर उचक-कूदकर बड़े-बड़े जोधाओं को धूरा चटा दई और अभी भी न जाने और क्या-क्या होने वाला है। इसीलिए आप मेरी बात मानकर जो मैं कहती हूँ वही कीजिए, नहीं तो आप स्वयं देख रहे हैं कि—

लंकै आओ एक लँगूरा, उचकत कोट कँगूरा।
देखत रये सुभट सब ठाँड़े, तिनै लगा दई धूरा।
जर बिध्वंस भई रजधानी, जितने जुरत जहूरा।
ईसुर वारिध बाँद करो उन, बालि पराक्रम पूरा।।[24]

इतना ही नहीं लंका को लपटों के आगोश में, लपटों के साथ लंका को ईंधन की तरह जलते हुए देखकर, मन्दोदरी रावण से कहती है कि अभी कुछ नहीं बिगड़ा है, गलती को सुधारा जा सकता है और भूल सुधारने का अभी मौका है, क्योंकि शुरुआत में ही उनके एक साधारण बन्दर ने कितना

उत्पात मचा रखा है। जिसकी हुँकारें सुन-सुन कर आपके चेहरे सूखने लगे हैं, क्योंकि मैं स्वयं देख और सुन रही हूँ–

सुनकें हनुमान की हूँकैं, राउन के मौं सूकैं।
उचट लँगूर कँगूरन चढ़ गये, चरन सिया के छूकैं।
कोटन अगन पवन बरयानें, लंकै उठै भभूकें।
ईसुर कात होई जानैं नौ, राज विभीसन जूकें।।[25]

लंका में इतना अनर्थ होने के बाद भी मन्दोदरी अपने पति को समझाती है कि प्राणनाथ इन सारे अनर्थों का मूल कारण केवल सीताहरण ही है। इसलिए आप अपने पराक्रम को भूल कर, अहम का परित्याग कर, सीतापति से समझौता कर, उनकी सीता उन्हें वापस कर, सबको विनाश के मुख में जाने से बचाने में ही सार है। अतः सीताहरण जैसे गलत कार्य को अपनी प्रतिष्ठा से मत जोड़िए। मन्दोदरी के अनुसार ईसुरी कहते हैं–

प्रीतम परनारी कौ हरबौ, तुम राउन न गरबौ।
तुमने चाहो जगत मात को, पापन नियत नजरबौ।
उस नारी संग नारायन है, सागर पार उतरबौ।
मई देखौ भइया कुलघाती, तकैं मारबौ मरबौ।
सब सुन आये खुदई ईसुरी, राज विभीसन करबौ।।[26]

भाई विभीषण और पत्नी मन्दोदरी के लाख समझाने के बाद भी रावण अपनी घमण्ड नीति पर अटल है। वह अपने जीते जी सीता और लंका को अपने अधीन बनाये रखने का अहम अभी भी पाले हुए है। अपने जोधाओं के पराक्रमी बल का बखान कर-कर अभी भी वह यही कह रहा है–

लंका मोरे जियत न पाहैं, लरबै रघुबर आहैं।
मोरे बड़े-बड़े सब जोधा, मार-मार कें खाहैं।
मेघनाद सौ बेटा मौरौ, कुंभकरन भ्राता हैं।
ईसुर जुद्धभूमि से तुरतईं, उनको मार भगाहैं।।[27]

कोई समझौता न हो पाने से अब दोनों दलों में युद्ध की पूरी तैयारी हो चुकी है। युद्ध के बाजे बजने लगे हैं। योद्धाओं के साथ रावण महाराज भी गर्जना कर-कर संग्राम के लिए सजने लगे हैं। अपनी-अपनी युद्ध की नीतियाँ तय होने लगी हैं। सभी ने अपने-अपने मूड-मिजाज तरोताजा कर लिये हैं। इस प्रसंग पर एक चौकड़िया के माध्यम से ईसुरी कहते हैं–

बाजन लगे जुझारू बाजे, राउन रन को साजे।
अपने जोधन को समझा रये, संग में खाये खाजे।
नौन हरामी होऊ ना करियौ, काल सीस पै गाजे।
भूप भुवन से गमनें ईसुर, मिलके सबई गराजे।।[28]

दोनों दलों में भयंकर युद्ध होता है। भाई लक्ष्मण पर मेघनाद शक्तिबाण मार कर उन्हें मूर्छित कर धराशायी कर देता है। रावणदल में खुशियों का और रामादल में शोक का माहौल दिखाई देता है। भगवान राम लक्ष्मण के मूर्छित होने पर बिलख-बिलख कर विलाप करते हैं। ईसुरी की यह चौकड़िया यहाँ प्रस्तुत है–

रोबैं लछमन को रघुराई, बिपत कटाउन भाई।
मेघनाद ने शक्ति हन दई, तन में गयी समाई।

भये आसकत मूरछा छाई, लोथ धरन में पाई।
सब कोऊ कै है नारी पाछें, भइया बसत गमाई।
ईसुर लौट अजुध्यै जैबी, करबी कौन बड़ाई।।[29]

ईसुरी ने लंकासमर पर अनेक फागों की रचना की है। लक्ष्मण का मूर्छित होना राम को सर्वाधिक व्यथित करने वाला है। वे कहते हैं कि लक्ष्मण के बारे में पूछे जाने पर मैं लोगों को क्या जवाब दूँगा। एक अन्य फाग में प्रभुराम की मनोव्यथा विचारणीय है–

रौबें बिलख-बिलख रघुराई, बोलौ लक्षमन भाई।
सुख दैबे संगै पठवा दये, हरस सुमित्रा माई।
मेरे हेत बरस चउदा संग, बिपत विपन मजयाई।
ईसुर रिपु कौ बैद बता गओ, एक अपौंच दबाई।।[30]

बैद सुखेन के बताये अनुसार हनुमान जी के अथक प्रयास से लक्ष्मण सही हो जाते हैं और युद्ध में वे मेघनाद का काम तमाम कर देते हैं। सुलोचना को मेघनाद के वध की खबर मिलते ही वह व्यथित होकर रावण की राजधानी छोड़कर रामादल में जाने की तैयारी कर, पालकी में बैठकर चली जाती है। ईसुरी की एक फाग इस सम्बन्ध में क्या कहती है, देखिए–

सिर खौं चली सुलोचन रानी, तज राउन रजधानी।
जैसे बिना जीव की देहिया, डरी नहीं बिन पानी।
जैसे बिना पुरुष की नारी, नाहक सब जिंदगानी।
रामा दल में पौंच ईसुरी, पूरन कर दई बानी।।[31]

वैदिक संस्कृति में सतीप्रथा सतीत्व की रक्षा करने वाला धर्म है। मेघनाद वध के बाद सुलोचना सती का प्रसंग विश्वविख्यात है। ईसुरी ने सती प्रथा पर अनेक चौपड़िया फागें रची हैं। सुलोचना सती की एक फाग जनमानस में आज भी सर्वत्र सुनने को मिलती है। ईसुरी की पूरी फाग इस प्रकार है–

सत्ती भई सुलोचना रानी, मेघनाद संग स्यानी।
कटी भुजा ने कलम पकर कें, कई कुरखेत कहानी।
सिर दओ सौंप प्रीत अन्तस की, पारब्रह्म पहचानी।
इन्द्रजीत संग जरी ईसुरी, राउन की रजधानी।।[32]

लंका में राक्षसराज रावण के सभी भाई-बन्धुओं का अन्त हो जाने के बाद अन्त में लंकेश स्वयं संग्राम की बागडोर सम्हालते हैं। दोनों दलों में जमकर युद्ध होता है। ग्रामीण लोक में भी इस संग्राम के सम्बन्ध में अनेक लोकगाथाएँ और लोककथाएँ कही जाती हैं। लंका समर की ईसुरी रचित एक फाग यहाँ प्रस्तुत है–

राउन बीस भुजा दस सिरके, डीलडौल महि गिरके।
समर चले सर-सर सर छूटे, सर दिकपालन खिरके।
बाजे बजे अनेकन सुरके, लंकै अमर असुर के।
गरजें दै दै ताल ईसुरी, दल दानव रघुवर के।।[33]

रावण की लंका में सबका अन्त हो गया। शिवभक्त रावण ने कभी भूल कर भी राम शब्द का उच्चारण नहीं किया। बह बहुत बड़ा घमण्डी था। सभी लोकों में उसकी तूती बोलती थी। पराक्रमी योद्धा था। उसके इशारे पर कंकड़ नाचते थे। लेकिन उसका भी अन्त हुआ। ईसुरी की एक फाग और पढ़िये–

रॉउन 'राम' ना मौं से बाचे, अंभानी ते साँचे।

जिनके जियत जिमीं के ऊपर, नजरन कंकरा नाँचे।
जितै राम कौ जोग जुरत तो, ते आखर नयी बाँचे।
सूरबीर ने जगत पति सें, मुफत ईर्खा काँचे।
ईसुर और देव नईं ध्याये, सेवा कौं सिब साँचे।।[34]

लंकासमर में भगवान की विजय होने से लोक-लोकों में उनकी जय-जयकार होने लगी। विभीषण को उनकी शरणागति का अमरफल प्राप्त हुआ है। वहीं लंका का उत्तराधिकारी स्वयं भगवान ने राजतिलक कर बना दिया। लोककवि ईसुरी प्रभु की इस प्रभुता को स्वयं इस प्रकार व्यक्त करते हैं–

जिनसे लंक बिभीसन पाई, धन्य-धन्य रघुराई।
सोने खुरी-फुरी स्वामी वन, बिधि दई बनी बनाई।
रतनन जड़ी-मड़ी कंचन की, सेवा कौं सिबकाई।
भजलौ राम नाम को ईसुर, जो चाहौ प्रभुताई।।[35]

ईसुरी अपनी एक फाग में कहते हैं कि अगर भगवान राम वन ही नहीं जाते, मुनियों की रक्षा नहीं करते, राक्षसों का विनाश नहीं करते, तो संसार में देवरूप में उनकी इतनी प्रतिष्ठा नहीं होती। हनुमान जी को इतना महत्त्व प्राप्त नहीं होता, रामराज्य की परिकल्पना का जन्म ही नहीं होता। पारलौकिक विभूतियों को लौकिक कष्ट भोगने की शक्ति जनमानस को भगवान के इसी लौकिक चरित्र से प्राप्त होती है। रचनाकार की एक रचना यहाँ उदाहरणीय लगती है–

रघुवर जो बन को ना जाते, गुनी कौन गुन गाते।
मरते नहीं असुर लंका के, सिये ना लंक पठाते।
हनुमान से जोधा जग में, कैसें बड़े कहाते।
ईसुर सन्त रिसी मुनि जन सब, कैसे कें सुख पाते।।[36]

संसार में जो व्यक्ति भगवान राम के गुणों को गाकर उनकी भक्ति करता है, वही व्यक्ति गुणी होकर गुणवान कहलाता है। उसी को ससार के सारे सुखों के बाद अन्त में मोक्ष की प्राप्ति होती है। जन्म-जन्मान्तर के बन्धनों से मुक्ति मिलती है। लेकिन क्यों और कैसे? ईसुरी की वक्रोतिपरक एक फाग में इसका अन्वेषण किया जा सकता है–

जो कोऊ राम नाम गुन गाबै, सोइ गुनवान कहाबै।
दस और चार भुअन चउदा में, आठ कौ भाग लगाबै।
बाँकी सेस बचे धन राखै, तामें ध्यान लगाबै।
ईसुर ऐसी जुगत करौ कै, सेस सुन्न आ जाबै।।[37]

आज से ढाई तीन दशक पूर्व 'बुन्देली फाग काव्य का अनुशीलन' विषयक शोध प्रबन्ध की सामग्री हेतु ग्रामीण क्षेत्रों की शोधयात्रा के दौरान लोकगायकों से जो फाग रचनाएँ संकलित हो सकीं, उन्हीं में से कुछ प्रमुख फागों को उपर्युक्त प्रस्तुति के आधार पर हम कह सकते हैं कि लोककवि ईसुरी केवल श्रृंगारी ही नहीं, बल्कि वे सच्चे अर्थों में उच्चकोटि के रामभक्त भी थे। अभी तक अन्वेषकों ने ईसुरी के भक्तिपक्ष की ओर बिल्कुल ध्यान ही नहीं दिया है। अतः ईसुरी की रचनाधर्मिता का नये सिरे से पुनर्मूल्यांकन होना चाहिए। मेरे अनुसार तो ईसुरी की रामचरित विषयक फागों का मुख्य निष्कर्ष यही निकलता है। उनकी फागों से लोकमानस को जो प्रेरणा मिलती है, उसका सार सन्देश भी यही है–

रामकथा हरती बिथा, करती बेड़ा पार।
सुनियौ गुनियौ गाइयौ, रामकथा सुखसार।।[38]

सन्दर्भ

1. राजाराम बढ़ई (रजऊ), बसारी, छतरपुर
2. बिन्द्रवन यादव, ढोंणन, छतरपुर
3. भूरे यादव, बसारी, छतरपुर
4. रतिराम नामदेव, पारवा, छतरपुर
5. वीरेन्द्र निर्झर, भटीपुरा, महोबा
6. नर्मदा प्रसाद गुप्त, शुक्लाना छतरपुर
7. मनीराम आहिरवार, बसारी, छतरपुर
8. जूजू छिकारिया, सटई, छतरपुर
9. बिन्द्रावन यादव, ढोंणन, छतरपुर
10. घुरके अहिरवार, बसारी, छतरपुर
11. रल्ली अहिरवार, बसारी, छतरपुर
12. सन्तशरण नामदेव, नौगाँव, छतरपुर
13. गनेश प्रसाद सोनी, बसारी, छतरपुर
14. विन्द्रावन शुक्ल, कदारी, छतरपुर
15. राधिका प्रसाद खरे, झमटुली, छतरपुर
16. बन्दी नामदेव, वसारी, छतरपुर
17. राजाराम बढ़ई (रजऊ), बसारी, छतरपुर
18. खिलन नामदेव, बसारी, छतरपुर
19. दंगल सिंह, छतरपुर
20. शिवदयाल पटेल, बसारी, छतरपुर
21. नारायणदास पटेल, नैगुवां छतरपुर
22. नत्थू अहिखार, कतरवारा, छतरपुर
23. हरिराम पटेल, बूढ़ा, छतरपुर
24. दमरू खल्ला, छतरपुर
25. कलू बिलवार, बसारी, छतरपुर
26. वीरेन्द्र निर्झर, भटीपुरा, महोबा
27. किशोरीलाल लल्ला, हटवारा, छतरपुर
28. सरजू प्रसाद खरे, बसारी, छतरपुर
29. शिवभूषण सिंह गौतम, बमीठा, छतरपुर
30. हरि रैकवार, भियांताल, छतरपुर
31. प्रमोद कवि, बमनी, छतरपुर
32. श्यामले दर्जी, बसारी छतरपुर
33. कन्हैयालाल साहू, बसारी, छतरपुर
34. गढ़ू अहिरवार श्यामरी, छतरपुर
35. कुन्नाई अहिरवार, कर्री, छतरपुर
36. श्रीनिवास शुक्ल, शुक्लाना, छतरपुर
37. खेत सिंह राकेश, कुलपहाड़, महोबा
38. राधेश्याम शुक्ल, पहरा, छतरपुर

ईसुरी रचित बुन्देली रामकथा

–राजीव नामदेव 'राना लिधौरी'

बुन्देली बोली के सबसे अधिक लोकप्रिय लोककवि ईसुरी ने अपनी फागों में रामकथा का बहुत ही सुन्दर ढंग से वर्णन किया है। आज भी ईसुरी की इन फागों को ग्रामीण क्षेत्रों में खूब गाया जाता है। ये फागें बहुत लोकप्रिय भी हैं। ये हैं रामायण के महत्त्व एवं रामायण से सम्बन्धित घटनाओं को मात्र चार या पाँच पंक्तियों जिन्हें हम चौकड़ियाँ या पचकड़ियाँ भी कहते हैं। काव्य की इस विशिष्ट शैली को बुन्देलखण्ड एवं बुन्देली में 'फाग' कहा जाता है। ईसुरी ने बहुत ही सुन्दर ढंग से फागों को प्रदर्शित किया है। यहाँ पर हम आलेख विस्तार अधिक न हो जाए इसलिए कुछ प्रमुख अवसरों पर लिखी गयी ईसुरी की कुछ प्रमुख फागों का ही उल्लेख कर रहे हैं। रामायण के महत्त्व को दर्शाती ये चार पंक्तियों की 'फाग' द्रष्टव्य है–

रामें लयें रागनी जी की, लगे सुनत में नीकी।
छैउ सास्त्र पुरान अठारा चार बेद सों झींकी।।
गहरी बहुत अथाह भरी है थाह मिलै न ई की।
'ईसुर' साँसउ सुरग नसैनी, रामायन तुलसी की।।[1]

भगवान श्री राम के जन्मकथा का वर्णन करती ईसुरी की ये फाग–

जग में प्रगटे अबध बिहारी दसरथ भुबन मँझारी।
मुन, दुज, धैन, हेतियक तिनके, करै सदा रखबारी।।
जन हित जीवन मूर जगत-पत दुष्ट दलन औतारी।
खेलें गोद कौशल्या जू की, सन्तन के हित्कारी।।
धन्न अजुध्या नगरी 'ईसुर' माया अजब पसारी।।[2]

महर्षि विश्वामित्र जी जब राजा दशरथ के पास राक्षसों के भय से पीड़ित होकर श्री राम व लक्ष्मण को माँगने गये और अपने साथ ले जाने के लिए कहते हैं, तब उस समय का बड़ा ही मार्मिक चित्रण अपनी फाग में ईसुरी ने इस प्रकार किया है–

दुइ सुत नृप दसरथ के जाये मुनहित भूप पठाये।
है बरजोर लखत के कोमल मारीचहीं भगाये।।
जासु चरन रज परसत पावन, मुन तिय पाप नसाये।
भू के भार टारबे कारन, रघुवंशी सुत आये।।
मनु के वचन सुनै जब 'ईसुर' नृप नै वास कराये।।[3]

राक्षसी ताड़का-वध एवं गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या का उद्धार कर जनकपुरी पहुँचने का वर्णन

ईसुरी ने इस प्रकार किया–

हरि मुनवर दये दिखाई, लखत ताड़का धाई।
एक बान से प्रान हने हैं, तनक न देर लगाई।।
गाध सुबन की रक्षा करकैं, हने दनुज समुदाई।
गौतम रिष की नार तारकैं, पाई प्रभु बड़ाई।
गवन जनकपुर करो 'ईसुरी' लखन सहित रघुराई।।[4]

पुष्प वाटिका में पुष्प चयन के समय श्री राम और लक्ष्मण दोनों भाइयों के मनोरम दृश्य के वर्णन में ईसुरी कहते हैं–

बागै राम लखन दुइ आये, गुरु अनुसाशन पाये।
बाग समीप पूँछे माली से, लखै बाग फुलबाये।।
टोरत पुष्प मनोहर सुन्दर, नृप की करत बड़ाये।
भिरमन करत वाटिका भीतर, लछमन बचन सुनाये।।
तौ लौ जनक नन्दनी 'ईसुर' पूजा गौर पठाये।।[5]

सीताजी के स्वयंवर के लिए महाराजा जनक द्वारा विभिन्न राजाओं को निमन्त्रण, प्रतिज्ञा तथा स्वयंवर की तैयारी के विषय में ईसुरी अपनी फाग में लिखते हैं–

जिन खाँ ब्याई जानकी जाने, शुभु शरासन तानें।
भरन लगीं कंचन की मंचें, झरन लगे मैदाने।।
समाचार लिख दये नृपति नै, न्यौते करे रमाने।
ढुकन लगे महिपाल 'ईसुरी', बाजन लगे सेहाने।।[6]

जनकपुरी में द्वारचार का मनोहर चित्रण करते हुए ईसुरी अपनी फाग में कहते हैं–

ऊबें नृपत जनक कै द्वारैं राम मोर सिर धारैं।
कंचन कलस लयँ सबरी ठाँडी, मिथलापुर की नारैं।।
नब से लेत सुमन के गजरा, बना-बना के डारे।
टीका होत त्रिलोक धनी कौ, बिरमा बेद उचारै।।
'ईसुर' कान दऔ ना जाबे, आगोनी के मारे।।[7]

सीता-श्रीराम के विवाह के पश्चात् राजतिलक की तैयारी देख, मन्थरा की बात मानते हुए रानी कैकेयी ने राजा दशरथ से अपने दो वरदान माँगे, तब उस समय राजा दशरथ की मनोदशा का बहुत ही मार्मिक वर्णन ईसुरी ने अपनी फाग में इस प्रकार किया है–

राजा राज भरत जू पावै, रामचन्द्र बन जावें।
कैकई बैठी कोप भवन में, जौ बरदान मँगावे।।
करदो अवधि अवध के भीतर, चौदईं बरसैं आवे।
आगें कुआँ दिखात 'ईसुरी', पाछें बेर दिखावें।।[8]

श्री राम के वनगमन से उनके वियोग में महाराजा दशरथ द्वारा प्राण त्यागने तथा भरत द्वारा माँ से कारण पूछने का व माँ-बेटे के संवाद का वर्णन इस फाग में किया है–

पूछै भरत बता दै माई, काँ चल गये रघुराई।
काँ गयी जनक सुता महारानी, काँ गये लक्ष्मन भाई।।
जा बसती रमनीक लगत ती, अब ना मोय सुहाई।

जा जलनी जननी भई बैरिन, कपटन कुटिल कहाई।।
कौं गये अबध नरेश 'ईसुरी', अबध में सूनी छाई।।[9]

श्री राम का मृग के पीछे भागना लक्ष्मण रेखा तथा मायावी रावण द्वारा सीता हरण पर ईसुरी ने लिखा है–

हो गऔ हरन जानकी जी कौ, चारौ कौन किसी को।
खेंचत गये धनुष की रेखा, जी के बाहर झींकौ।।
कात कुडौल काल बस मइयाँ, लगौ राबने नीकौ।
ढूँड़न चले गये लछमन जू, बाट करौ है कीकौ।।
'ईसुर' अशुभ भयो दसकन्दर, धरतन रथ पर छींकौ।।[10]

मन्दोदरी रावण को समझाते हुए कहती है–

तुमने मोरी कई न मानी, सीता ल्याये बिरानी।
जिनकी जनकसुता रानी हैं, वे हर अन्तरध्यानी।।
हेम कँगूर धूल में मिल जें, लंका की रजधानी।
लै के मिलौ सिकाउत जेऊ, मन्दोदरी सयानी।।
'ईसुर' जुद्ध जुरे पै तुरतइँ, लंक विभीषन पाहैं।।[11]

श्री हनुमान के लंका दहन पर ईसुरी लिखते हैं–

सुनकें हनुमान की हूकैं, राउन के मौं सूकैं।
उचट लंगूर कंगूरन चढ़ गये, चरन सिया के छूकैं।।
कोटन अगन-पलन भइ ठाँड़ी, लकें उठै भभूकैं।
'ईसुर' कात होत जोई जाने, राज विभीषन जू कैं।।[12]

युद्ध के शुरू होने का वर्णन करते हुए कवि ईसुरी ने लिखते हैं–

बाजन लगे जुझाऊबाजे राउन रन खों साजे।
सूरन खो समजारय संग में, सुख में खाये खाजे।।
नौन की चाल-चालना दइयों काल शीश पै गाजे।
लरे न कवऊँ मोरचा खा गये असुरन के सर माँजे।।
भूप भुअन सै गमने 'ईसुर' हैं गिर गये शरब गराजे।।[13]

सुलोचना के सती होने का वर्णन कवि ईसुरी इस प्रकार करते हैं–

सती भई सुलोचना रानी, मेघनाद संग स्यानी।
कटी भुजा ने कलम पकर कें, कई कुरखेत कहानी।।
चढ़ बिमान पै चली राम नों सुमरत सारंगपानी।
सिर दऔ सौंप प्रीत अन्तस की, पारब्रह्म पहिचानी।।
इन्द्रजीत संग जरी 'इसुरी', रावन की रजधानी।।[14]

रावण के वध व विभीषण के राजतिलक पर कवि ईसुरी कहते हैं–

जिनसे लंक विभीषण पाई धन्य-धन्य रघुराई।
सोने पलँग फली स्वामी खाँ, बिधि दई बनी बनाई।।
जटल रासि लगी कंचन को, सेवन खाँ सेवकाई।
घूमन लगे निशान नोबदे, सुख संवाद सुनाई।।
भज लेउ राम नाम इक 'इसुर' ऐसी होत कमाई।।15

कवि ईसुरी ने सरल एवं आम बोलचाल की बोली बुन्देली में अपने काव्य की विशिष्ट शैली 'फाग' में रामकथा को रचकर उसे जनमानस तक पहुँचाया है। समूचे बुन्देलखण्ड में ईसुरी की ये फागें प्रत्येक गाँव में आज भी उतनी ही लोकप्रिय हैं, जितनी पहले थीं, तथा बहुत ही संगीतमय कर्णप्रिय आवाज में गायी जाती हैं, जितनी उस समय गायी जाती थीं। अपनी फागों के माध्यम से कवि ईसुरी अमर हो गये। उनकी प्रसिद्धि आज भी उतनी ही है जितनी पहले हुआ करती थी। ईसुरी बुन्देली के सबसे ज्यादा लोकप्रिय कवि के रूप में आज भी जाने जाते हैं।

सन्दर्भ

1. सं.—डॉ. लोकेन्द्र सिंह नागर—'ईसुरी फाग साहित्य', प्रकाशक—आदिवासी लोक कला अकादमी, म.प्र. संस्कृति परिषद, भोपाल, पृ. 346-47
2. वही, पृ. 347
3. वही, पृ. 350
4. वही, पृ. 350
5. वही, पृ. 351
6. सं—गौरी शंकर द्विवेदी 'शंकर'—'ईसुरी प्रकाश', प्रकाशक—मानस मन्दिर, जबलपुर (म.प्र.), पृ. 02
7. सं—डॉ. लोकेन्द्र सिंह नागर—'ईसुरी फाग साहित्य', प्रकाशक—आदिवासी लोक कला अकादमी, म.प्र. संस्कृति परिषद, भोपाल, पृ. 355
8. सं—गौरी शंकर द्विवेदी 'शंकर'—'ईसुरी प्रकाश', प्रकाशक—मानस मन्दिर, जबलपुर म.प्र.), पृ. 02
9. सं—डॉ. लोकेन्द्र सिंह नागर—'ईसुरी फाग साहित्य', प्रकाशक—आदिवासी लोक कला अकादमी, म.प्र. संस्कृति परिषद, भोपाल, पृ. 356-57
10. सं—गौरी शंकर द्विवेदी 'शंकर'—'ईसुरी प्रकाश', प्रकाशक—मानस मन्दिर, जबलपुर (म.प्र.), पृ. 03
11. सं—गौरी शंकर द्विवेदी 'शंकर'—'ईसुरी प्रकाश', प्रकाशक—मानस मन्दिर, जबलपुर (म.प्र.), पृ. 04
12. सं.—डॉ. लोकेन्द्र सिंह नागर—'ईसुरी फाग साहित्य', प्रकाशक—आदिवासी लोक कला अकादमी, म.प्र. संस्कृति परिषद, भोपाल, पृ. 359
13. सं—डॉ. लोकेन्द्र सिंह नागर—'ईसुरी फाग साहित्य', प्रकशक—आदिवासी लोक कला अकादमी, म.प्र. संस्कृति परिषद, भोपाल, पृ. 361-62
14. सं—गौरी शंकर द्विवेदी 'शंकर'—'ईसुरी प्रकाश', प्रकाशक—मानस मन्दिर, जबलपुर (म.प्र.), पृ. 05
15. सं—गौरी शंकर द्विवेदी 'शंकर'—'ईसुरी प्रकाश', प्रकाशक—मानस मन्दिर, जबलपुर (म.प्र.), पृ. 05

श्री राम का चित्रकूट वास

—आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल

महर्षि भरद्वाज ने श्री राम से प्रयाग की महिमा वर्णन कर उनसे आग्रह किया कि वे प्रयाग में वास करें। प्रयाग का महत्त्व श्री राम समझते थे, पर वे यह भी जानते थे कि यहाँ ऋषिवर भरद्वाज का विशाल आश्रम है। महर्षि के गुरुकुल में दश सहस्र शिक्षार्थी अध्ययन करते हैं। प्रयाग मेरे नगर और जनपद के लोगों के लिए निकट है। मिलने-जुलने वाले लोग यहाँ आएँगे ही। वनवासी को तो जनपद की चहल पहल से दूर एकान्त में रहना ही उपयुक्त है; अतः उन्होंने ऋषि भरद्वाज से अपनी इच्छा के अनुकूल स्थल की आकांक्षा व्यक्त की—

एकान्ते पश्य भगवन्नाश्रम स्थानमुत्तमम्।
रमते यत्र वैदेही सुखार्हा जनकात्मजा।।

(अयो. 26)

महर्षि भरद्वाज ने श्री राम का अभिप्राय समझ लिया। श्री राम के मन में जिस सुख की कामना थी, उसके लिए चित्रकूट की ओर संकेत किया:—

दशक्रोश इतस्तात गिरिर्यस्मिन् निवस्यसि।
महर्षि सेवितः पुण्यः पर्वतः शुभ दर्शनः।।28।।
यावता चित्रकूटस्य नरः शृङ्ग्याणि अवेक्षते।
कल्याणानि समाधत्ते न पाप कुरुते मनः।।30।।

ऋषि ने स्पष्ट किया कि गंगाजमुना के संगम से दशकोश की दूरी पर सव्य दक्षिण दिशा में चित्रकूट पर्वत है। आज प्रयाग से ठीक इसी दूरी पर सिसा नाम का स्थान है। यहाँ तमसा और गंगा का संगम होता है। रामायण में महर्षि वाल्मीकि का जो तपोवन बताया गया है, वह यही है। वहाँ कहा है:—

तमसा तीरं जाह्नव्यास्त्वदूरतः (वा.का. 2/3)

यहीं से 'भेजा की पहरी' नाम की शृंखला प्रारम्भ होती है जो चित्रकूट और नर्मदा तट तक फैली है। तमसा नदी यहीं गंगा से मिलती है। यहीं पास में स्थित 'पनासा' नाम के गाँव की पहचान वाल्मीकि कालीन 'पर्णशाला' के रूप में की जाती है। (द्रष्टव्य सागरिका 26.2 वि.सं. 2045) यही है वाल्मीक का तपोवन। यहाँ से आगे है 'चित्रकूट'। 'चित्रकूट जिसके लिए श्रीराम सीता माँ से कहते हैं कि देखो यह चित्रकूट है—'चित्रकूटमिमं पश्य प्रवृद्ध शिखरं गिरिं' (अयो. 56/10)। इसी चित्रकूट में श्री राम और भगवती सीता के लिए लक्ष्मण ने कुटी का निर्माण किया था, जिसमें भगवान राम और भगवती सीता ने वास्तुपूजन कर प्रवेश किया था। यहीं है माल्यवती नदी। यहाँ श्री राम नगर

से दूर वन में आने के कष्ट भूल कर, आनन्दित हुए थे। 'ननन्द हृष्टो मृगपक्षिजुष्टां, जेहो च दुःखं पुरविप्रवासात्। (अयो॰ 56/35) बड़ी महिमा है इस चित्रकूट की। श्री गोस्वामी तुलसीदास कहते हैं–

'जहँ जनमे जग-जनक जगतपति, बिधि हरिहर परिहर प्रपंच छलु।
सकृत प्रबेस करत जेहि आस्रम, विगत विषाद भये पारथ नलु।। (विनय 34)

विन्ध्याचल बहुत प्रसन्न है, उसके मन में सुख नहीं समापा रहा है। बिना परिश्रम के उसे श्री राम के वास का गौरव मिला है। स्थिति यह है कि–

"बिबिध बिपिन जहँ लगि जगमाहीं। देखि राम बनु सकल सिहाहीं।।3।।
सुरसरि सरसइ दिनकर कन्या। मेकल सुता गोदावरि धन्या।।4।।
सब सर सिन्धु नदीं नद नाना। मन्दाकिनि कर करहिं बखाना।।5।।
उदय-अस्त-गिरि अरु कैलासू। मंदर मेरु सकल सुख वासू।।6।।
सैल हिमाचल आदिक जेते। चित्रकूट जसु गावहिं तेते।।7।।
बिन्ध मुदित मन सुखु न समायी। श्रम बिनु बिपुल बड़ाई पायी।।9।।

विन्ध्य धन्य है, क्योंकि उसके आँगन में श्री राम रहने आये हैं। राज-लक्ष्मी को जिन्होंने स्वेच्छा छोड़ा है, जो विग्रहवान् धर्म हैं, वे श्री राम वनवास में विन्ध्य के आश्रय में आये हैं। कविकुल गुरु कालिदास ने रावण विजय के बाद पुष्पक विमान से अयोध्या आते हुए श्री राम को चित्रित किया है। श्रीराम देवी सीता से कहते हैं कि, 'हे सीते! यह चित्रकूट पर्वत है। इस पर्वत पर मेरी टकटकी लगी है। यह मस्त साँड़ के कन्धे (ककुद्म) के समान है। यह झरनों के शब्द को शब्दायमान करती गुफा मानो इसका मुख है। इसके शिखर पर लगी हुई मेघमाला मानो इसके सींगों पर लगी गीली मिट्टी है–

'धारास्वनोद्गारिदरीमुखोऽसौ शृंगाग्र लग्नाम्बुददव प्रपंऽडक।
वध्नाति मे वन्धुरगात्रि चक्षुर्दृप्तः ककुद्मानिव चित्रकूट।।

(रघु. 13/47)

चित्रकूट पर्वत पर झरनों की जलधाराएँ बह रही हैं। चित्रकूट के शिखरों पर श्यामल मेघ लिपटे हैं। ऐसा यह वृषभ रूप चित्रकूट साक्षात् शिव का वाहन जैसा है, तभी तो कालिदास की दृष्टि इस पर्वत को भी धर्म रूप में देख रही है क्योंकि शिव का वाहन तो धर्म-रूप ही हो सकता है (कुमार 1/56, 7/31)। वे कहते हैं–

'एषा प्रसन्नस्तिमितप्रवाहा सरिद्विदूरान्तर भावतन्वी।
मन्दाकिनी भाति नगोपकण्ठे मुक्तावली कण्ठगतेव भूमेः।।48।।
अत्राभिषेकाय तपोधनानां सप्तर्षिहस्तोद्धृत हेमपद्मम्।
प्रवर्तयामास किलानुसूया त्रिस्रोतसंत्र्यम्बक मौलिमालाम्।। (13/51)
अनिग्रहत्रासविनीतसत्वम् अपुष्पलिंगात्फलबन्धिवृक्षम्।।
वनं तपः साधनमेतदत्रेराविष्कृतोदग्रतर प्रभावम्।। (13/50)

कालिदास के इस वर्णन में ऋप्क्ष पर्वत से उत्पन्न पयस्विनी, मन्दाकिनी, चित्रकूट एवं अत्रि आश्रम का वर्णन होने से यह स्पष्ट होता है कि यह चित्रकूट बुन्देलखण्ड में ही स्थित है।

चित्रकूट के विषय में, अपनी सहधर्मिणी सीता से बतियाते हुए श्री राम कहते हैं कि, 'मुझे राज्य के जाने का, अपने बन्धु-बान्धवों से विलग होने का कोई कष्ट नहीं होता है, जब इस चित्रकूट के रमणीय पर्वत को देखता हूँ। (अयो. 94/3)। 'हे वैदेही यह मेरे मन को, वाणी को और शरीर को

अति प्रिय लगता है।' (अयो. 94/18)। चित्रकूट की शोभा कुवेर की नगरी अलका, वस्वौक, धारा, इन्द्रपुरी व अमरावती की शोभा को भी तिरस्कृत करती है। (अयो. 94/26)

चित्रकूट को श्रीराम अयोध्या से श्रेष्ठतर मानते हैं। (अयो. 95/12) वे तो ऐसे रम गये हैं इस विन्ध्य भाग चित्रकूट में, कि उन्हें न अयोध्या जाने की इच्छा है, न अवध राज्य पाने की स्पृहा। वे यहाँ मन्दाकिनी में स्नान और मधुमूल फलाशन से परिपूर्ण तृप्त हैं। (अयो. 95/17) भला विन्ध्य आनन्दित क्यों न हो? उसे आत्मगौरव का अनुभव क्यों न हो? जब प्रभु उसके आँगन में सब प्रकार के सुख का उपयोग कर तृप्ति का अनुभव कर रहे हों, फिर विन्ध्य क्यों न आनन्द मनाए? इसके ही आँगन में प्रभु ने 'भरत की भक्ति' को सभा मध्य स्वीकारा है। सन्त प्रवर गोस्वामी तुलसीदास ने 'बन्धु हित चित्रकूटाद्रिचारी' भरत को 'खड्गधाराव्रती, प्रथमरेखाप्रकट, निरुपाधि भक्तिभाव यन्त्रित पादुका नृप-सचिव' और 'धर्मधीरधुर धीर वरवीर' कहा है (विनय. 39)। आज चित्रकूट परिसर में ही हैं—कामदगिरि (1.5 मी.) सीता रसुइया (रसोई), हनुमान धारा, चरन पादुका, स्फटिक शिला, अत्रि आश्रम, गुप्त गोदावरी, भरत कूप, राम सैय्या।

महर्षि वाल्मीकि के अनुसार भी अत्रि का आश्रम चित्रकूट के निकट ही मन्दाकिनी के किनारे था। कालिदास के अनुसार भी चित्रकूट के निकट मन्दाकिनी और अत्रि आश्रम था (रघु. 13/50, 51)। वे कहते हैं कि, 'अनसूया के प्रयत्न से मन्दाकिनी प्रवाहित हुई थी' (रघु. 13/51)। इसी आश्रम की याद करते हुए बाबा तुलसी कहते हैंः—

'अब चित चेत चित्रकूटहिं चलु'

ब्रह्मा-विष्णु-महेश त्रिदेवों ने माता अनसूया की तपस्या के प्रभाव से उनके पुत्र बनकर यहीं उन अनसूया माता का मान बढ़ाया था। यहीं महाभारत के अनुसार महाराज युधिष्ठिर ने तपस्या की थी और यहीं वीर शिरोमणि महाराज नल ने अनेक अशुभ कर्मों का क्षय करके पुनः राजलक्ष्मी का वरण किया था। यहीं श्री राम देवी सीता के साथ महर्षि अत्रि देवी अनसूया माता से मिले थे (अयो. 117 सर्ग) रात्रि विश्राम किया था।

अत्रि आश्रम वर्तमान में चित्रकूट से लगभग 8 किलोमीटर दूर मन्दाकिनी के तट पर है। रात्रि व्यतीत कर, श्री राम ने जब आश्रम के तपस्वियों के सहित महर्षि अत्रि से आगे जाने की आज्ञा माँगी तो वनवासियों ने श्री राम से आगे यात्रा में पूरी सावधानी बरतने को कहा था। उनका कहना था कि, 'आगे दुर्गम वन है, उसमें हिंसक जीव-जन्तु हैं, नर-भक्षी राक्षस हैं, उनका आप निवारण करें।' इससे ज्ञात होता है कि यहाँ से आगे दुर्गम कान्तार प्रारम्भ होता था। श्री राम यहाँ से आगे बढ़े।

चित्रकूट से श्री राम का वनगमन मार्ग आज भी दुर्गम है। हाँ हिंसक जीव-जन्तु बचे नहीं हैं अब। वाल्मीकि द्वारा वर्णन किये गये 'आश्रम मण्डल' का भी कोई अभिज्ञान नहीं है, जहाँ आश्रम मण्डल के ऋषियों का श्री राम ने आतिथ्य ग्रहण किया था एवं रात्रि निवास किया था। हाँ, श्री राम ने जहाँ 'विराध' का वध किया था, वह स्थान आज भी 'विराध कुण्ड' के नाम से जाना जाता है। माता अनसूया के आश्रम (अत्रि आश्रम) से लगभग 4.5 मील की दूरी पर यह स्थान है। यहाँ एक टेढ़ा-मेढ़ा बड़ा गड्ढा, लक्ष्मण ने खोदा था और गड्ढे में विराध को पटक दिया था। (अरण्य. 4/27, 28)। यहाँ ग्रामवासी अभी भी अतीत की इस बात को भूले नहीं हैं—विले विराधस्य वधं प्रचक्रतुः (अरण्य. 4/30)। अभी भी यह जातीय स्मृति विलोपित नहीं हुई है। श्री राम विराध-वध के वाद रुके नहीं थे, उन्होंने लक्ष्मण से कहा थाः—

कष्टं वनमिदं दुर्गं...अभिगच्छामहे शीघ्रं शरभंगं तपोधनम् (अरण्य 5/3)

‘यह वन दुर्गम और कष्टप्रद है। हमलोग शीघ्र तपोधन शरभंग मुनि के आश्रम को चलें।’

वे श्री शरभंग आश्रम पहुँचे, तो मुनि ब्रह्मलोक के प्रस्थान की तैयारी में थे। उन्होंने श्री राम के सामने ही विधिवत् अग्नि को स्थापित किया था और अपने महाप्रयाण के पहले, श्री राम के पूछने पर उन्हें आगे जाने का मार्ग बताया था—

“इह राम महातेजाः सुतीक्ष्णो नाम धार्मिकः।
वसत्यरण्ये नियते स ते वासं विधास्यति।। (अरण्य. 5/36)

शरभंग मुनि ने कहा था—यहीं वन में सुतीक्ष्ण मुनि रहते हैं, वे आपकी आवास व्यवस्था करेंगे। स्पष्ट है कि सुतीक्ष्ण मुनि शरभंग से बहुत दूर नहीं रहते थे। यहीं से मन्दाकिनी नदी के स्रोत की विपरीत दिशा में, किनारे-किनारे जानेवाला रास्ता सुतीक्ष्ण के आश्रम तक जाता था (अरण्य. 5/38)।

यह है शरभंग में आश्रम की स्थिति जो वाल्मीकि ने बतायी है। कालिदास ने रघुवंश में केवल इतना सूचित किया है कि ‘शरभंग आश्रम’ अग्निहोत्र के लिए प्रसिद्ध था (रघु. 13/45)। आज भी यह आश्रम सघन वन में ‘विराध-कुण्ड’ से लगभग 10 मी. की दूरी पर स्थित है। आश्रम से 6 मी. दूर ‘विरासिंगपुर’ का कस्बा है जहाँ ठहरा जा सकता है। आश्रम एकदम वनभूमि में स्थित है।

शरभंग आश्रम से श्री राम सीधे पंचाप्सर तीर्थ होते हुए ‘सुतीक्ष्ण-आश्रम’ पहुँचे थे। सुतीक्ष्ण आश्रम भी सघन वन में है। यह स्थान शरभंग आश्रम से 10 मील की दूरी पर है। इस आश्रम के पास भी कोई बड़ा कस्बा नहीं है। सुतीक्ष्ण मुनि अगस्त्य ऋषि के शिष्य थे। श्री राम ने ‘पद्मासनासीन’ अवस्था में उन्हें ध्यानमग्न देखा था। सुतीक्ष्ण (सर्वत्र कुशलः सर्वभूत हिते रतः) समस्त प्राणियों के हित में तत्पर और इहलोक-परलोक की बातों में निपुण थे। उनका आश्रम बहु पुष्प फल द्रुमों से सम्पन्न था। वहाँ सदा ऋषि संघ विचरा करते थे। वर्ष भर फल-फूल सुलभ थे। उपद्रवों से आश्रम सर्वथा रहित था। हाँ, एक उपद्रव अवश्य था। आश्रम के मृग निर्भय थे सो वे मृग आश्रम में धमाचौकड़ी मचाया करते थे (अरण्य 119 सर्ग)।

आज जो सुतीक्ष्ण का आश्रम कहा जाता है, वहाँ अब काल की गति से ऐसा कुछ भी नहीं बचा है। प्राकृतिक रमणीयता बस नाममात्र को बची है पर स्मृति की सुगन्धि जन-मानस में अब भी शेष है। प्रभु यहाँ रुके थे। आस-पास के आश्रमों के दर्शन करने के बाद फिर यहाँ आये थे और कई दिन रहे थे। फिर एक दिन विनीत भाव से सुतीक्ष्ण मुनि से अगस्त्य ऋषि के आश्रम का मार्ग पूछा था। सुतीक्ष्ण ने प्रसन्नता से कहा था कि ‘यहाँ से 4 योजन दक्षिण में अगस्त्य के भाई (अग्नि जिह्व) का आश्रम है। वहाँ से एक योजन दूरी पर पवित्र ‘अगस्त्याश्रम’ है। रात्रि अगस्त्य के भाई के आश्रम में बिताना और प्रातः अगस्त्य के दर्शन करना (अरण्य. 11/40-41)। यहाँ पिप्पली वृक्षों से भरा हुआ गहन वन है। छोटे-छोटे जलाशयों से भरपूर मनोरम वन प्रान्त है। श्री राम, लक्ष्मण और सीता जी, तीनों इसी रास्ते से आगे गये थे और ऋषि अगस्त्य के भाई (अग्नि जिह्व) के आश्रम पर पहुँचे थे। रात्रि में आश्रम में विश्राम किया और प्रातः अगस्त्य ऋषि के आश्रम में पहुँचे थे।

महर्षि वाल्मीकि ने ‘अगस्त्याश्रम’ का बड़ा ही मनोरम वर्णन किया है। आश्रम के परिसर में चिरौल (चिर विल्व) महुआ, बेल, तिन्दुक और सैकड़ों प्रकार के जंगली पेड़ थे। इन्हीं वृक्षों से भरा-पूरा वह ‘कान्तार’ था। आज भी महुआ, चिरौल, बेल और तेंदू बुन्देलखण्ड के वनों में खूब भरे पड़े हैं।

अग्निपुराण के प्रारम्भ में जो अति संक्षिप्त ‘रामकथा’ दी गयी है, उसमें प्रत्येक काण्ड की कथा को संक्षेप में कहा है। वहाँ अध्याय सात के प्रारम्भ के चार श्लोकों में कहा गया है कि, ‘श्री राम चित्रकूट से अत्रि आश्रम, शरभंग आश्रम, सुतीक्ष्ण आश्रम और अगस्त्य ऋषि के भाई अग्नि जिह्व के

आश्रम होते हुए अगस्त्य ऋषि के आश्रम पहुँचे। ऋषि चरणों में सिर नवाया और उनकी कृपा से दिव्य खड्ग प्राप्त करके फिर वे दण्डकारण्य में जनस्थान के भीतर पंचवटी नामक स्थान में गोदावरी के तट पर रहने लगे थे (अग्नि पु. अध्या. 7/1-4)। इससे यह निष्कर्ष निकालना स्वाभाविक लगता है कि अगस्त्य के आश्रम तक श्रीराम दण्डकारण्य के भाग में नहीं पहुँचे थे। जो जनस्थान (दण्डकारण्य) कहा जाता था, अर्थात् ऋषि अगस्त्य का आश्रम कहीं विन्ध्य में ही मौजूद था। अहमदाबाद (महाराष्ट्र) का स्थान कोई दूसरा है। प्रथम आश्रम विन्ध्य के प्रांगण में था। यह कालंजर (हिरण्यबिन्दु) ही हो सकता है। इसका प्रमाणीकरण वैदिक विचार और महाभारत से होता है।

अत्रि और अगस्त्य दोनों के आश्रम पास-पास थे। विशेषताओं की दृष्टि से दोनों ही ऋषियों का चिन्तन एक-सा है। कण्व गोत्रीय ऋषि कहते हैंः—

'अत्रिवद्वः कृमयो हन्मि कण्ववत् जमदाग्निवत्।
अगस्त्यस्य ब्रह्मणः सं पिनष्म्यहं कृमीन्।।'

(अर्थव. 2/32/3)

अत्रि, कण्व और जमदग्नि की मैं 'अगस्त्य की मन्त्र विद्या' से कृमियों का नाश करता हूँ। कण्व वंशी ऋषि यमुना, शुक्तिमति (केन) और चर्मण्यवती (चम्बल) से सिंचित प्रदेश के यदुओं और तुर्वशुओं के कुलों के गुरु (पुरोहित) थे। दोनों कुल एक-दूसरे को भलीभाँति जानते थे (ऋ.वे. 1/45/3)। अत्रि और अगस्त्य कुल के ऋषियों ने वेद में जो प्रार्थनाएँ गायीं हैं, वे लगभग एक-सी ही हैं। दोनों कुलों के प्रिय देवता 'मरुत् देवता' हैं। 'एनशियण्ट इण्डियन ट्रेडीशन' नामक पुस्तक (प्रथम संस्करण) पृष्ठ 259 पर इसका विस्तृण वर्णन उपलब्ध है। इससे यह स्वाभाविक लगता है कि अत्रि और अगस्त्य पास-पास ही रहते होंगे।

महाभारत काल में भी यह मान्यता थी कि 'कालंजर' में अगस्य ऋषि का एक आश्रम था। यह पूरा पर्वत ही 'आगस्त्य पर्वत' (अगस्त्य ऋषि का पर्वत) कहा जाता था—"अत्र कालंजरे नाम पर्वतं लोकविश्रुतम्। अत्र देव हृदे स्नात्वा गोसहस्रं फलं लभेत्।" (महाभारत वन. 85/56)

और

"हिरण्य विन्दुः कथितो गिरौ कालंजरे महान्।
आगस्त्य पर्वतो रम्यः पुण्यो गिरिवरः शिवः।।
अगस्त्यस्य तु राजेन्द्र तत्राश्रम वरो नृप।

(महाभारत वन. 87/20-21)

यहाँ की स्थानीय अनुश्रुतियाँ भी इस बात की पुष्टि करती हैं। यहाँ पास में ही कूप है जो अगस्त्य ऋषि द्वारा खोदा गया है ऐसा यहाँ के ग्रामवासी मानते हैं। यह बात तो विद्वानों में स्वीकृत है कि ऋषि अगस्त्य खनित्री (कुदाली) लिए रहते थे और श्रम भी किया ही करते थे। स्वयं ऋग्वेद में आया हैः—

"अगस्त्यः खनिमानः खनित्रैः प्रजामपत्यं बलमिच्छुमानः।
उभौ वर्णावृषिरुग्रः पुपोष सत्या देवेष्वाशिषो जगाम।।

(ऋ.वे. 1/179/6)

अर्थात् अगस्त्य ने कुदाल आदि से खोदते हुए, उत्तम सन्तान और बल की कामना की। उस उग्र (प्रखर तेजस्वी) ऋषि ने दोनों वर्णों को—बुद्धिजीवी और श्रमजीवी वर्गों को पोषित किया और

देवों में श्रेष्ठतम अवदानों को प्राप्त किया।

ऋग्वेद (1/191/1-16) विषध्नोपनिषद् नामक सूक्त में ऋषि अगस्त्य द्वारा ओषधियों, पक्षियों और कृमियों का वर्णन है। मधुला, शकुन्तिका, अनेक प्रकार की मोरनियों और विषैले कृमियों का होना कहा गया है। इससे जैसे पर्यावरण का आभास होता है वैसा ही बुन्देलखण्ड के पन्ना कालिंजर के आस-पास अब भी है। एक बात और भी इसी के अनुकूल है कि अगस्त्य का विवाह विदर्भ की राजकुमारी लोपामुद्रा से हुआ था। लोपामुद्रा महर्षि अत्रि के पुत्र दुर्वासा की शिष्या थी। अगस्त्य हिरण्यबिन्दु कालंजर में वास करते होंगे, तभी तो विदर्भ कुमारी से सुगमता से सम्बन्ध घटित हो सका (महा भा. वन. 96, 97, 98 अ.)।

वाल्मीकि रामायण का 'अस्मिन्नबरण्ये भगवन्नगस्त्यो वसतीति' वाक्य, सुतीक्ष्ण का मार्ग निर्देशन, स्थान की दूरी, महाभारत का कालंजर के निकट हिरण्यबिन्दु अगस्त्याश्रम के रूप में बताना, पूर्णरूपेण सुनिश्चित करता है कि कालंजर के निकट ही अगत्याश्रम तब था। दीवान प्रतिपाल सिंह द्वारा लिखित 'बुन्देलखण्ड का इतिहास' प्रथम भाग पृष्ठ-379 पर यही बात कहता है। गीता प्रेस द्वारा प्रकाशित 'तीर्थांक' पृष्ठ-124 पर टिप्पणी इसी बात को दुहराती है। अगस्त्य आश्रम में जब श्री राम महर्षि अगस्त्य से मिले तो महर्षि ने आतिथ्य प्रदान किया था। महर्षि ने श्री राम को दिव्य धनुष जो भगवान् विष्णु का धनुष था वह, अक्षय तूणीर, अमोघ बाण और खड्ग प्रदान किया था और कहा था—विजयी होने के लिए तुम इन दिव्यास्त्रों को ग्रहण करो (अरण्य. 12/36)। श्री राम ने कहा था कि 'हम आज धन्य हुए, कृत्त-कृत्य हुए क्योंकि गुरुवर आज हम पर परितुष्ट हैं—'धन्योस्मि अनुगृहीतोस्मि... गुरु नः परितुष्यति (अरण्य 13/10)। यहाँ के ग्रामवासी कहते हैं कि महर्षि अगस्त्य ने श्री राम को भगवान विष्णु का 'शार्ङ्ग' धनुष यहीं दिया था इसीलिए हमारे इस गाँव का नाम 'सारंग' (शार्ङ्ग) पड़ गया है। कालंजर की कोख में बसा यह ग्राम 'सारंग' ही अगस्त्य ऋषि का प्रथम आश्रम है, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। राम-रावण युद्ध में सारथि मातुल ने श्री राम को इसी अमोघ वाण को उपयोग में लाने हेतु स्मरण दिलाया था और श्री राम ने इसी बाण के प्रयोग से रावण को मार कर विजय प्राप्त की थी।

'ततः संस्मारितो रामस्तेन वाक्येन मातलेः।
जग्राह स शरं दीप्त निःश्वसन्तमिवोरगम्।
यं तस्मै प्रथमं प्रादादगस्त्यो भगवानृषिः ॥

(युद्ध 108/3...)

यह गौरव गाँव निवासी आज भी अनुभव करते हैं, जिसके वे पात्र हैं।

अगस्त्य ऋषि से श्री राम ने अगला वास स्थान पूछा तो उन्होंने बताया कि आगे उत्तर से होते हुए 'पंचवटी' जाओ (अरण्य 13/21)। बाबा तुलसी कहते हैं कि श्रीराम ने यहीं ऋषि अगस्त्य से पूछा था—'अब सो मन्त्र देहु प्रभु मोही। जिहि प्रकार मारहुँ मुनि द्रोही।' तो ऋषि ने मन्त्र दिया और कहा था—'दण्डक बन पुनीत प्रभु करहू। उग्र शाप मुनिवर कर हरहू।' और प्रभु राम आगे बढ़ गये।

इसी प्रकार श्री राम महर्षि भरद्वाज द्वारा दर्शित मार्ग से पहले चित्रकूट पर्वत शृंखला का दर्शन करते हैं फिर चित्रकूट के परिसर में स्थित वाल्मीकि आश्रम जो तमसा तट पर अवस्थित था, वहाँ आये फिर चित्रकूट में पर्णकुटी बना कर रहे। श्री राम जैसे ही चित्रकूट वन में पहुँचे तो तत्काल लक्ष्मण से बोले थेः—

'पुण्ये रंस्यामहे तात, चित्रकूटस्य कानने' (अयो. 56/11)
'मनोसोपं गिरिः सौम्य, स्वाजीव प्रतिभाति मे' (अयो. 56/11)

श्री राम जैसे ही महर्षि वाल्मीकि से मिले, तत्काल बिना देर किये लक्ष्मण को आज्ञा दी कि पर्णकुटी का निर्माण करो। पर्णशाला बनी। वास्तु पूजन कर पर्णशाला में पहुँचे। परमसुख हुआ। वनवास में पुर के छूटने का दुःख छूट गया—'जहौ च दुःखं पुर विप्रवासात्' । ऋर्षि भरद्वाज की राम से कही बात चित्रकूट में खरी उतरी। उन्होंने कहा था—

'सीतया सार्धं नन्दिष्यति मनस्तव' (अयो. 54/42)

ऐसा सुखकर रहा श्री राम का चित्रकूट वास। विन्ध्य के प्रांगण में अनसूया अत्रि से भेंट हुई, शरभंग के दर्शन हुए, सुतीक्ष्ण और अग्नि जिह्व से मिलन हुआ और विन्ध्य के आँगन में ही शरभंग आश्रम में 21 श्रेणियों के मुनि संघों की प्रार्थना पर श्री राम ने मुनिद्रोहियों के वध का संकल्प किया। और यहीं महर्षि अगस्त्य ने श्री राम को अमोघ दिव्यास्त्र और विजयश्री प्राप्ति का आशीर्वाद दिया। श्री राम विन्ध्य के इस प्रांगण में पुरवास से अधिक सुखी रहे। यह 'यज्ञ-पुरुष' श्री राम के जीवन में आदान का पुण्य काल था। पंचवटी से विसर्ग पर्व शुरू हुआ। सोम की यहाँ प्राप्ति हुई। आगे आया आग्नेय पर्व—स्वाहा काल। इस प्रकार श्री राम के वनवास काल के दो पर्व हैं। दो वास हैं। एक विन्ध्य में चित्रकूट की पर्णशाला और दूसरी पंचवटी की पर्णकुटी। एक है मन्दाकिनी तट का वास दूसरा गोदावरी के कूल का निवास। एक है स्वधारूप आदान, दूसरा है स्वाहा रूप विसर्ग। एक सोममय सौम्य और दूसरा उग्र आग्नेय। यहाँ यह प्रथम सोम पर्व विन्ध्य के आँगन का (बुन्देलखण्ड में राम का वास) सम्पन्न होता है, अब आगे सह्याद्रि से इस यात्रा का आग्नेय पर्व प्रारम्भ होगा।

रसिक बिहारी कृत रामरसायन

–डॉ. शिवशंकर त्रिपाठी

रामरसायना। रामचरिताख्यानक प्रबन्ध काव्य। रचना समय संवत् 1939 (सन् 1882)। रचयिता श्री रसिक बिहारी। यह कवि का काव्य नाम है। मूलतः महन्त जानकी प्रसाद है। बुन्देलखण्डान्तर्गत झाँसी निवासी कान्यकुब्ज ब्राह्मण श्री श्रीधर के पुत्र। जन्म संवत् 1901 (सन् 1944 ई.)। तीन मास की आयु में ही सन्त का संरक्षण। एक वर्ष की आयु में मृत्यु को प्राप्त हो गये। सायं मृत्यु होने के कारण रातभर मृत पड़े रहे। प्रातः सन्त ने उठाया और सरयू में प्रवाहित करने के लिए स्नान कराने के पश्चात् उनके नेत्र खुल गये, प्राण-संचार। आश्चर्यचकित किन्तु आह्लादित सन्त समाज ने इनका नाम जानकी प्रसाद रखा (याको **नाम सुआजते है जानकी प्रसाद**)। गुरु ने पालन-पोषण किया। वह महन्त की पदवी देकर आदर सहित महन्त जानकी प्रसाद सम्बोधन करते थे। छन्द में यह नाम **कहुँ-कहुँ अति अभिल लखाई**', इसलिए **रसिक बिहारी नाम उचारो। कितहूँ है रसिकेश निहारो।** (राम रसायन प्रथम विधान-प्रथम विभाग)।

कवि ने काव्य-रचना की प्रेरणा का भी उल्लेख किया है–एक दिन मध्याह्न समय मैं वाल्मीकि रामायण सुन्दर काण्ड देख रहा था। प्रसंगतः रावण द्वारा सीता के प्रति अभद्रकर वचन, उससे सीता की व्याकुलता देख मेरा हृदय उद्विग्न। नेत्रों से अश्रुधारा। शरीर शिथिल। मैं वहीं लेट गया। न सुप्तावस्था न जाग्रत। अलसगात। न कुछ प्रत्यक्ष था न स्वप्न। आश्चर्य विशाल कानन, उसमें वट का महाविटप। उस पर सीताराम आसीन। उनके पास मैं खड़ा। उद्विग्न चित्त। मुझे उद्विग्न देख सीता-राम विहँस रहे थे। दोनों ने मुझे एक-एक कदम्ब पुष्प दिये। उसी समय एक-सी अपने साथ चार कपि लेकर उपस्थित हुई। सुन्दर वीणा बजाकर विविध कौतुक दिखाने लगी। कौतुक दिखाती उसने मुझसे सीता-राम के गुणगान करने का उपदेश दिया। उसका यह उपदेश कथन, फिर सीता-राम ने मुझे एक मणि देकर कहा–यह विवेकदाता विमल कल्पमणि लो, इसके प्रभाव से ऋद्धि-सिद्धि तथा श्रेष्ठतम ज्ञान की प्राप्ति होगी। किन्तु तत्क्षण ही दो कपियों ने दौड़कर वह मणि मुझसे ले लिया। उसी समय आकाश मेघाच्छन्न। जलवर्षण। मेरे नेत्र खुले। अपार आनन्द। मैं विस्मयापन्न। उठकर बैठ गया। हर्षोत्फुल्ल हृदय-मन में विविध विचार। अन्ततः सियाराम यश कछुरचौ विनिश्च। (प्रथम विधान/द्वितीस विभाग–34-37)। 'रामरसायन' काव्य रचना अपरोक्षतः राम-प्रेरणा की परिणति–

यातेलखि उपकार, कलि जग जीव उधार हित।
लघु मति के अनुसार, रामकथा कछु रचत हौं।।
पूरब ग्रन्थ प्रमान, संस्कृत अरु भाषा विविध।
सब सम्मत उर आन रामरसायन ग्रन्थ किय।।

–प्र.वि./द्वि.वि.-9-10

रामरसायन में रामकथा समग्र विधान फिर विभागों में समायोजित की गयी है। कुल आठ विधान। **प्रथम विधान में** ग्रन्थकार व्यवस्था प्राचीन, प्रमाण, दो विभाग, **द्वितीय विधान में** अवधराज वर्णन, दशरथ यज्ञ वर्णन, हनुमज्जन्म, श्री राम लक्ष्मणादि जन्म का वर्णन, रघुचरित्र, रावाणवृत्तान्त, श्री सीता जन्म, शुक्र चरित्र, कुलदेव पूजननौ विभाग, **तृतीय विधान में** धनुषयज्ञ, विश्वामित्र का अयोध्या आगमन, विश्वामित्र चरित्र, जनकपुर दर्शन वर्णन, वाटिका-प्रसंग, धनुष भंग, परशुराम संवाद, विवाह वर्णन, जनकनन्दिनी विदायी का वर्णन, विवाहान्त वर्णन, ग्यारह विभाग, **चतुर्थ विधान में** रामवनगमन, ग्रामवधू समागम वर्णन, ग्राम वधू विलाप वर्णन, ग्राम वधू नेह कथन, चित्रकूट निवास वर्णन, दशरथ देह त्याग वर्णन, राम-भरत संवाद, चित्रकूट चरित्र वर्णन, मुनि समागम वर्णन और पंचवटी निवास वर्णन, दस विभाग, **पंचम विधान में** सीता हरण वर्णन, जनकनन्दिनी का विलाप वर्णन, रघुनंदन विलाप वर्णन, रघुनन्दन-लक्ष्मण सहित वन अटन, सुग्रीव मिलाप वर्णन, बालि वध वर्णन, जनकनन्दिनी शोध वर्णन, हनुमान जी का जनकनन्दिनी दर्शन वर्णन, लंका दहन वर्णन, सीता सन्देश प्राप्ति वर्णन, श्री रघुनाथ जी का लंका पयान वर्णन, ग्यारह विभाग, **षष्ठ विधान** में रावण सभा-मंत्रणा वर्णन, विभीषण शरणागत वर्णन, सेतु बन्धन वर्णन, रावण दूत प्रेक्षण वर्णन, दलथापन वर्णन, रावण-सुग्रीव मल्ल युद्ध वर्णन, अंगद-रावण संवाद वर्णन, नागफाँस वध मोचन, धूम्राक्ष प्रहषादि युद्ध तथा वध वर्णन, रावण युद्ध वर्णन, कुम्भकर्ण युद्ध तथा वध वर्णन, नारान्तक-अतिकायादि युद्ध-वध वर्णन, इन्द्रजित अन्तरिक्ष युद्ध वर्णन, लंका दहन तथा मकराक्ष युद्ध-वध वर्णन, मेघनाद युद्ध-वध वर्णन, सुलोचना सत्य वर्णन, अहिरावण वध वर्णन, मूलदल युद्ध-वध वर्णन, रावण युद्ध कालनेमि वध वर्णन, रावण युद्ध वर्णन, श्री सीताराम मिलन वर्णन, इक्कीस विभाग।

सप्तम विधान में श्री रामचन्द्र अवध आगमन वर्णन रामचन्द्र राज्याभिषेक वर्णन, रामचन्द्र राज्यरीति वर्णन, वाक्य विलाक्ष वर्णन, सत्संग वर्णन, सुग्रीवादि गमन-वर्णन, न्याय वर्णन, लवणासुर वध वर्णन, द्विजसुत संजीवनी वर्णन, महारावण वध वर्णन, हनुमत पर्यटन-वर्णन, गौरंग कथा वर्णन, बारह विभाग। **अष्टम विधान में** अष्टापाम रीति वर्णन, हिण्डोल विहार वर्णन, राम विहार वर्णन, मिथिला विहार वर्णन, फाग विहार वर्णन, कुशलवादि जन्म वर्णन, अश्वमेध यज्ञारम्भ, सुबाहुयुद्ध वर्णन, विद्युन्माली युद्ध वर्णन, वीरमणि युद्ध वर्णन, सुरथ युद्ध वर्णन, लवकुश युद्ध वर्णन, अश्वमेधयज्ञान्तवागन, राज्यविभाग वर्णन, श्रीरामचन्द्र चरित्र-प्रभाव वर्णन तथा सुरलोक विहार वर्णन।

इस प्रकार समग्रकाव्य कथा कुल आठ विधान एवं एक्यान्वे विभागों में समायोजित की गयी है।

कवि ने कथा गुम्फन, वर्णन विन्यसन में हनुमन्त संहिता, वसिष्ठ संहिता, अगस्त्य संहिता, निरुक्तिसंहिता, सदाशिव संहिता, रामरसामृत सिन्धु, चरण चामर, रामरास, वाल्मीकि रामायण, हनुमन्नाटक, कौशल खण्ड, सियगुणवल्ली, उत्सव सिन्धु, गुणावली, महासुन्दरीतन्त्र, नवरत्न, अष्टयाम (नाभाकृत) तुलसीकृत सभी ग्रन्थ, सीतायन, कादम्बरी, नेह प्रकाश, तरंगिनी आदि ग्रन्थों से सन्दर्भ ग्रहण कर **वरनी कथा पुरातन जोई। विरचौ रामरसायन सोई।**

रसिक बिहारी जी से पूर्ववर्ती रामकथा गायक, बुन्देलखण्ड-ओरछा नरेश श्री इन्द्रजीत के सभापण्डित आचार्य केशवदास ने अपने काव्य रामचन्द्रिका में छन्द प्रयोग अलंकार प्रयोग में पूर्ण आचार्यत्व स्थापित किया। छन्द प्रयोग में कदाचित् रामरसायन-रचयिता भी आचार्यत्व स्थापित करने का मोह संवरण नहीं कर सका है। काव्य में छन्द वैविध्य का संकुल कवि के काव्य रचना नैपुण्य को प्रमाणित करता है। काव्य में मालिनी, उपजाति, इन्द्रवज्रा, उपेन्द्र वज्रा, वसन्ततिलका, रथोद्धता, घनाक्षरी, काव्य, हरिगीतिका, सवैया, पद्धरी, छप्पय, तोमर, त्रिभंगी, भुजंगप्रयात, दोबई तोटक, पयंगम अद्ध

विली, लीला, चारी, चाकर, नगस्वरूपिणी चौपैया, भीम, मोतीदाम, अमृत ध्वनि, भुजंगी, लतिका, दोहा, सोरठा आदि छन्द प्रयुक्त हुए हैं। काव्य में कुल लगभग ग्यारह सहस्र छन्द हैं। उदाहरण के लिए—

दोबई— **तात लखौ तरुछांह मनोहरतंह विश्राम करीजै।**
थकित भई अति जनककिशोरी अब न पन्थचित दीजै।।

—चतु.वि./प्रथम विभाग-14

कलित— **हे अशोक तुम शोक हरौ सबही के।**
क्यों न मिलावो मोहन जीवन जी के।।
हे कदम्ब बलि अब विलम्ब जनि लावो।
राजकुँवर रघुवर को हमहि बसावो।।

—चतुर्थ विधान/तृतीय विभाग-18

अर्द्धावली— **यौं सकल निश्चरन संग खर धाय कै।**
शस्त्रवर्षा करी राम पर आयकै।।
देखि रघुवीर बहुवीर वर बं उकौ।
कीन टँकोर रव घोर धनु चंउ की।।

—वही विधान/दसम विभाग-29

लीला— **इहि विधि सब जातुधान।**
नाशे हति राम बान।।
कानन चहुँ झुँड झुँड।
धाये चहु रुण्ड मुण्ड।।

—पंचम विधान/प्रथम विभाग-1

चारी— **सुनिकैं विभीषण वैन निश्चर पतिहिं छायो कोप।**
भाषी अरे मतिमन्द तू कुलधर्म की नो लोप।।
पुनि शत्रु पक्ष बढ़ाय निन्दहि मोहि तोहि न शंक।
लखि बन्धु क्षमहु अनीति नत वध योग है खलरंक।।

—षष्ठ विधान/द्वितीय विभाग-61

इससे अतिरिक्त भी अप्रसिद्ध छन्दों के प्रयोग इस काव्य में मिलते हैं।

रामरसायन का कर्ता राम, लक्ष्मण, भरत-शत्रुघ्न एवं सीता, माण्डवी, उर्मिला तथा श्रुतिकीर्ति सभी के सखा और सखियों के नामोल्लेख संग संख्या तक परिगणित करता है। कदाचित् यह प्रथम राम काव्य है, जिसमें यह उल्लेख हुआ हो। विधान 2 विभाग 4 में—

सुन्दर, शेखर, वीरसेन मणिभद्र निहारौ।
तेजरूप, रसिकेश, कलाधर, हृदय विचारौ।।
बाणरूप, रसरास, मनोहर और गुणाकर।
मानस पुनि पन्नीस बहुरि वनपाल, गदाधर।।
रसनेश, पद्मकर, शीलनिधि, रसिक बिहारी जानिए।
रघुवीर सखा अथेदश अन्तरंग पहिचानिए।

—वि. 2/वि. 4-146

अठारह प्रमुख सखा, प्रति सखा के यूथप (टोली) 108 प्रत्येक सखा के यूथप (दल) में 500, सभी यूथप (दल) में 54,000 सखा एवं प्रत्येक सखा के स्वतन्त्र सखा 54,108। इस प्रकार अठारह सखा, प्रत्येक के 108 दल, एक दल में 500, सभी यूथप के 54,000 सखा, अर्थात् 18 मुख्य सखा, 1944 दल में 9,000 दल, यूथपों के सखा की संख्या 972000 और प्रति प्रमुख सखा के स्वाधीन 973944 सखा रहे। इसी प्रकार—

रसिक रसाल सुभद्र अरु कमलाकर श्रुति जात।
कुशल जटाधर, वीरमणि भरतसखा ये सात।।
वज्रशाल रसमत्त पुनि वातप मण्डन मानि।
बहुरि विहारी लषन के पन्चसखा यें जानि।।
चार शत्रुघ्न के सखा सन्तानक सुखदान।
दमन, राजरंजन लखौ चाभी कर बलवान।।
मुख्य सखा ये जानिए, पुनि इनके स्वाधीन।
अष्टोत्तर शत प्रति सखा यूथप सखा प्रवीन।।
प्रति यूथप आधीन है सखा पञ्चशत जानि।
पुनि सेवक सब सखन के इतने न्यारे जानि।।

—वही विधान/वही विभाग 147-151।

इस प्रकार भरत के सात सखा, प्रत्येक के 108 यूथप (समूह), प्रति समूह में 500, जी के मुख्य सखा 5 समूहों के सखा 54000, प्रति मुख्य सखा के अधीन हुए 54108 समग्रतः 3,78,000 सखा। लक्ष्मण सखा, प्रत्येक सखा के 108 समूह, प्रत्येक सखा के 500 दल, एक दल में 54,000 सखा, एक प्रमुख सखा के अधीन 54,108। समग्रतः 2,70,540 सखा। इसी प्रकार शत्रुघ्न के मुख्य 4 सखा, प्रत्येक के 108 यूथप, एक यूथप में 500, समूहों के सखा की संख्या 54,000 प्रत्येक प्रमुख सखा के अधीन 54,108। समग्रतः सखा संख्या-2,16,432।

रसिक बिहारी जी ने तृतीय विधान के अन्तर्गत जानकी, माण्डवी आदि की सखी जनों का भी विवरण दिया है—

चन्द्रकला, उर्वशी, सहोद्रा, कमला, विमला मानो।
चन्द्रमुखी, मेनका, सुरम्भा आठ मुख्य ये जानौ।।
प्यारी सखी विदेह सुता की बाल संगिनी सोहै।
इनहिं आदि सहचरीधनी जिहिं देखि शची रति मोहै।।
सप्त-सप्त यूथेश्वरी इक-इक सखि स्वाधीन।
हैं सहस्र यूथेश्वरी, प्रति अनुचरी प्रवीन।।
ये द्वादश सखियान प्रति रुचिर अनुचरी और।
पंच-पंच शत सकल हैं, विशद रूपगुण तौर।।
अवधंवासिनी और सब, मिथिलावासिनि तीय।
रहै परस्पर प्रेमयुत, परमप्रमोदित होय।।

—तृतीय विधान/विभाग 11-32—

जानकी की मुख्य चन्द्रकला, उर्वशी, सहोद्रा, कमला, विमला, चन्द्रमुखी, मेनका और रम्भा आठ

सखियाँ। सात यूथेश्वारियाँ यूथेश्वरियों में प्रत्येक की एक हजार अनुचरियाँ, समग्र की क्रमशः सात हजार अनुचरियाँ। समग्रतः 56064 सखियाँ। ये सभी मिथिला से साथ आयीं। इसके अतिरिक्त अवध की प्रमुख-चारुशीला, राधा, सुभगा, क्षेमा, मृगलोचना, मालिनी, हरिणी, सुलोचना, प्रेमा और सुधामुखी। आठ यूथेश्वरियाँ (प्रत्येक की) यूथेश्वरियों की 2000 अनुचरियाँ (पृथक्-पृथक्), प्रति यूथेश्वरी की कुल 16,000 अनुचरियाँ (पृथकतः)। अवध की 1,60,090 सखियाँ। मिथिला तथा अवध की सखियाँ समग्रतः 2,16,154।

माण्डवी की चार प्रमुख भामा, रूक्मवती, सुमती और चन्द्रिका, प्रत्येक की पृथकतः 200 अनुचरियाँ कुल 804 (मिथिला से)। अवध से सुरसुन्दरी, सारिका, नेहमंजरी तथा बाला। प्रत्येक की अलग-अलग 500 अनुचरियाँ कुल 2004। मिथिला एवं अवध की कुल 2808। उर्मिला की चम्पावती, नन्दिनी, मुदिता तथा कुण्डली, प्रत्येक की 200 अनुचरियां, इस प्रकार 804 मिथिला से। गोकुला, जोवना, वृन्दा तथा दीपावली, 500 प्रत्येक की अनुचरियाँ—2004। मिथिला अवध की कुल 2808। इसी प्रकार (मिथिला से) श्रुतिकीर्ति की मुख्य संगमी, श्यामा, मादिनी और कामा (अवध से) ज्वाला, गर्विता, कदम्बा (मुख्य सखियाँ)। अनुचरियों सहित मिथिला से 804 और अवध से 2004। कुल 2808 सखियाँ। (विधान 3/11वाँ विभाग-32-70)

रघुनन्दन की प्रमुख—हेमा, पद्मगन्धा, वारारोहा, चन्द्रभागा, चन्द्रवती, हंसिनी, मनोरमा, चन्द्रावली, अलसा, पद्मा, मोहनी, माधवी, सुभद्रा, गुणवल्लरी, वीणराधरी तथा मोदवती 16 प्रमुख सखियाँ। प्रत्येक की 16 यूथेश्वरी, यूथेश्वरियों की पृथक्-पृथक् 500 अनुचरियाँ, प्रति यूथेश्वरी की पृथक्-पृथक् 8000 अनुचरियाँ। समग्रतः 128254 सखियाँ।

वेद बाण दृगनाग भुज, गणपतिरदन विचार।
अन्तरंग रघुनन्दन की, मुख्य सखी निरधार।।
वेद बाण अरु चन्द रस, भूमि नैनअनुमान।
जनकसुता की सहचरी, येती मुख्य प्रमान।।

—विधान 3/विभाग 11-68 व 67

अवधपुरी दशरथ रजधानी।
जिहिं लखि अमरावती लजानी।। विधान 2/विभाग 1-34
चहुँ दिशि विशद विचित्र ललामा।
सदन सरित सर मग आरामा।।

कवि रसिक बिहारी जी इतना लिखकर ही सन्तोष नहीं करते। सविस्तार प्रस्तुत करते हैं—

अवध सदन संख्या सकल, किमि वर्णों मति थोरि।
याते मुख्य अगारते, कहीं यथा बुद्धि मोरि।।
अवध मध्य मुनिलक्षवर, देवागार ललाम।
अवर नभ ऋषि बान शशि, नंद राम द्विजधाम।।
ख ख रवि तिथि वसु अवध में क्षत्रिय भवन अछेह।
ख ख नभ सर रस नाग मुनि चन्द्र वैश्यगा गेह।
वसु दृग ग्रह सर चन्द्र ऋषि राम पक्ष महि जान।।
सदन शूद्रगण के इते, अवधपुरी मधि मान।

वापी बागत डाम वर लक्ष त्रयोदश लक्ष।
अवध मध्य ऋषिगण कुटी सपद कोटि अति स्वक्ष।।

—विधान 2/विभाग 1 : 50-54

अवध में सात लाख देवस्थान, उन्तालीस लाख पन्द्रह हजार सात सौ ब्राह्मणों के स्थान, क्षत्रियों के भवन इक्यासी लाख इक्यावन हजार दो सौ। एक करोड़ अठहत्तर लाख पैसठ हजार स्थान वैश्य समाज के, शूद्रों के भवनों की संख्या बारह करोड़ सैंतीस लाख, पन्द्रह हजार नौ सौ अट्ठाइस, तेरह लाख कूप बावली, तालाब, उपवन एवं एक करोड़ पच्चीस लाख मुनिजन के कुटीर। इस से अतिरिक्त राजभवन, निवास बहु प्रकार पृथक-पृथक। कवि ने प्रामाणिकता के लिए रुद्रयामल का सन्दर्भ दिया है—

अयोध्या प्रदृश्यन्ते पञ्चकोटि शतानि च।
प्रासादाश्च महाभागे अर्बुदान्येकविंशति।
तन्मध्ये राजराजस्य राजते राजमन्दिरम्।
सुविभागं महाकक्षं ताराणामिव चन्द्रमाः।। इत्यादि।

रसिक बिहारी जी ने ‘राम रसायन’ काव्य में वर्णित प्रसंगों की पुष्टि के लिए प्रायः वाल्मीकि रामायण, उत्सव सिन्धु, सुन्दर रामायण, अग्निवेश्य रामायण, हनुमन्नाटक, विष्णुपुराण, वसिष्ठ संहिता, लक्ष्मीतन्त्र, भविष्योत्तर पुराण, महारामायण, रामाश्वमेघ पद्मपुराण इत्यादि का उल्लेख किया है। अश्वमेधयज्ञ का प्रसंग समग्रतः पद्मपुराण (पाताल खण्ड) की कथा पर ही आधारित प्रतीत होता है। मूलतः राम रसायन प्रबन्ध काव्य का उपजीव्य आदिकाव्य वाल्मीकि रामायण काव्येतिहास ही है। अस्तु।

रामरसायन विधान 8/1-5 विभाग में विविध विहार वर्णनों पर (राम) रसिक सम्प्रदाय का पूर्णतः प्रभाव प्रतीत होता है। विधान 3/विभाग 5 के वर्णन प्रसंग पर भी रसिक सम्प्रदाय की रसरंजकता परिलक्षित दृष्टिगत है। वाटिका प्रसंग का एक रसनिर्भर वर्णन—

रूप रंगीली गुण गरबीली सुधर सलोनी बाला।
नवल नागरी अति उजागरी छाकी प्रेमपियाला।।
नखशिख भूषण अमल अदूषण ज्यों शशि पूख नसोहैं।
बसन सुरंगा शोभित अंगा निरखि शची रति मोहैं।।
पंकज नैनीं हैं पिकवैनी गजगामिनी ललामा।
वैस किशोरी श्यामल गोरी मनहरनी सुखधामा।।
उरज उतंगा नवल अनंगा परम प्रवीन पियारी।
रंगरंगीली नेह पगीली सुन्दररूप उज्यारी।

—विधान 3/विभाग 5-41-42

रास विहार का एक दृश्य—

चन्द्रकला उर्वशी मेनका चन्द्रमुखी बरबाला।
मृगलोचना चारुशीला अरुक्षेमा रूप रसाला।।
त्यों राधा रम्भा सुमालिनी सुठि सुलोचना नारी।
हरिणी ये द्वादश आली है सिय की प्राणपयारी।
हेमा वीणाधरी हंसिनी गुण वल्लरीललामा।
चन्द्रावली, सुभद्रा, पद्मा, मनोरमा अभिरामा।।
सुभग चन्द्रभगा सुमोदनी पद्मगन्ध मतवाली।

सरस वरारोहा द्वादश ये राजकुँवर की आली।।
चतुर्विंश ये मुख्य सखि, इनके यूथ अपार।
मिलि सुरासमण्डल रचौ, सजि अनूप शृंगार।।
अधिक चतुर्दश त्रिशत अरु, चौविस सहस सुबाल।
रचौ रासमण्डल रुचिर, लखत सिया रघुलाल।।

—विधान 5/वभिाग 3 : 29-32

यहाँ 'रामरसायन' प्रबन्धकाव्य का संक्षिप्त समग्र परिचय उपस्थित करना मात्र प्रयोजन रहा है। उसकी समग्र की सर्वांगीण रूपरेखा, उसमें साहित्य पक्षीय तत्त्वों की शिवता-अशिवता की प्रतीति-विवेचना पुस्तक का विषय है।

रामकथा का केन्द्र : बुन्देलखण्ड

–कुँ. शिवभूषण सिंह गौतम

बुन्देलखण्ड की वीर प्रसविनी रत्नगर्भा धरा जहाँ अपने उदर में अकूत रत्न भण्डार सहेजे है, वहीं इसके आगोश में आज भी अद्‌भुत साहित्य सम्पदा समाहित है, जो किसी सजग व समर्थ शोधकर्ता उद्धारक की बाट जोह रही है।

कलम और करवाल की धनी इस धरा में अतीत काल से लेकर आज तक साहित्य की अजस्र धारा निरन्तर प्रवाहमान है। साहित्य की विविध विधाओं की परम्परा निरन्तर फूलती-फलती रही है।

बुन्देलखण्ड का प्राकृतिक सौन्दर्य, सघन वन प्रान्तर और दरबारी वैभव, साधकों-मनीषियों तथा रचनाकारों को सदा से आकर्षित करते रहे हैं। परिणामस्वरूप यहाँ पर प्रभूत मात्रा में साहित्य रचना हुई है।

भक्ति काव्य की दृष्टि से बुन्देलखण्ड हिन्दी जगत के शीर्ष पर है। भक्तिकाल की सभी शाखाएँ यहाँ पल्लवित और पुष्पित हुई हैं। चाहे वह निर्गुण हो या सगुण।

सगुण भक्ति की जिन दो प्रमुख धाराओं ने भक्तिकाल के कवियों को विशेष रूप से आकर्षित किया है, उनमें राम काव्य परम्परा और कृष्ण काव्य परम्परा प्रमुख हैं। यद्यपि ब्रजभूमि की सन्निकटता के कारण बुन्देलखण्ड कृष्ण भक्ति से कुछ अधिक प्रभावित रहा है तथापि रामकथा का केन्द्र भी यही बुन्देली धरा रही है।

सर्वप्रथम रामकथा के यत्र-तत्र बिखरे सूत्रों को एकत्र कर आदि कवि महर्षि वाल्मीकि ने सूत्रबद्ध कर प्रबन्धात्मक रूप में 'रामायण' महाकाव्य की रचना की तब से लेकर गोस्वामी तुलसीदास तक यही 'वाल्मीकि रामायण' रामकथा का प्रमुख स्रोत रही है। जब कि परवर्ती रचनाकारों में से अधिकांश तुलसीकृत 'रामचरित मानस' के उपजीव्य रहे हैं।

महर्षि वाल्मीकि से लेकर आजतक रामकाव्य की सुदीर्घ परम्परा निर्बाध गति से प्रवाहित है किन्तु बुन्देलखण्ड में गोस्वामी तुलसीदास, आचार्य केशव और मैथलीशरण गुप्त इस परम्परा के ध्वजवाहक रहे हैं। यदि रामचरित मानस बुन्देलखण्ड में रामकथा का प्रस्थान बिन्दु है, तो आचार्य केशव की 'रामचन्द्रिका' और मैथिलीशरण गुप्त का 'साकेत' महाकाव्य मील के पत्थर कहे जा सकते हैं।

ओरछा राज्य के राजकवि आचार्य केशव, तुलसीदास के ही समकालीन थे। उन्होंने सन् 1601 ई. में 'रामचन्द्रिका' की रचना की थी। इसमें छन्दों का वैविध्य तथा रस अलंकारों की भरमार ने इसे इतना दुरूह कर दिया है कि इसके रचनाकार को 'कठिन काव्य का प्रेत' तक की संज्ञा से अभिहित किया गया है। इनकी कविता के बारे में एक उक्ति भी प्रचलित है कि–"कवि को देन न चहै विदाई, तो पूँछत केशव की कविताई"। इसी परम्परा में कवि मण्डन की 'जनक पचीसी' एवं प्रताप साहि

की 'जुगल नख-शिख' रचनाएँ उल्लेखनीय हैं। चरखारी नरेश के आश्रित कवि मानकवि ने 'लक्ष्मण शतक' की रचना की। इसमें लक्ष्मण और मेघनाद के युद्ध का बड़ा ही रोचक और चमत्कारिक वर्णन किया गया है।[1]

रीतिकाल के कवियों में पद्माकर का विशिष्ट स्थान है। इनका जन्म संवत् 1810 में बाँदा में तथा मृत्यु संवत् 1890 में सागर में हुई थी। इन्होंने वाल्मीकि रामायण को आधार बना कर 'राम रसायन' नामक काव्य की रचना की है जो दोहा और चौपाई में बड़ी ही प्रभावपूर्ण शैली में है। इसी बीच समथर निवासी नवल सिंह कायस्थ ने आल्हा छन्द में रामायण की रचना की जो आल्हा रामायण के नाम से लोक में प्रचलित है। इसके अतिरिक्त इन्होंने रूपक रामायण, रामविवाह, सीता स्वयंवर, मिथिलाकाण्ड, जन्मकाण्ड आदि की भी रचना कर रामकथा का गायन किया है।[2]

एक नवीन शोध के अनुसार तुलसीदास नामक एक और कवि बुन्देलखण्ड में 18वीं शताब्दी के आस-पास हुए हैं, जिन्होंने पदावली रामायण नामक रामकाव्य की रचना की है। यह रचना सात काण्डों में विभक्त है। मानसकार की शैली का अनुसरण करते हुए इस ग्रन्थ में गीतावली की भाँति पदों का समावेश है। यह ग्रन्थ कवि ने विविध रागों में लिखा है। बीच-बीच में कवि ने लोकगीतों की धुन को भी अपनाया है।[3]

रसिक भक्ति परम्परा में सर्वप्रथम महाराज छत्रसाल का नाम लिया जा सकता है। ये कलम और करवाल दोनों के धनी थे। इनमें भक्त, कवि और योद्धा तीनों के गुणों का अद्भुत संगम था। इन्होंने प्रचुर मात्रा में काव्य-रचना की है किन्तु रामावतार कवित्त तथा रामध्वजाष्टक इनकी रामकाव्य परक रचनाएँ हैं। इसी परम्परा के दूसरे कवि जानकीदास (रसिक बिहारी) का नाम भी उल्लेखनीय है। इनका जन्म सन् 1854 में झाँसी में हुआ था। यह बाद में कनक भवन अयोध्या के महन्त बन गये थे। इनके, लिखे 26 ग्रन्थ बताये जाते हैं जिनमें राम रसायन काव्य सौष्ठव की दृष्टि से उत्कृष्ट शृंगारिक महाकाव्य है।

रसिक भक्ति परम्परा के अन्य कवियों में ओरछा की महारानी वृषभान कुमारी एवं चन्देरी राजपरिवार में उत्पन्न सीतारामशरण 'शुभशीला' के साथ मधुरअली (रामचरित) जगतराम (जागे रामायण), पचम सिंह (जुगल नख-शिख), रूप सहाय (रामचन्द्र का नख-शिख), सीताराम (रामायण ा), परमेश्वरी दास (कवित्त रामायण), हरिजन (तुलसी चिन्तामणि), मोहनदास (रामाश्वमेध), इन्द्रजीत (अवध विलास), अङ्कूलाल वैद्य (पारिजात रामायण) आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इन रचनाओं में शृंगारिक भक्ति के विविध स्वरूपों का वर्णन हुआ है। भाव और भाषा दोनों ही दृष्टियों से ये रचनाएँ महत्त्वपूर्ण हैं।

आधुनिक युग के कवियों में सर्वप्रथम 'साकेत' महाकाव्य के रचनाकार मैथिलीशरण गुप्त का नाम आता है, जिन्होंने राम काव्य की सुदीर्घ परम्परा को नया आयाम प्रदान किया। इनके द्वारा रचित पंचवटी खण्डकाव्य भी अत्यन्त लोकप्रिय है। इन्हीं के समकालीन तथा घनिष्ठ परम आत्मीय प्रेम बिहारी जो कि मुंशी अजमेरी के नाम से भी जाने जाते हैं, ने 'बाल रामायण' की रचना की है जिसे इनके पौत्र द्वारा सम्पादित कर सन् 2005 में प्रकाशित किया गया है। इसी परम्परा में लाला परमानन्द प्रधान का नाम आता है जिन्होंने 'प्रमोद रामायण' 'मानस चन्द्रिका' मंजु रामायण' एवं 'रामायण मानस तरंगिनी' आदि ग्रन्थों की रचना की है। इनमें से प्रमोद रामायण महाकाव्य का प्रकाशन वर्ष 2004 में हो चुका है। इन्होंने लगभग दो दर्जन ग्रन्थों का सृजन किया है।[4]

इसी क्रम में कवि वृन्दावन दास रचित 'रामचरितावली' को भी गिना जा सकता है। यह महाकाव्य

अभी अप्रकाशित है। वृन्दावन दास ने भी दो दर्जन से अधिक रचनाएँ की हैं।[5] श्री मनबोधन लाल (बाँदा) इस क्षेत्र में अचर्चित किन्तु विशिष्ट कवि हैं। उनका 'भगवान राम' शीर्षक से 900 पृष्ठीय महाकाव्य आधुनिक हिन्दी रामकाव्य परम्परा के लिए एक चुनौती है। ऐसे ही एक अन्य रचनाकार श्रीयुत श्रीकृष्ण सरल की लगभग 1000 पृष्ठीय रचना 'सरल रामायण' है जो सन् 1996 ई. में प्रकाशित हो चुकी हैं।

रामकाव्य की यह परम्परा वर्तमान समय में भी जारी है परन्तु अब महाकाव्य, खण्डकाव्य या प्रबन्धकाव्य की अपेक्षा रामकथा के विभिन्न पात्रों के चरित्र चित्रण में अधिक रुचि है। उन सभी का उल्लेख न तो सम्भव है और न ही समीचीन होगा। फिर भी उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि रामकथा का केन्द्र बिन्दु बुन्देलखण्ड ही रहा है और आज भी ऐसी रचनाओं का सृजन बुन्देली कवियों द्वारा निरन्तर किया जा रहा है, जिन्हें रामकाव्य की परम्परा में गिना जा सकता है।

सन्दर्भ

1. बुन्देलखण्ड के अज्ञात कवि—(डॉ. गंगाप्रसाद गुप्त 'बरसैंया')
2. राष्ट्रगौरव स्मारिका—1994—(प्रकाशक छत्रसाल रमारक ट्रस्ट छतरपुर)
3. अज्ञात कवि वृन्दावनदास कृत रामचरितावली (लघुशोध) अप्रकाशित
4. अज्ञात कवि लाला परमानन्द प्रधान जीवन और साहित्य—(डॉ. देवीप्रसाद खरे)
5. निज संग्रह से उपलब्ध सामग्री।

रामकथा गायक–बुन्देली कवि रामसखे

–अभिनन्दन गोइल

बुन्देलखण्ड की पावन धरा पर महान् भक्त कवियों ने जन्म लेकर साहित्य साधना की है। जहाँ कालपी भगवान वेद व्यास की जन्मभूमि चिह्नित हुई है, वहीं बबीना (उरई) वाल्मीकि की जन्मभूमि मानी जाती है। रामचरित मानस के रचयिता गोस्वामी तुलसीदास ग्राम राजापुर जिला बाँदा में जन्मे थे, तो भाषा के प्रथमाचार्य कवीन्द्र केशवदास ओरछा में, जिन्होंने रामकथा के महाकाव्य 'रामचन्द्रिका' की रचना कर स्वकल्याण तो किया ही, हिन्दी साहित्य जगत को रामभक्ति की अलौकिक धारा से आप्लावित भी किया। उनके बाद की शताब्दियों में भी बुन्देली के अनेक कवियों की लेखनी से रामभक्ति मुखरित हुई है। इसी तारतम्य में बुन्देली के कवि 'रामसखे' हुए हैं, जिनका जन्म वि.सं. 1720 एवं कविता काल वि.सं. 1754 के आसपास का माना जाता है। आपने राधाकृष्ण और रामसीता विषयक पदों की प्रायः प्रत्येक राग में रचना की है। ये गीत इतने मधुर हैं कि बड़े ही चाव से गाये और सुने जाते रहे हैं। इन पदों का शृंगार शिल्प अलौकिक और मन्त्रमुग्ध कर देने वाला है।

विभिन्न कवियों के कृष्ण-भक्ति विषयक पदों में ही दधि चुराने या छीनने का वर्णन मिलता है लेकिन कविवर रामसखे के श्री राम भी दधि छीन कर मित्रों को खिला रहे हैं। राग चैती गौरी (बड़ो तितारो) में ढला यह पद देखिए।

ये मां दधि लीन्ही हमारी छिनाई
दसरथ नन्दन छैल छबीलौ दीन्ही सखन खवाई।
वन प्रमोद में खेटक खेलत मिलो अचानक आई,
'रामसखे' मोही चितवनि में, मुकुट की लटक दिखाई।[1]

'रागगौरी' में रघुवंशी बालक श्रीराम की अनुपम छवि का वर्णन निश्चित ही आनन्द में सुधबुध भुला देने की सामर्थ्य रखता है।

आये माई खेटक खेल खरारी।
रघुवंशी बालक कोटिन संग, तुरगन की है सवारी,
सीस पाग अनुराग भरी सिर केसरि खैरि सम्हारी।
खौंसे कुसुम पैंच पैंचन में कचन कलिन छवि भारी।
रचि-रचि धरे विविध तरु पल्लव अरुन वरन मनु हारी।
कुण्डल कलित कपोलन डोलत नासा दुज दुतिकारी,
कर में लसत पहुप धनुसायक हंसन सखन तन न्यारी
'रामसखे' रघुनाथ रूपलखि सुधिबुधि सखिन विसारी।[2]

कवि ने, रघुवर के विरह में तड़पते हुए मन की पीड़ा को राग सारंग (सावन्त तारम्) में कितनी कुशलता से पिरोया है।

रघुवर दरसन हमको दीजै हो।
वन प्रमोद की कुंज गलिन में, ढूँढ़त अब सुधि लीजै हो,
बिनु देखे ते सांवरी मूरति, छिनछिन ज्यौं तनु छीजै हो।
'रामसखे' पिय विरहीमन को, इतनि बिलम्ब नहिं कीजै हो।[3]

जनकदुलारी की प्रिय सखी उन्हें आश्वस्त करती है कि श्याम सलोने श्री राम उनसे परिणय हेतु अवश्य आएँगे। शृंगार का अद्‌भुत चित्रण राग चैती गौरी (तारमूल) में अत्यन्त ही मनमोहक है।

मिथिलापुर की नागरि तोकों स्याम ब्याहि लै जैहैं,
सपन भयौ यह मोहि सखी री मुनि संग आजुहि ऐहैं।
तोरि धनुष जयमाल पहिर उर तो सँग भाँवर लैहैं,
सोचु न करु अब जनक लड़ैती रघुवंशी वर पैहैं।
रास विलास विनोद विपिन में कर-कर नृत्य सुख देहैं,
जब तैं भव तै भवन मान करि बैठे तब करि जोर मनैहैं।
बैनी कल गुहिहैं फूलन सों जावक पगन लगैहैं,
गोद जु लैहैं मोद बढ़ैहैं रचि-रचि पान खबैहैं।
तेरे रंग पगिहै निसवासर तो बिन छिन न वितैहैं।
'रामसखे 'प्रभु रूप बावरो मुख निरखत ही रैहैं।[4]

श्री दशरथ नन्दन के चंचल रतनारे नेत्र हृदय को घायल कर एक अलौकिक पीड़ा का सृजन कर देते हैं। राग खम्माच (तारमूल) में यह पद बहुत ही सुन्दर बन पड़ा है।

चंचल दृग रतनारे तेरे, चोट लगा सोय जानै।
सुनु दशरथ के कुँवर लाड़िले कासों कहों को मानैं।
चितवन ही घायल कर डारत राखत नहि तन प्रानै।
रामलला यह पीर अलोकिक 'रामसखे' पहचानै।।[5]

चित्त को हर लेने वाली श्री रघुवीर की छवि से दूर होने की पीड़ा कवि ने राग पर्ज (तारमूल) में व्यक्त की है जो वियोग शृंगार का सशक्त उदाहरण है।

नैनों रूप पियाय जाओ रघुवीर।
ठाँडे रहे प्रिय प्रान पियारे मो जिय होत अधीर,
चितवनि में चित चोरि हमारौ जात भये वे पीर।
'रामसखे' बिरहाग्नि बुझाओ डारि मिलन रसनीर।6

कवि ने श्री कृष्ण की भाँति ही श्री राम को भी नटनागर कहा है और चाँदनी रात्रि में मधुर बंशी वादन के साथ श्री राम और सीता के रास का 'राग विहाग' में मनोहारी चित्रण किया है। अलौकिक दम्पती नृत्य करते हएे जब फिरकी लेते हैं तो उन्हें अपने विवाह में हुई भाँवरों का स्मरण हो आता है। लीजिए अलौकिक दम्पती की लीला का आनन्द।

नटत राम नागर नागरिया।
चन्द्र कला कल बैनु बजावत चन्द्रवती सहचरिया,
रघुनन्दन तोरत मृदु तारन सीता सुरन भरत मनहरिया।

सुनि-सुनि थकित रह्यो सरजू जल मुनिगन सुफल भये बावरिया,
प्यारी अंस पिया भुज धारे पिया अंस प्यारे भुजधरिया।
मनहु तमाल लता कुन्दन की साँवल गौर परसपर अरिया,
सुधि आवत तब ब्याह समै की रास समै दोउ लेत भँवरिया।
या सुख सिन्धु के ऊपर रति पति, कोट वार ने करिया,
वन प्रमोद विहरत नाना बिधि अवधि ललन अरु जनक दुलरिया।
'रामसखे' दम्पति लीला रस लखि-लखि दृगन प्रेम उरभरिया।।[7]

राग विहाग में ही रचा निम्न पद कितना लालित्यपूर्ण है। रास में लीन राम-सीता की अलौकिक जोड़ी की छवि का ध्यान स्वयं भगवान शंकर तक करते हैं। ऐसे में श्रीराम सीता के चरणों के दर्शन हमारे जन्म-मरण को भेंट कर हमें मुक्ति प्रदान कर सकते हैं।

पौंढिये रसिक राम रास के बिहारी।
चुनि-चुनि कलियन सुखद कुंज में चन्द्र कला कल सेज समारी,
निरखि लाल नैन सो नैना अलसानी मिथुलेश कुमारी।
'रामसखे' सखि वचन सुनत पिय करी सैन सुखदैन पियारी।

भज मन जानकी घर चरन।
नवल कोमल कमल लाल गुलाब आभाहरन,
रहत नित्य प्रमोद वन में रास मण्डिल करन।
रत नये नूपुरन पहिरे चिह्न तल बहु वरन,
फिरत सरजू तीर निसु दिन अवधि वीथिन परन।
करी गौतम तीयनि मेल सीय उर आभरन,
करत जिनकौ ध्यान शंकर जानि तारन तरन।
'रामसखे' विलोक सोई पद मिटै जामन मरन।[8]

सन्दर्भ–

1. गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर' सम्पादक बुन्देल वैभव–द्वितीय भाग, प्रकाशक श्री रामेश्वरप्रसाद 'रमेश' बुन्देल वैभव ग्रन्थमाला, टीकमगढ़ (बुन्देलखण्ड), पृ. 370
2. वही, पृष्ठ 369, 370
3. वही, पृष्ठ 369
4. वही, पृष्ठ 370
5. वही, पृष्ठ 371, 372
6. वही, पृष्ठ 371
7. वही, पृष्ठ 372, 373
8. वही, पृष्ठ 373

बुन्देली लोकगीतों में राम

–डॉ. सुशील कुमार शर्मा

प्रवेशिका

बुन्देलखण्ड देश का विशिष्ट अंचल है। इस अंचल में आल्हा-ऊदल-मधुकर शाह-वीरसिंह-हरदौल-चम्पतराय-छत्रसाल-महारानी लक्ष्मीबाई जैसी वीर-वीरांगनाओं ने जन्म लिया है। जगनिक-तुलसी-केशव-भूषण-बिहारी-देव-मैथिलीशरण गुप्त, डॉ. वृन्दावन लाल वर्मा-केदारनाथ अग्रवाल प्रभृति कवियों-लेखकों की लेखनी से उत्कृष्ट साहित्य-सरिता इस अंचल में प्रवाहित हुई है। तात्पर्य यह है कि यह क्षेत्र कलम और करवाल का अद्भुत समन्वयकर्ता रहा है।

मध्यकाल में बुन्देलखण्ड में रामकथा का प्रारम्भ होता है। इसके पूर्व इस अंचल में रामकथा का प्रचलन अत्यल्प था। इसका श्रेय ग्वालियर के कवि विष्णुदास को जाता है। विष्णुदास का रचनाकाल विद्वानों ने सन् 1435 से 1443 के मध्य माना है। रामकथा से सम्बन्धित इनकी कृति 'रामायण कथा' है।[1] ये ग्वालियर के तोमर वंशी नरेश डूँगरेन्द्र सिंह के आश्रित थे।[2] इसके लगभग एक शताब्दी पश्चात् ओरछा में अयोध्या से रामलला का श्रीविग्रह लाया गया और ओरछा रामभक्ति का शक्तिशाली केन्द्र बन गया।

परन्तु इन घटनाओं के भी पूर्व बुन्देलखण्ड में श्री रामकथा प्रचलन में थी और इसका केन्द्र था–चित्रकूट। वाल्मीकि रामायण में श्री राम के चित्रकूट प्रवास का विस्तार से उल्लेख है। भवभूति के नाटकों–'उत्तर रामचरित' और 'महावीरचरित' के कथानकों में रामकथा की उपस्थिति व रामकथा से सम्बन्धित प्राचीन प्रतिमाओं की उपस्थिति से बुन्देलखण्ड में रामकथा की प्राचीनता प्रमाणित है। परंतु इस कथा-धारा का वेग क्षीण था। मध्यकाल में तुलसी ने अपने रामकाव्य द्वारा इस क्षीणता को तीव्रता में परिवर्तित किया। "रामभक्ति का उत्कर्ष तुलसी की रामचरित मानस की देन है। मानस ने ही राम संस्कृति की पुनर्रचना की थी और उसे ऐसी विराट् मूर्ति के रूप में ढाला था, जो भारतीय संस्कृति की बन सके। इसमें भी कोई संदेह नहीं है कि तुलसी की भक्ति और काव्य चित्रकूट के सम्पूर्ण परिवेश का सुफल है। तुलसी द्वारा चुनी हुई आदर्श रामसंस्कृति की आयोजना में बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का योगदान रहा है।"[3]

बुन्देली लोकगीत और राम

प्रोफेसर नर्मदाप्रसाद गुप्त का मानना है कि पहले रामकाव्य के लोकगीतपरक गीतों का ही सृजन हुआ जिनका प्रारम्भ भक्ति आदोलन के पूर्व हो चुका था। प्रो. गुप्त लिखते हैं–"सबसे पहले रामकृष्ण परक लोकगीतों का जन्म हुआ, फिर उन्हीं की प्रेरणा पाकर परिनिष्ठित राम-कृष्ण काव्य रचा गया।

भक्ति-आदोलन के प्रभाव के पूर्व ही बुन्देलखण्ड में रामकृष्ण काव्यपरक लोककाव्य की रचना होने लगी थी लेकिन उसमें धर्म की कट्टरता के लिए कोई स्थान नहीं था।"[4]

बुन्देलखण्ड में राम-सीता और लक्ष्मण का पावन चरित्र जन-जन का कण्ठहार बना। ये पावन पात्र आमजन की सहज अनुभूतियों के सहगामी बने। बुन्देलखण्ड अंचल के सामान्य संस्कार और लोक संस्कार श्री राम के अभाव में अधूरे हैं। जन्म से लेकर 'राम नाम सत्य है' तक और इसके भी आगे मोक्षाभिलाषी जन के पल-पल, पग-पग पर राम हैं। बुन्देलखण्ड का जन दीन-हीन है, दरिद्र है, पर उसे राम-धन का सबसे बड़ा सहारा है। अपनी झोंपड़ी में पुत्र के जन्म को वह साक्षात् राम का जन्म होना ही समझता है—

मोरे अँगना में बाजें बधइयाँ, रामजू ने जनम लयो
काहे के छुरा सें नरा छिनवायो, काहे से करे असनान
रामजू ने जनम लयो।
सोने के छुरा सें न छिनवाये, सरजू में करे असनान
रामजू ने जनम लयो।।[5]

शिशु जन्म के दसवें दिन बुन्देलखण्ड में दस्टोन का नेग सम्पन्न होता है। इस संस्कार के अवसर पर नारियों के कण्ठ से यह 'मधुरला' फूट पड़ती है—

अरे हाँ रे मधुरला बाजे मधुर सुहावनों
अरे हाँ रे मधुरला गउअन के गोबर मँगाइयो
अरे ढिक धर आँगन लिपइयो, मधुरला बाजे मधुर...
अरे हाँ रे मधुरला मुतियन चौक पुराइयो
अरे चंदन पटली उरइयो मधुरला बाजे मधुर...
अरे हाँ रे मधुरला कंचन कलश धराइयो
अरे चौमुख दियल जराइयौ, मधुरला बाजे मधुर...
अरे हाँ रे मधुरला आयी कौसल्या रानी चौक में
राम लक्ष्मन खों कण्ठ लगइयौ मधुरला बाजे मधुर......।[6]

जन्म के विविध संस्कारों के पश्चात् विवाह ही बड़ा संस्कार होता है। इस विवाह के अनेक उपसंस्कार होते हैं। माटी-पूजन, सुतकरा-लिखाई, तेल, हल्दी चढ़ना, लगुन, मण्डप, मैर-पूजा, राछ फिराई-कंकन, मौर बँधाई आदि से लेकर द्वारचार, विदा और बरात आगमन तक बुन्देलखण्ड में विविध आयोजन होते हैं। इन समस्त आयोजनों के अपने गीत हैं, जो इन अवसरों पर गाये जाते हैं और इनके केन्द्र में होते हैं श्री राम। लगुन का एक दृश्य—

रघुनन्दन फूले न समाँय
लगुन आयी हरे-हरे लगुन आयी मोरे अँगना
बाबा सज गय ताऊ सज गय, सज गइ सकल समाज
रघुनन्दन तो ऐसें सज गय जैसें सिरी भगवान
रघुनन्दन फूल न समाँय।[7]

बरात प्रस्थान होने के पूर्व इस अंचल में दूल्हे को घोड़े पर, पालकी में अथवा साइकिल पर बैठाकर ग्राम अथवा नगर-भ्रमण कराया जाता है। इसे 'राछ फिरना' कहते हैं। दूल्हे का घर-घर टीका होता है। यह दूल्हा गलियों में भ्रमण करता हुआ साक्षात् राम का स्वरूप होता है। इसके श्रृंगार का

चित्रण इस लोकगीत में व्यक्त हुआ है, जो इस अवसर पर गाया जाता है–

इन गलियन हो कें लइयो री रघुनाथ बना खों।
सिर पै सैरा बाँदौ राजा बनरे
कलगी पै लाल लगइयो री रघुनाथ बना खों।
चन्दन खोरें काडो राजा बनरे
टिपकी पै लाल लगइयो री रघुनाथ बना खों...।।[8]

वधू के द्वार पर बरात पहुँचने पर द्वारचार (टीका) होता है। इस समय दृश्य ही साकार हो उठता है–

बने दूल्हा छवि देखो भगवान की
दुल्हिन बनीं सिया जानकी।
जैसे दूल्हा अवधबिहारी
वैसइ दुल्हिन जनकदुलारी
जाऊँ तन-मन पै बलिहारी
मंशा पूरन भई सबके अरमान की। दुल्हिन बनी...
ठाँड़े राजा जनक के द्वारा
संगे चारउ राजकुमार
दरसन करते सब नर-नार
धूम छायी है डंका निसान की। दुल्हिन बनी...
पण्डित ठाण्ड़े सगुन बिचारें
कोउ-कोउ मुख सें वेद उचारें
सखियाँ करती हैं न्यौछारें
माया लुट गयी सब हीरा की खान की। दुल्हिन बनी...।।[9]

द्वारचार के पश्चात् बरातियों को भोजन कराया जाता है। इस अवसर पर अनके गीत बुन्देलखण्ड में प्रचलित हैं जिनमें श्रृंगारिकता अधिक होती है। **'मोरे राम सें करें ररियाँ/जनकपुर की सखियाँ/आतर परसी सो पातर परसीं सो परस दईं गुजियाँ जनकपुर की सखियाँ'**–जैसे सरस गीत विवाह की प्रत्येक पंगत में सुनाई दे जाते हैं।

पंगत के पश्चात् अगली रीति होती है चढ़ावा। वर पक्ष की ओर से लाये गये वस्त्राभूषण पहनकर वधू मण्डप में आती है। मण्डप के नीचे वधू के आते ही पण्डित द्वारा इधर मन्त्रोच्चार होता है और उधर नारियों के मुख से गुंजित होता है चढ़ावे के अवसर का यह गीत–

आज सिरी सियाजू को चड़त चड़ाव हरे मण्डप के नीचें जू
धन्न-धन्न दसरथ ने ऐसो समय पाव
बीच-बीच हीरन को जड़ो है जड़ाव
लल्लरी, तिदानों, सतदानों चड़ाव
बरा-बाजू वन्दन को लगौ नीको भाव
आज सिरी सियाजू को चड़त चड़ाव...।[10]

फिर आती है भाँवरों की बारी। आमजन के वर-वधू में राम-सीता ही वर-वधू के रूप में आरोपित हो जाते हैं–

हरे बाँस मण्डप छाये, सियाजू खाँ राम ब्याहन आये।
जब सियाजू की परत भाँवरी रतन जड़त हाँती आये
सियाजू खाँ राम ब्याहन आये।।[11]

विवाह के जितने भी छोटे-बड़े उपसंस्कार हैं, श्रीराम के बिना वे पूर्ण नहीं होते। पाँव पखारना, जेवनार, धान बुवाई, कुँवर कलेवा, विदा, बरात की वापसी, कंकण छोड़ना—तमाम संस्कारों के केन्द्र में राम हैं। बेटी की विदाई का एक पारम्परिक गीत, जिसमें करुणा-ममत्व-उपदेश-आशीर्वाद एकाकार हो गये हैं। प्रसंग है सीताजी की विदाई का—

कच्ची ईंट बाबुल देहरी न धरियो
बिटिया न दइयो परदेश मोरे लाल।
जनक लली तुम फलियो-फूलियो
सदा सुहागन रइयो मोरे लाल।
हमरी सीख लली धरियो सीस पै
चित देकें सुन लइयो मोरे लाल।
जाकें अवधपुर धीरज धरियो
मन में न घबरइयो मोरे लाल।
सास-ससुर की सेवा करियो
रामजू के चरन दबइयो मोरे लाल।।[12]

बुन्देलखण्ड का जन केवल संस्कारों में ही श्री राम को प्रतिष्ठापित नहीं करता, अपितु वह अपने विविध कार्य-व्यापारों के लिए श्री राम से ऊर्जा प्राप्त करता है। इतना ही नहीं, अपनी दीन-हीन दशा को श्री रामकथा से संलग्न कर सहानुभूति और सान्त्वना प्राप्त करता है—

सावन गरजै भादों बरसै पवन चले पुरवाई
कौना बिरछतर भींजत हुइएँ राम-लखन दोउ भाई
राम बिना मोरी सूनी अजुध्या लखन बिना ठकुराई
सीता बिना मोरी सुनी रसुइया कौन करै चतुराई
वन खाँ चले लखन सिय रघुराई।।[13]

दीन-हीन जीवन-यापन करने के उपरांत भी बुन्देलखण्ड का सामान्यजन श्री राम व उनके परिवार के पावन चरित्र पर मुग्ध है और उनके गुणों को धारण करने का अभिलाषी है—

राजा दसरथ से ससुरा दइयो
रानी कौसल्या सी सासू दइयो
भर-सत्रुहन से देवरा दइयो
लखन लाल से वीरा दइयो
राजा जनक से बाबुल दइयो
रानी सुनैना सी मइया दइयो।।[14]

निष्कर्ष

श्रीराम बुन्देलखण्ड के कण-कण में व्याप्त हैं, जन-जन के प्रत्येक स्पन्दन में समाये हुए हैं तथा जन-जीवन के प्रति पल में विराजमान हैं। उनकी यह सतत् और अविरल उपस्थिति बुन्देलखण्ड के लोकगीतों में

स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त हुई है। बुन्देलखण्ड की सामूहिक जन-चेतना पर श्री राम का पावन चरित्र आच्छादित है। लोकगीत जनमानस के भावों को निश्छल अभिव्यक्ति होती है। श्रीरामचरित्र के रूप में यही निश्छल अभिव्यक्ति बुन्देलखण्ड में प्रचलित लोकगीतों में परिलक्षित होती है।

बुन्देलखण्ड में प्रचलित लोकगीतों में श्री राम का पावन चरित्र सदियों से गेय रहा है और यह प्रेरक गेयता भविष्य में भी बनी रहेगी।

सन्दर्भ

1. तोमरों का इतिहास (द्वितीय भाग) : श्री हरिहरनिवास द्विवेदी पृ. 92, विद्या मन्दिर प्रकाशन ग्वालियर, प्रथम संस्करण अप्रैल, 1976
2. वही, पृ. 90
3. बुन्देली संस्कृति और साहित्य : प्रो. नर्मदाप्रसाद गुप्त, पृ. 226 (म.प्र. आदिवासी लोककला परिषद, भोपाल संस्क. 2001)
4. वही, पृ. 141
5. डॉ. लखन लाल खरे (कोलारस) से प्राप्त पारम्परिक बुन्देली गीत
6. बुन्देली लोकगीत और लोकसंस्कृति : डॉ. परशुराम शुक्ल विरही, पृष्ठ 90-91
7. वही, पृ. 92
8. वही, पृ. 96
9. डॉ. लखन लाल खरे (कोलारस) से प्राप्त पारम्परिक बुन्देली गीत
10. वही
11. वही
12. वही
13. डॉ. के.एल. पटेल (छतरपुर) से प्राप्त पारम्परिक बुन्देली गीत
14. वही

बुन्देली गीतों में श्रीराम

–डॉ. (श्रीमती) गायत्री वाजपेयी

आस्था एवं विश्वास के प्रतीक मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम का जीवन भारतीय वाङ्मय का अनुपम व अद्वितीय अधिष्ठान है। रामकथा एक ऐसी संजीवनी है, जिसका पान कर जन-जीवन प्राणवान है। श्री राम केवल ब्रह्म, ईश्वर, अखिल, ब्रह्माण्ड नायक ही नहीं हैं, वरन् भारतीय जन-जन के हृदय मन्दिर में विराजमान एक ऐसे आदर्श प्रतिमान हैं जो पग-पग पर उन्हें प्रेरणा प्रदान करते हैं। वे लोकाभिराम हैं–

लोकाभिरामं रणरंगधीरं,
राजीव नेत्रं रघुवंश नाथं।
कारुण्यरूपं करुणावतारं,
श्रीरामचन्द्रं शरणं प्रपद्ये।।[1]

आज जब संकट की घनघोर घटाएँ चहुँ ओर घिर आयी हैं, जनमत की पवित्रता दूषित की जा रही है। ऐसे कठिन समय में लोकाभिराम मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम का चिन्तन, मनन एवं गुणानुवाद कल्याणकारी है। उनका भू लोक पर अवतार ही रावणत्व को समाप्त करने के लिए युग-युगान्तर से चिर प्रतीक्षित है। आदिकवि वाल्मीकि से लेकर अद्यतन अनेकानेक सन्त महात्मा एवं महाकवि इस भारत भूमि पर अवतरित हुए और उन्होंने अपनी अमृतवाणी से जीवनोद्धारक रामकथा का गान कर लोकोपकार का पुनीत कार्य कर जीवन को कृतार्थ किया।

बुन्देली धरा भी इस योगदान में पीछे नहीं है। लोककवि ने श्री राम के जीवन-चरित्र की सुन्दर झाँकी बुन्देली गीतों में बड़ी श्रद्धा और भक्ति के साथ अंकित की है। शोधालेख में बुन्देली गारी गीतों में वर्णित राम-चरित्र पर विचार करना ही अभीष्ट है। बुन्देलखण्ड में विवाह के अवसर पर गारियाँ गाने का प्रचलन है। गारी गायन की यह परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। त्रेता युग में महाराज दशरथ को भी राम-विवाह के समय जनकपुर की महिलाओं द्वारा सुनायी गयी गारियाँ अत्यन्त प्रिय और आनन्द प्रदायक लगी थीं। इन गारियों की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि ये प्रेमातिरेक से आपूरित अत्यन्त मधुर होती हैं जो देने वाले और सुनने वाले दोनों को अच्छी लगती हैं। राम-विवाह के अवसर पर गायी जाने वाली गारियों का स्वाभाविक चित्र कवि शिरोमणि तुलसीदास एवं केशव दास जी ने इन शब्दों में प्रस्तुत किया है–

पंच कौर करि जेवन लागे। गारि गान सुनि अति अनुरागे।
जेंवत देहिं मधुर धुनि गारी। लै-लै नाम पुरुष अरु नारी।।[2]

आचार्य कवि केशव ने तो रामचन्द्रिका में गारियों की रचना भी की है। जब जनकपुरी के

राजभवन में समस्त पृथ्वी के राजा-महाराजा व अन्य लोग भाँति-भाँति के अन्न से बना हुआ सुस्वादु भोजन करने लगे तब जनकपुरी की नारियाँ अनेक प्रकार की रहस्यपूर्ण गालियाँ देने लगीं। केशव दास जी लिखते हैं—

अब गारि तुम कहँ देहि हम कहि कहा दूलह राम जू।
कछु बाप प्रिय परदार सुनियत करी कहत कुबाम जू।।
को गनै कितने पुरुष कीन्हें कह सब संसार जू।
सुनि कुँवर चित दै वरणि ताको कहियत सब ब्यौहार जू।।[3]

लोक कवियों ने विवाह के अवसर पर गायी जाने वाली, सरस, सुमधुर एवं भावाभिव्यंजक गारी गीतों की रचना की है, जिसमें राम के रूप, शील व सौन्दर्य का बड़ा ही सुन्दर चित्रण मिलता है। राम जन्म के रहस्य को उद्घाटित करती यह मधुर गारी द्रष्टव्य है—

तुम्हरी लीला है अपरम्पार हो, श्याम छलिया हो बड़े।
तुम तो कौसिल्या के जाये, जग में दशरथ लाल कहाये।
तुमको खीर खाय के जाये, जाके चार भाग करवाये।
बाकी सब रानिन मिल खाये, राजा तनक काम न आये।
देखो ऐसे हैं तुम्हारे काम हो, श्याम छलिया हो बड़े।
मुनि इक विश्वामित्र कहाये, सबकी सभा सकल सजाये।
मुनि जब मुख से स्वाहा लाये, सब मिल निसचर धूम मचाये।
उन सब यज्ञ विध्वंस कराये, तबहीं मुनि ने ध्यान लगाये।
चल आये अवधपुर नृप द्वार हो, श्याम छलिया हो बड़े।
फिर तुम विश्वामित्र संग आये, उनने फिर से यज्ञ रचाये।
निसचर फेर सकल घिर आये, तुमने क्षण में मार हटाये।
मुनि के पूरण काज कराये, नभ से सुमन देव बरसाये।
तहँ मारी ताड़का नार हो, श्याम छलिया हो बड़े।
फिर तुम मिथला नगर सिधारे, मग में गौतम नारि उधारे।
पीछे जनक नगर पग धारे, लागे बालक संग तुम्हारे।
तुमने हाट बाट पगधारे, घायल नैन बान कर डारे।
मोहे सकल नर नारि हो, श्याम छलिया हो बड़े।
गवने पुष्प लेन फुलवारी, जहँ पर घूमत जनक दुलारी।
उनकी शोभा अपरम्पारी, सखियाँ चन्द्रवदन उजियारी।
पूजन जात गिरीश कुमारी, उनसे कीन्हीं वहाँ चिन्हारी।
चले गुरु की भय उर धार हो, श्याम छलिया हो बड़े।
सुन्दर भूमि बनी मषशाला, बैठे गुरु युत जहाँ कृपाला।
वहाँ पर जुरे अनेक भुपाला, जिनकी शोभा अमित विशाला।
सबके मन पावन जयमाला, पर न टर्‌यो धनु शम्भु कराला।
गपे भूप हिय हार हो, श्याम छलिया हो बड़े।
सोचहि जनक नगर नर नारी, सुकृत जाय या सुता कुमारी।
यह सुन सीय मातु मन हारी, सिय मन दुःख भयो अति भारी

गुरु की आज्ञा पाय खरारी, क्षण में तोर्‌यो धनुष पुरारी।
आयी सीय माल उर डारी, हो श्याम छलिया हो बड़े।[4]

त्रिलोक के अधिष्ठाता सभी के मन को मोहने वाले हैं। गुरु विश्वामित्र की आज्ञा प्राप्त कर वे महाराज जनक के सुन्दर बगीचे से गुरु के पूजन-अर्चन हेतु फूल चुनने के लिए गये हैं। वहाँ जगत् जननी जानकी जी भी माँ के आदेशानुसार गौरीपूजन के लिए सखियों सहित पधारी हैं। पुष्पवाटिका में राम-सीता के मधुर मिलन एवं परस्पर अनुरागमय समर्पण का सजीव चित्रण लोककवि ने इस गारी गीत में किया है—

सुधर बगीचा जनक राम के सुन्दर विपुल सुहाई जी।
फूल टोरन गये दोनों भाई विश्वामित्र पठाई जी।
गिरजा पूजन चली जानकी संग सखिन सुकुमारी जी।
गिरजा पूज सिय यही मनावे राम भुजन पर होय सहाई जी।
देख राम के रूप जनक बेटी कोटिन भानू लजाये जी।
धन्य-धन्य मिथलापुरबासी जिन ऐसे दर्शन पाये जी।
तुलसीदास भजो भगवाने सीतापति मन भाये जी।[5]

राम-लक्ष्मण की रूप माधुरी अनोखी है जिसे निहारने हेतु जनकपुरवासी गृहकार्य बिसार कर गलियों में निकल आये हैं। नगर की नारियाँ झरोखे से राम-लक्ष्मण के मनोहर रूप को निहार रही हैं। सभी इस युगल रूप को अवलोक कर स्वयं को कृतार्थ अनुभव कर रहे हैं। आपस में सभी कहते हैं कि इस अनुपम शोभा के आगे करोड़ों कामदेव की छवि फीकी है। चार भुजाधारी विष्णु, चार मुख वाले ब्रह्मा, पंचमुखी त्रिपुरारी एवं अन्य देवों की छवि भी इनकी मनमोहक छवि के समक्ष फीकी है। अवधपति महाराज दशरथ के राजकुमार तथा विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा करने वाले ये कौसल्या कुमार ही जनक नन्दिनी के लिए उपयुक्त वर हैं। निश्चय ही मिथिलापति जनक जी राम के रूप को निहारते ही अपना प्रण त्याग देंगे। नगरवासी परस्पर चर्चा करते हैं कि महाराज जनक ने मुनि विश्वामित्र सहित उनका आदर-सत्कार किया है लेकिन अपना प्रण नहीं तोड़ा। परन्तु हमारा मन तो यही कहता है कि श्री राम ही धनुष को तोड़ेंगे और जनकनन्दिनी का वरण करेंगे। लोककवि ने अत्यन्त सुन्दर ढंग से इन भावों को बुन्देली गारी में सँजोया है—

कि ए जू राम लखन गुरु आयसु लेकर जनकपुरी पगधारी।
कि ए जू बालक वृद्ध तरुण नर-नारी धाये काज बिसारी।
कि ए जू निरख सहज सुन्दर दोऊ भाई इकटक रहे निहारी।
कि ए जू नारी भवन झरोखन लागी मोही रूप अपारी।
कि ए जू इन सम काम कोटि छवि नाहिं आयसु करहिं बिचारी।
कि ए जू विष्णु चार भुज विधि मुख चार पंचानन त्रिपुरारी।
कि ए जू अपर देव वश कोउ नाहिं सखि छवि की बलिहारी।
कि ए जू एक सखी बोली मृदुबानी सुनिए वचन हमारी।
कि ए जू अवध नगर दशरथ नृप बालक कौसिक मख रखवारी।
कि ए जू कौसिल्या सुत राम-श्याम हैं गोरे लखन कुमार।
कि ए जू राम रूप मिथिलापति देखत प्रण तज बरै कुमारी।
कि ए जू मुनि समेत सादर सनमाने प्रण नहीं तजत भूपाल।
कि ए जू फूलमती वर मिल हैं सीतहिं टौरे धनुष पुरारी।[6]

श्री राम भ्राता लक्ष्मण सहित मिथिलापति जनकराज के महल में पधारे हैं। उनके लोकोपकारी कार्यों का बखान करते हुए जनकपुर की नारियाँ उनसे हास-परिहास भी करती हैं। लोक कवि इस मधुर विनोद का चित्रण गारी में इस प्रकार करता है—

मिथिलेश के धाम पधारे हो अवधेश लला।
तुम दीनन के रखवारे हो लला, करी मुनि मख की रखवाली हो लला।
गौतम नारी तारी हो लला, तुम दीन बन्धु सुखदाई हो लला।
यह सुनो हमारी बानी हो लला, हैं गोरे लक्ष्मण भैया लला।
अरु गौरी कौसिल्या मैया हो लला, तुम भये कहाँ से कारे लला।
कहो कारण राज दुलारे हो लला, एक बात सुनी हम भारी हो लला।
यह रीत अवध में कैसी हो लला, खीर खाय सुत जावें हो लला।
हम तुमसे कहत लजावे हो लला, हमसे यह नातो बिच कीन्हो लला।
ओ दर्शन आपने दीन्हे हो लला, हम सदा चरण की दासी हो लला।
करो कृपा अवध के वासी हो लला, सब छमियो चूक हमारी हो लला।
हम अवलन ओर निहारी हो लला, सुनो वंश गोपाल पुकारी हो लला
निज राखो लाज हमारी हो लला, मिथिलेश के धाम पधारे हो अवधेश लला।

रघुकुल नन्दन श्रीराम दूल्हा बने हैं और जगत् जननी जानकी दुल्हन बनी हैं। उनकी शोभा देखते ही बनती है। श्री राम और जानकी की जोड़ी एक-दूसरे के अनुरूप है। सभी की अभिलाषाएँ इस युगल रूप को निहार कर पूर्णता को प्राप्त हुई हैं। महाराज दशरथ पुत्रों सहित जनक जी के द्वार पर बिराजे हैं। उनके दर्शन कर जनक सहित सम्पूर्ण पुरवासी आनन्दित हो रहे हैं। मंगल गीत गाये जा रहे हैं, चहुँ ओर आनन्द की वर्षा हो रही है। इस अनुपमेय अवसर की शोभा पर सर्वस्व न्यौछावर है। लोककवि इस दृश्य को इन शब्दों में प्रस्तुत करता है—

बने दूल्हा छवि देखो भगवान की, दुल्हन बनी सिया जानकी।
जैसई दूल्हा अवध बिहारी, तैसई दुल्हन जनक दुलारी।
जाऊँ तन-मन सो बलिहारी, मनसा पूरी भई सबके अरमान की।
ठाढ़े राजा जनक के द्वार, संग में चारऊ राजकुमार।
दर्शन करते सब नर-नार, धूम छायी है डका निसान की।
सखियाँ फूली नहीं समावैं, दसरथ जी को गारी गावें।
दसरथ खड़े-खड़े मुसकावें, गारी गाती हैं, गीता और ज्ञान की।
सिर पर किरीट मुकुट खौ धारे, बाँखें बारम्बार सँवारे।
हो रहीं फूलन की बौछारें, शोभा बरनी न जाय धनुष बान की।
कहें जनक दोई कर जोर, सुनियो-सुनियो अवध किसोर।
मौपे साधे न सध है जलपान की, दुल्हन बनी सिया जानकी।[8]

दशरथ नन्दन श्री राम जनक नन्दिनी सीता के विवाह हेतु मण्डप सजाया गया है। मण्डप स्थापना हेतु बड़े-बड़े सन्त आये हैं। चन्दन के सुन्दर खम्भे बनाये गये हैं, जामुन के पत्तों से उसे आच्छादित किया गया है, चारों ओर खूबसूरत झालर लगायी गयी है। चन्दन के चौक पूरे गये हैं। मण्डप के मध्य राम-सीता की सुन्दर जोड़ी सुशोभित हो रही है। तीनों लोकों में मंगल बधाई बज रही है। देवगण पुष्प वर्षा कर रहे हैं जिसकी सुगन्धि मिथिलानगरी में सुवासित हो रही है। दूल्हा-दुल्हन

की अनुपम शोभा को निहार सुर नर मुनि सभी आनन्दानुभूत हो रहे हैं। गारी गीत में इसका सुन्दर वर्णन इस प्रकार हुआ है–

मोरी भँवर कली जनक सुता के मण्डप साजन सन्तन भीर चली।
रुच-रुच चन्दन खम्ब बनाये जामुन छायी भली मोरी भँवर कली।
हंस मोर बिच-बिच बैठायी सपरा गंग चली मोरी भँवर कली।
चन्दन चौक पुरे वसुधा पर सोहत छैल छली मोरी भँवर कली
तीन भुवन में बाजी बधैया आसन झुण्ड खिली मोरी भँवर कली।
दौर पड़े देवगन दरसन को लेके सुमन डली मोरी भँवर कली।
बरसत सुमन है मिथिलापुर में महकत गली-गली मोरी भँवर कली।
ऊँहें सब मिल संग छटा छवि निरखत गड़ी जनक लली मोरी भँवर कली।[9]

राजा जनक सीता जी का कन्यादान कर रहे हैं, गोदान किया जाना है। सखियाँ कहती हैं हे जनकराज, आपके यहाँ गायों की कमी नहीं है अतः आप ऐसी गाय दीजिए जो सीधी हो, बांधते और छोड़ते समय फुसकारे नहीं। दूध दुहते समय दुहइया को पैर न मारे, बछड़े को खूब दूधपान करावे, घी की कभी कमी न पड़े। सोने से सींग मढ़ा दीजिए तथा पीताम्बर की झोल उढ़वा दीजिए। साथ ही दूध दुहने के लिए कंचन का पात्र भी दे दीजिए। लोक रचनाकार ने इन मधुर भावनाओं को गीत में इस तरह सँजोया है–

ऐसी दइयो जनक जू गाय तुम्हारे यहाँ कौन गाय की कमी।
बाँधत छोरत न फुसकारे न कहूँ लात दुहइये मारे।
आकर बछरा खूब चूखावे घी की कमी कबहूँ न होय।
सोने के दोऊ सींग मड़ा दो पीताम्बर की झूल डरा दो।
चाँदी चारऊ चरण मड़ा दो संगे कंचन दुहनियाँ होय।[10]

कन्यादान हो चुका है। अब श्रीराम सीता की भाँवरे पड़ रही हैं। सभी नारियाँ मंगल गीत गा रही हैं। जगत् के पालक श्री राम दूल्हा बनकर महाराज जनक के द्वार पर पधारे हैं। हे सखी, उनके बड़े भाग्य हैं जो सिया जी सुन्दर-सी दुल्हन बन गयी हैं। महारानी सुनयना का हृदय आनन्द से भरा हुआ है। वे हर्षाभिभूत हो श्रीराम के चरण पखार रही हैं। हाथी, घोड़ा एवं अन्य सामग्री दी जा रही हैं। वर-वधू ने अन्न, बल, सम्पत्ति, सुख शान्ति, सन्तति, ऋतु एवं मित्रता के लिए सप्तपदी[11] की है। दशरथ जी के हृदय में अपार हर्ष हो रहा है। जनक जी ने सभी के भोजन की तैयारी की है। सिया-राम मण्डप तले बैठे हैं सुर नर मुनि सभी हर्ष से पुष्प वर्षा कर रहे हैं–

राम सीता की परती भाँवरे बैठी नारी गावै गारी,
दूल्हा बने जगत् करतार आये जनक राज के द्वार।
उनके सखी बड़े हैं भाग सिया सुन्दर-सी बन गयी दुल्हनियाँ,
खुसी छायी सुनैना भारी जाके रघुवर चरण पखारी।
खुसी छा रही जनक दुआरी हाथी घोड़ा पँखारे कई गाड़ियाँ,
पारी प्रभु संग भाँवर सात सीता उन्हें दई सोपात दसरथ फूले नहीं समात।
जनकराज रचाये ज्यौनारियाँ हो रही सुमंगल मूला,
बैठे सिया राम दोऊ झूला बरसे प्रभु के ऊपर फूला
राम कृष्ण ने बना दई कई गारियाँ।[12]

श्री राम-लक्ष्मण जनकलली सीता जी को ब्याहने के लिए आये हैं। हाथी, घोड़ा, ऊँट, पालकी एवं रथ पर उनकी सवारी है। जनक राज ने उन्हें जनवासे में डेरा दिया है। सखियाँ जनवासे में उन्हें आमन्त्रित करने गयी हैं। वे सखियों से कुछ कहते नहीं हैं केवल मुसकरा कर पान-सुपारी लेते हैं। सखियों को उन्होंने अबीर-गुलाल से रँग दिया है। उनकी रेशमी अँगिया और साड़ी खराब हो गयी है। सभी सखियाँ उनके समक्ष हाथ जोड़कर खड़ी हैं। बार-बार उनके चरणों की बलिहारी जाती हैं। गारी प्रस्तुत है—

राम लखन ब्याहन को आये सीता जनक दुलारी जू वे हाँ-हाँ वे हूँ-हूँ वे
हाथी घोड़ा ऊँट पालकी रथ बग्घी अस्वारी वे.......
डेरा जनवासे में दे दये बाजे अवध बिहारी वे.......
फर्स गलीचा बिछे अनेकन धूम मची है भारी वे.......
कछु न कावे मन मुस्कावे देवे पान सुपारी वे.......
ले गुलाल सखियन खाँ घाले निरदय निपट अनारी वे.......
नसा दई रेसम की अँगिया रन बन हो गयी सारी वे.......
ठाड़ी सब नारी कर जोरे चरनन की बलिहारी वे.......[13]

महाराज जनक व सखियों का आमन्त्रण स्वीकार कर बरात भोजन हेतु जनक जी के राजभवन में पधार चुकी है। महाराज जनक सभी के चरण प्रक्षालन कर आसन प्रदान करते हैं। चतुर रसोइयों द्वारा विविध प्रकार के व्यंजन बनाये गये हैं। निपुण परसइयों द्वारा उन्हें परोसा जा रहा है। राजा दशरथ समाज सहित सुस्वादु भोजन कर आनन्दित हो रहे हैं। पाक कला के मर्मज्ञ लोककवि ने गारी में भाँति-भाँति के व्यंजनों का उल्लेख किया है जो दर्शनीय है—

सहित समाज चले मिथिलापति जनवासे पगधारी जी।
गुरु नृप के पद वन्दन करके विनय अपारी जी।
कृपा बेनि अब करिये राजन भोजन की तैयारी जी।
आई बरात चरण नृप धोये पीढ़न पै बैठारी जी।
हरित मणिन के पत्तल परसे जल कंचन की भारी जी।
चतुर सुआर परोसन लागे नाना विध तरकारी जी।
आलू भटा, तुरइया, परवल, भेड़ा, घुइयाँ न्यारी जी।
मैथी, नौरयाँ, पलकी, केला कमल गटा रसकारी जी।
मूरी, सौफ, करेला, कुलफा, खरबूजा रुचिकारी जी।
राम करेला, घिया, भसीड़े गोभी ककरी न्यारी जी।
चौरइया सकसा की भाजी लौकी सेम नियारी जी।
निम्बू आम करौंदा सूरन और कटहल भारी जी।
बास कुरील मुरार लभेड़े बड़हल अडियाँ न्यारी जी।
अदरख मिरचा और बनायी सिरका केर अचारी जी।
लौकी भतुआ बनो रायता पौदीना की न्यारी जी।
अदरक किशमिश घना छुहारे ओ मिर्चेकारी जी।
साँभर चीनी मसाला सुन्दर इमली रस में डारी जी।
हीशबाई चटनी औरहु जो है पाचनकारी जी।[14]

विवाहोपरान्त अयोध्या नरेश दशरथ वर-वधू सहित अवधपुर आ गये हैं। वहाँ भी समस्त लोकाचारों एवं लोकरीतियों को सम्पन्न कराया जा रहा है। प्रमुदित कौसल्यादि माताएँ अति उमंगित हैं। उनके हृदय में प्रेम का सागर लहलहा रहा है। वे पुत्र राम से पूछती हैं—बेटा! तुम्हारी ससुराल कैसी है? राम जी उत्तर देते हैं कि सास हमारी साक्षात् गंगा और यमुना की तरह पवित्र हैं, ससुर जी तीर्थराज प्रयाग की तरह पुनीत हैं। साले हमारे घोड़ों में घूमते हैं, सलहजें रसोई तैयार करती हैं। माँ तुम्हारे मन्दिर में जिस प्रकार पुतरियाँ बनी हैं, वैसी तुम्हारी बहू है। माता कौसल्या यह सुन कहती हैं बेटा! हमने तुम्हें जन्म दिया, पाला-पोसा लेकिन चार दिन ससुराल में रहे तो वहाँ की प्रसंशा करने लगे। श्रीराम जी कहते हैं यदि यह बात है माँ तो मैं पिता दशरथ जी की शपथ लेता हूँ, अब कभी ससुराल नहीं जाऊँगा। इस पर माँ कौसल्या कहती हैं—बेटा! मैं तो परिहास कर रही थी, तुम तो प्रतिदिन ससुराल जाओ। माँ-बेटे के इस हास-परिहास को लोककवि ने अत्यन्त सरसता के साथ गारी गीत में प्रस्तुत किया है—

हँस-हँस पूछे मात कौसल्या बेटा कैसी बनी ससुराल।
सास हमारी गंगा-जमना ससुर है तीरथ धाम।
सासे हमारी अधिक पियारी देती हैं दूध बियारी।
सारे हमारे घुडला फिरावे साराजे तपें रसोई।
जैसी मात मढ़ भीतर लिखी पुतरिया वैसी है बहु तुम्हारी।
नौ दस मासू बेटा गरभ में राखो बरस दसक लौ सेये।
तीन दिन खो बेटा गये ससुराले सो जाय सिराही ससुरार।
दुहाई खैंचो पिता दसरथ की अब न जैहौं ससुरार।
अपने राम से ररी करत हो बेटा नित उठ जैओ ससुरार।[15]

अवध के राज भवन का यह हास-परिहास तथा हर्ष उल्लास अल्प समय में ही विषाद में परिणत हो जाता है। महारानी कैकेयी द्वारा महाराज दशरथ के पास धरोहर रूप में सुरक्षित दो वरदान प्रथम राम कौ चौदह वर्ष का वनवास तथा द्वितीय भरत के लिए अयोध्या का राज सिंहासन माँगा जाता है। इस प्रसंग को मुखरित कर लोककवि लिखता है—

मत छोड़ो अयोध्या हम कैयाँ सुनो तो सुकमारी सैयाँ।
जब मोरे पति मधुवन को जाते संग में लक्ष्मन देवरा जाते।
उन बिन कहो हम कैसे रहते घर में जियरा लेत भव कैयाँ।
कैकेयी पापिनी ने मतिदीन दशरथ की सुधबुध हर लीनी।
वन की पिता ने आज्ञा दीनी रानी कौसल्या के जिय धीरज नैयाँ।
ठाड़ी सोचे सुमित्रा मन में दोनों छौना गये मधुवन में।
अब सुत लौटें कौन दिनन में बारी सिया की उमर लरकैयाँ।
रथ को ठाड़ करो भगवान सीता बैठ गयी जटयान।
गाड़ी रोक ले घनश्याम बोली साथ में नाथ निवाहो हम कैयाँ।
मत छोड़ो अयोध्या हम कैयाँ सुनो तो सुकमारी सैयाँ।[16]

जिस अयोध्या के राजप्रासाद में आनन्द सिन्धु हिलौरें ले रहा था, वहाँ भयावह स्तब्धता छायी हुई है। सम्पूर्ण नगर शोक के सागर में डूबा हुआ है। माताएँ जल बिन मीन की भाँति तड़प रही हैं। सभी परस्पर यही कह रहे हैं श्री राम-लक्ष्मण वन जा रहे हैं, कोई उन्हें समझा-बुझा कर रोक

ले क्योंकि उनके बिना अयोध्या सूनी हो जाएगी। सीता जी के बिना रसोई सूनी हो जाएगी। यह दुःख असहनीय है। वन के भीषण दुःख, ग्रीष्म का ताप और पावस की बरसात ये कैसे सह पाएँगे। लोककवि कहता है—

वन को चले दोनों भाई इन्हें समझाओ री माई।
आगे-आगे राम चलत हैं पीछे लक्ष्मण भाई।
बीच जानकी अति छवि सोहे सो यह देख न जाई।
भीतर मात कौसल्या रोवे बाहर लक्ष्मन माई।
दसरथ जी ने प्राण तजै हैं सो दुःख सहो न जाई।
राम बिना मोरी सूनी अयोध्या लक्ष्मन बिन ठकुराई।
सीता बिना मोरी सूनी रसोई सो दुःख सहो न जाई।
सावन गरजे भादों लपके पवन चलत पुरवाई।
कौन बिरछ तरे भींजत हुइहें ऐसो दुख सह्यो न जाई।
चौदह बरस राम घर आये घर-घर बजत बधाई।
माता कौसल्या आरती उतारें शोभा बरन न जाई।17

वन मार्ग पर जाते हुए राम, लखन और सीता के दर्शनार्थ लोग अपने गृह कार्य छोड़कर कर निकल पड़ते हैं। उनके रूप, सौन्दर्य एवं सुकुमारता को निहारते हैं, उनका नाम एवं ग्राम जानना चाहते हैं। समस्त घटना प्रसंग जानकर शोकाकुल हो उठे हैं। यथा—

कि ए जू राम लखन सिय जिन सुधि पायी उठ धाये नर नारी।
कि ए जू वैस किशोर देख अति सुन्दर इकटक रहे निहारी।
कि ए जू धन धन मात पिता जिन जाये धन धन भाग हमार।
कि ए जू नाँव गाँव बूझत सखी सचमुच आपुस करहिं विचार।
कि ए जू ब्रह्मन जुगित राम पहिचाने दसरथ राज कुमार।
कि ए जू सकल कथा तिन सबहि सुनायी उपज्यो शोक अपार।
कि ए जू तेहि अवसर इक तापस आयो तप बल तेज अपार।
कि ए जू हीरा राम लखन जू देखी नैयन मग उर धारी।[18]

वन मार्ग पर अज्ञात तपस्वी का श्री राम के दर्शनार्थ आने का उल्लेख मानसकार तुलसीदास ने भी किया है। यथा—

तेहि अवसर एक तापसु आवा। तेज पुंज लघुबयस सुहावा।।
कवि अलखित गति बेषु बिरागी। मन क्रम वचन राम अनुरागी।।[19]

रामाय कार्य नमः अर्थात् श्री राम के कार्य ही स्तुत्य हैं। जब मन वचन और कर्म में ऐक्य स्थापित कर कार्य किये जाते हैं तो सद्‌चरित्र का निर्माण होता है तथा यश की प्राप्ति होती है। श्री राम के कार्य ऐसे ही हैं। उनके समस्त कार्य लोकहितार्थ एवं लोकोद्धारक हैं। लोककवि गारी गीत में उनके इन्हीं कार्यो का स्मरण करता हुआ लिखता है—

दशरथ राज दुलारे जू कौसिल्या के प्यारे जी।
विश्वामित्र की आज्ञा खातिर आप भये रखवारे जी।
लड़े आप मारीच सुबाहु दोनों राक्षस मारे जी।
राजा जनक के धनुष यज्ञ में जनकपुरी पग धारे जी।

गौतम ऋषि की नारी अहिल्या बाको छिन में तारे जी।
टोर धनुष एक ही छिन में जय जयकार पुकारे जी।
लै जयमाल सिया पहिनायी रह गये सब कोई ठाड़े जी।
परसराम को क्रोध भयो है आये सभा मँझारे जी।
हाथ जोड़कर जनक राम जी कोमल वचन उचारे जी।
ब्याही सिया अवध में आये भये आनन्द अपारी जी।
मात-पिता की आज्ञा पाली वन को तुरत सिधारे जी।
पुत्र शोक में प्राण त्याग दै दशरथ स्वर्ग सिधारे जी।
हरी सिया रावण ने वन में हो गये दुःख अपारे जी।
हनूमान सुग्रीव मिले हैं फिर बाली को तारे जी।
खोज लगाकर महावीर जी लंकापुरी पग धारे जी।
सेत बाँध रामेश्वर आपे सेना पार उतारे जी।
एक लाख पूत सवा लख नाती रावण वंश उजारे जी।
रावण मार सिया घर लाये देवन काज सुधारे जी।
पलक ओट न हुइयो स्वामी इन नैनन के तारे जी।
गोपीनाथ पार कर दीजै देके तनक इसारे जी।[20]

श्री राम चरित्र सिन्धु हैं। आदिकवि वाल्मीकि से लेकर आज तक रामकथा के रचयिता कवियों ने रामचरित्र को लोकानुरूप प्रस्तुत किया है। श्री राम के चरित्र की उदारता, विशालता एवं कृपालुता निराली है। उनकी आचरणसंहिता अनुपम एवं अद्भुत है, जो राज्याभिषेक की खबर सुनकर न हर्षित होते हैं न वनवास की दुःखद सूचना उन्हें म्लान कर सकी। दोनों ही स्थितियों में वे एकरस हैं। आनन्दस्वरूप श्री राम सुख और दुख दोनों में एक समान हैं। इस मंगलदायिनी छवि का स्तवन करते हुए तुलसी लिखते हैं–

प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न मम्ले वनवास दुःखतः।
मुखाम्बुज श्रीरघुनन्दनस्य मे सदाऽस्तु सा मञ्जुल मङ्गलप्रदा।।[21]

श्रीराम की आदर्शानुप्रेरित ये पुनीत लीलाएँ आज की उपभोक्तावादी संस्कृति में फँसे मानव को दिशा निर्दिष्ट करने में अत्यन्त सहायक हैं। आज के स्वार्थी, परिग्रह लिप्त, राग-द्वेष के दलदल में आकण्ठ डूबे मनुष्य को उनका त्याग, समर्पण, सेवा, प्रेम एवं उत्सर्ग से आपूरित चरित्र सदैव शाश्वत मूल्यों की शिक्षा देता रहेगा। उनकी लीलाएँ सार्वदेशिक, सार्वभौमिक तथा सार्वयुगीन हैं। वे कल भी जन-जन को लुभाती थीं और कल भी लुभाती रहेंगी। इस तथ्य को स्वीकार करते हुए रामधारी सिंह दिनकर ने स्पष्ट उद्घोष किया है–"साहित्य में तो राम की महिमा अत्यन्त प्रखर हो उठी तथा पूरे भारतवर्ष की संस्कृति दिनों-दिन राममयी होती चली गयी।"[22]

भारतीय धर्म और संस्कृति में श्री राम का स्वभाव और प्रभाव ऐसा रचा-बसा है कि राम के बिना जीवन जीवन नहीं, आत्मा आत्मा नहीं। राम तो एक शक्ति हैं जो प्राणी मात्र में रमण करती है। उनका चरित्र एवं लीलाएँ मननीय, चिन्तनीय एवं अनुकरणीय हैं जो युग-युगान्तर से जन मन को रिझाती रही हैं। लोककवि तो श्रीराम की लीलाओं पर स्वयं को न्यौछावर ही करने को तत्पर है–

तुम्हरी लीला को जाऊँ बलिहारियाँ प्यारे श्री राम जी लला।।
तुम्हरे क्रीट मुकुट सिर राजे कानों में कुण्डल छवि छाजै।।

उर में माल विशाल बिराजै देखत वदन मदन मद लाजै।।
तुमको शम्भू हिय बिच धारियाँ प्यारे श्री राम जी लला।।
तुमने प्रबल निसाचर मारे महि के सारे भार उतारे।।
सुन्दर देवन काज सम्हारे ऋषि मुनि संकट विकट निवारे।।
तुम्हरे यश को सो वेद उचारियाँ प्यारे श्रीराम जी लला।।
वन में मुनि के संग खरारी कीन्हीं उनकी मख रखवारी।।
तारी मग में गौतम नारी फिरतीं जनकपुरी पग धारी।।
तुमने मोही जनकपुर नारियाँ प्यारे श्रीराम जी लला।।
अब तो सिया सहित सब भाई संगै हनुमान सुखदाई।।
मेरे हृदय बसो रघुराई विनती वंश गोपाल सुनाई।।
तुम्हरे चरणों पै तन-मन बारियाँ प्यारे श्री राम जी लला।।[23]

सन्दर्भ

1. राम रक्षा स्तोत्र—श्लोक, 32
2. गोस्वामी तुलसीदास—श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड चौपाई, 1, 6 दोहा, 329
3. केशवदास—राम चन्द्रिका, छठा प्रकाश, पद सं. 29
4. निजी संग्रह
5. वही
6. वही
7. वही
8. वही
9. वही
10. वही
11. आश्वलायन गृह्म सूत्र
12. निजी संग्रह
13. वही
14. वही
15. वही
16. वही
17. वही
18. वही
19. गोस्वामी तुलसीदास—श्रीरामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड चौपाई, 7, 8, दोहा 110
20. निजी संग्रह
21. गोस्वामी तुलसीदास—श्रीरामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड श्लोक सं. 2
22. रामधारी सिंह दिनकर—संस्कृति के चार अध्याय, पृष्ठ 105
23. निजी संग्रह

बुन्देलखण्ड के जन-जीवन में राम

–डॉ. (श्रीमती) पुष्पा दुबे

बुन्देलखण्ड ही नहीं समूचे भारतवर्ष में राम और कृष्ण भारतीय संस्कृति के आधार स्तम्भ रहे हैं। राम और कृष्ण संस्कृति एक-दूसरे के पूरक भी रहे हैं। बुन्देलखण्ड में श्री राम संस्कृति का पुराला केन्द्र चित्रकूट रहा है। राम यहाँ बनवास के समय ठहरे थे। भरत ने भरद्वाज मुनि से चित्रकूट जाने का मार्ग पूछा था तो मुनि ने कहा था–यहाँ से ढाई योजन की दूरी पर एक निर्जन वन में चित्रकूट नाम का पर्वत है। उसके उत्तरी किनारे में मन्दाकिनी नदी बहती है, उसे पार कर चित्रकूट पर्वत मिलेगा। वहाँ पहुँचकर नदी और पर्वत के बीच तुम पर्णकुटी देखोगे (रामायण 2, 86, 10 एवं 12)। राम के ठहरने के कारण चित्रकूट पवित्र हो गया। चित्रकूट के बारे में तो यहाँ प्रसिद्ध है–

जेहि पर बिपदा परत है, सो आवत ऐहि देस।

राम और भरत मिलन भी इसी स्थल पर हुआ। चित्रकूट के समीप ही अत्रि, शरभंग आदि ऋषियों के आश्रम भी थे। राम की जन्मस्थली अयोध्या नगरी थी, जबकि चित्रकूट एक गाँव का आश्रम था। इसलिए कहा जा सकता है कि राम संस्कृति का शरीर अयोध्या है तो चित्रकूट उसकी आत्मा। तभी तुलसी लिखते हैं–

अब चित चेत चित्रकूटहि चल

और यहीं पर

चित्रकूट के घाट पर भई सन्तन की भीर
तुलसिदास चन्दन घिसें तिलक देत रघुवीर।

इसीलिए पूरब-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण किसी भी दिशा से सन्त चित्रकूट अवश्य आते हैं।

लोकगीतों की आधार भूमि शिष्ट साहित्य और शिष्ट साहित्य की प्राणशक्ति लोक साहित्य रहा है। लोकगीतों में श्रीराम का वर्णन रामायण के कथानक के आधार पर हुआ है। हिन्दी का पहला स्वतन्त्र रामकाव्य विष्णुदास की रामायन कथा संवत् 1499 वि. में की गयी।[1] विष्णुदास मुन्तवार ग्वालियर के निवासी थे और ग्वालिर नरेश डूँगरेन्द्र सिंह के आश्रित थे। दोहा चौपाई की लोक प्रचलित शैली ने निश्चित रूप से यहाँ के लोकगीतों को प्रभावित किया होगा।

मध्ययुग में रामभक्ति का प्रमुख आधार ओरछा राज्य था। इस समय यह बुन्देलों की राजधानी था। ओरछा नरेश महाराज मधुकर शाह बुन्देला प्रसिद्ध भक्त थे। मधुकर शाह की पटरानी गणेश कुँवरि अयोध्या से श्री राम को ओरछा लायीं एक जनश्रुति के अनुसार मधुकर शाह ने रानी से विनोद में कहा कि वे श्री राम से साक्षात् लाड़ लड़ाती हैं। इस पर श्री राम को लेकर रानी अयोध्या चली गयी और वहाँ साधना में लीन हो गयीं। जब उन्हें सफलता न मिली तब वे सरयू नदी में जलमग्न

होकर प्राण देने को निश्चय कर नदी में डूबने लगती हैं, तो भगवान राम की मूर्ति उनकी गोद में आ जाती है। राम ने गणेश कुँवरि से शर्तें रखीं—प्रथम अयोध्या में उन का रहना होगा। फिर पुष्य नक्षत्र में अयोध्या से ओरछा आना और रानी के यहाँ रहना। मधुकर शाह ने राम की स्थापना के लिए विशाल मन्दिर का निर्माण करवाया पर राम रानी के महल से उठे नहीं और आज तक विराजे हैं। इस घटना का स्रोत नाभादासकृत भक्तमाल में मिलता है।

प्रणत हित करत सदा रघुराई।
संवत सोला सौ इकतीस में अवधपुरी को जाई।
श्री सरजू असनान करत में आज मिले रघुराई।
मधुकरसाहि नरेश भक्तिमय भक्तमाल में गाई।
तिनकी महारानी गनेस दे, राम ओरछा ल्याई।।

तभी से ओरछा राज्य के वैधानिक कागजों पर रामराज्य की मुहर लगने लगी थी। प्राचीन राजकीय पत्र और सनदों में इसके प्रमाण मिलते हैं। लोक में यह दोहा आज भी प्रचलित है—

राजा मधुकर साहि की रानी कुँवरि गनेस।
अवध पुरी से ओरछा ल्यायीं अवध नरेश।।[1]

ओरछा नरेशों ने रामोपासना को सर्वोपरि महत्त्व दिया। चित्रकूट के पास के क्षेत्रों में रामकथा सम्बन्धी लोकनाट्य प्रचलित थे। राउत कलाप्रिय थे और सहजतः लोक नाट्यों का मंचन करने में रुचि रखते थे। जनश्रुति है कि हर गाँव में उन्होंने मठ तथा उनके सामने चबूतरे बनवाये थे, जिन पर लोक नाट्य और लोक संगीत के उत्सव हर रात हुआ करते थे। राम की लीलाओं पर आधारित लोक नाट्य खेले जाते थे।[2]

बुन्देलखण्ड के लिए यह गर्व का विषय है कि रामकाव्य का उद्भव और उत्कर्ष दोनों यहीं हुए। विष्णुदास ने रामायन कथा से उसका प्रवर्तन किया था तो तुलसी ने शताब्दी बाद रामकथा को इतने उत्कर्ष तक पहुँचा दिया कि वह पद आज तक कोई अन्य ग्रन्थ नहीं पा सका। तुलसी का काव्य समूची भारतीय संस्कृति की प्रतिमूर्ति बन गया।

मध्ययुग में लोककाव्य अधिक लिखा गया और कृष्ण तथा उनसे जुड़े समूचे पात्र जैसे जीवन में ज्यों-त्यों उतार दिये गये। लोक-जीवन में विशेष तौर पर जन्म से निबद्ध संस्कारों में उल्लास बहुत अधिक है। इन लोकगीतों ने प्रत्येक बालक व युवा नर-नारी को राम-लक्ष्मण बना दिया। इन लोकगीतों ने रामकृष्ण में राम, कृष्ण और सीता राधा को ही लोकमय नहीं बनाया, वरन् उसकी संस्कृति को लोकमय बनाकर उसे लोक-जीवन में ढाल दिया, जिससे वह आज तक ढाल बनकर भारतीय संस्कृति की रक्षा करने में सफल हुई है।

लोककवि लोकगीत की रचना लोकानुभूति के आधार पर करता है। राम या कृष्णपरक लोकगीतों में राम या कृष्ण के व्यक्तित्व को लोक सामान्य स्तर पर लाकर लोकोपयोगी स्वरूप दिया गया है। पर उनकी परस्पर विरोधी मौलिकताओं को समाप्त नहीं किया गया। राम एक पत्नीव्रती हैं तो कृष्ण निष्ठुर प्रेमी। लोक ने संयमशील और मर्यादा के संस्कार राम से लिये और प्रेम आनन्द लीला योगेश्वर कृष्ण से। इस तरह दोनों के समन्वय से जीवन की सम्पूर्णता की खोज की गयी। जीवन में राम की अपरिमेय शक्ति की आवश्यकता है। स्मर्तव्य निष्ठा से जीवन में स्थायी सुख की प्राप्ति सम्भव है। वहीं प्रेम से जीवन की सरसता अक्षुण्ण बन सकती है। सीता का जीवन पतिव्रत धर्म व सतीत्व का चरम उत्कर्ष है तो राधा की रागात्मक प्रेमभावना प्रेम का आदर्श रूप स्थापित करती है।

लोक परिस्थिति के अनुरूप चयन करने को स्वतन्त्र है। इस अंचल में राम और कृष्णपरक गीतों के लिए उत्सव और तिथियाँ भी निर्धारित हैं।

रामपरक लोकगीत जन्म से विवाह तक के विविध संस्कारों में अभिन्न हो गये हैं। मध्ययुग में संस्कृति को जीवित रखने के लिए उसके संस्कारों को राममय कर दिया गया है।

इसीलिए दाम्पत्य जीवन में राम को आदर्श माना गया है। वैवाहिक गीतों में बनरा गीतों में राम ही नायक हैं और दुल्हन के रूप में सीता का जोड़ा भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग बन गया है। वहीं सास-ससुर के रूप में राजा दशरथ और रानी कौसल्या आदर्श की प्रतिरूप हैं जिन्हें जीवन में चाहे जन्म का अवसर हो या विवाह का इनके चरित्र का गायन अवश्य होता है। परिवार का विघटन रोकने के लिए लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न जैसे भाई चाहिए जो राम के आदर्शों पर अपने जीवन को ढाल सकें। इसलिए बालक के जन्म से ही माता श्री राम के गुणों के अभिधान की कामना अपने पुत्र में करती है—

1. जन्मे राम अवध चलौ सजनी
2. दशरथ जू के चारु लाल दिन-दिन प्यारे लगें
3. अवध में जन्मे राम सलौना
4. जहाँ जन्मे हैं राम धन्य भाग रघुकुल के।

मानव-जीवन में दशरथ, कौसल्या, राम सीता भरत, शत्रुघ्न के गुणों को समाज सर्वोपरि मानकर चला है। इसलिए जीवन के संस्कारों में इनसे जुड़े लोकगीत प्रचलित हैं—

देखों बना जू जनक लली के।[3]

लोकगीतों में मानव-मूल्यों की प्रतिष्ठा रहती है जिसमें परिवार के प्रत्येक सदस्य की अस्मिता का आख्याान होता है—

हँस-हँस पूछे मात कौसल्या कैसी बनी ससरार
सासो हमारी अधिक पियारी देती है दूध बियारी।

चक्रवर्ती सम्राट की वधू और दूध की बियारी जैसी बात? यह तो लोक में प्रचलित सम्बन्ध है जिसमें हर व्यक्ति में राम-सीता, कौसल्या-दशरथ का प्रतिरूप देखा जाता है।

बुन्देलखण्ड में रामभक्ति का विकास तीन रूपों में हुआ—

1. राम रसिक भक्ति परम्परा
2. ऐश्वर्य मार्गी भक्ति परम्परा
3. निर्गुण निराकार मार्गी भक्ति परम्परा

किन्तु तपसी मार्ग चित्रकूट और आसपास खूब विकसित हुए। राठ (हमीरपुर) के आसपास पनवाड़ी भेड़ी, महोबा, मलुहा, मुहनी, उरई, दतरपुर, गुलगंज आदि न जाने कितने भक्ति केन्द्र हैं जहाँ योगभामी रामभक्ति उपासना के प्राचीन केन्द्र हैं। लोगों की मान्यता है ये भक्त स्वतन्त्रता संग्राम में भी योगदान देते थे जो प्रायः गुप्त रूप में होता था। इनकी उपासना में निर्गुण और सगुण दोनों रूपों की प्रतिष्ठा है किन्तु इन मन्दिरों में सादगी अधिक है। कुछ स्थल तो घोर जंगलों में बने हुए हैं जिनके बारे में बहुत कम लोगों को जानकारी होती है। सच्चे साधू की अनुभूति की प्रधानता इन उपासकों में मिलती है। राम की उपासना के साथ हनुमान की भक्ति का केन्द्र बहुत अधिक बने। आज भी यहाँ हनुमान के मन्दिर थोड़ी-थोड़ी दूरी पर बने हैं। पुराने मंदिर तो हैं ही, नये मन्दिरों की स्थापना भी इस अंचल में बहुत अधिक है। उनसे जुड़ी लोकगीत की ये पंक्तियाँ विवाह में अवश्य

गायी जाती हैं–

हनुमत हैं री रखवारे पवन जू के,
हनुमत हैं रखवारे
हमरे हनुमान बब्बा ऐसें गरजत हैं
जैसे बजत नगाड़े पवन जू रे। हनुमत हैं री रखवारे।

परिस्थितियों के अनुरूप लोक चेतना विकसित होती है, इसलिए हनुमान पचासा, हनुमत पचीसी, लक्ष्मण शतक बहुत अधिक लिखे गये। खनगाँव (जिला छतरपुर) निवासी खुमान (यान कवि 1779-1829 ई.) की भक्तियाँ इतनी प्रसिद्ध हुईं कि धार्मिक अनुष्ठानों में भी इन्हें प्रयुक्त किया गया–

गिरि-गढ़-ढाहन नसाहन हरनवार क्रुद्ध हो करन वार खन दल भंग के।
ठोंसठी जिन्हें रनछौर तज भाजै आदि ठहरे न ठीक ठाक उमड़ उमंग के।
मान कवि ओज उजबूत मजबूत बल विक्रम अक्रूत धरें तू सफ जंग के।
भारी बलवण्ड कालदण्ड ते प्रचण्ड बन्दों उदित उदण्ड भुजदण्ड बजरंग के।

संघर्ष के काल में रामभक्त कवियों ने पौरुष और शक्ति सम्पन्न राज्य का सृजन किया।

अठारहवीं शती में रामभक्ति का प्रसार सामूहिक और व्यक्तिगत दोनों रूपों में हुआ। एक तो सत्रहवीं शती की मुगल आक्रमणकारी नीति की प्रतिक्रिया था दूसरा तत्कालीन संघर्षों से निराशा दूर करने का एक सम्बल। इस समय बहुत अधिक मन्दिरों का निर्माण तीन रूपों में हुआ–(1) 16वीं शती, जबकि रामभक्ति का सूर्य उदित हुआ (2) 18वीं शती मुगलों के कट्टर नीति के विरुद्ध प्रतिक्रिया स्वरूप (3) 19वीं शती के राजसी रामभक्ति के प्रतीक रूप में। इन मन्दिरों में रामनवमी पर राम-विवाह, राम-विजय जैसे सामूहिक उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाये जाते हैं।

सामूहिक रामभक्ति में पड़े व्यवधानों ने वैयक्तिक भक्ति को अधिक प्रेरित किया। जब बाहर राम को पूजना कठिन हो गया, तब हर घर में राम बैठ गये। और इस तरह बुन्देलखण्ड के कण-कण में राम का निवास हो गया। राम और सीता हर घर की पारिवारिक संस्कृति के प्रतीक बन गये।

रामलीला की लोकप्रियता राम के प्रति आस्था, प्रेम और विश्वास का प्रतीक है। इतना ही नहीं स्वाधीनता संग्राम के समय हिन्दू-मुस्लिम एकता स्थापित करने में निराकार 'राम' की उपासना ने महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया।

वृषभानकुँवरि और उनकी रसिक रामभक्ति

–डॉ. लखन लाल खरे

बुन्देलखण्ड देश का विशिष्ट भू-भाग है। कलम-करवाल और करुणा के समन्वय की अद्‌भुत त्रिवेणी का सातत्य निर्मल प्रवाह इस भूखण्ड को वैशिष्ट्य प्रदान करता रहा है। बुन्देलखण्ड की पावन भूमि अखण्ड धर्म-ध्वज का आधार है। चँदेलों के शासनकाल में यहाँ शैव-वैष्णव-सौर-शाक्त और जैन धर्म पर्याप्त पल्लवित-पुष्पित हुआ। इस समय तक विष्णु अपने मूल रूप में पूजे जाते थे। बुन्देलखण्ड में उनके अंशावतारों के ईश्वरीय रूप का प्रचलन, विशेष रूप से राम और कृष्ण का पूजन प्रारम्भ नहीं हुआ था।

मध्यकाल में देश के उत्तरी और मध्य भाग में कृष्ण और राम भक्ति का प्रचार-प्रसार हुआ। इनके प्रमुख केन्द्र क्रमशः ब्रज तथा अवध प्रदेश रहे। यही वह समय था जब चँदेलों के पतनोपरान्त ओरछा में बुन्देला राजवंश की जड़ें दृढ़ हो रही थीं। ओरछा में न केवल यह राजवंश सुदृढ़ हो रहा था, यह स्थल रामभक्ति के शक्ति केन्द्र के रूप में भी उभर रहा था। बुन्देला राजवंश की धार्मिक विशिष्टता यह रही है कि राजपुरुष प्रायः कृष्णोपासक रहे हैं और रानियाँ रामोपासक। ओरछेश मधुकर शाह (सन् 1554-1592 ई.) कृष्णोपासक रहे हैं। इनकी रानी गणेश कुँवरि रामोपासक रही हैं। महारानी गणेश कुँवरि अयोध्या से श्री रामलला का श्रीविग्रह लेकर ओरछा आयी थीं। तभी से बुन्देलखण्ड में श्री रामभक्ति का व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ।

वृषभानकुँवरि का परिचय

महारानी गणेश कुँवरि स्वयं अच्छी कवयित्री थीं और रामभक्ति विषयक पदों की रचना करती थीं। ओरछा राजघराने की अनेक रानियों ने रामभक्ति में स्वयं को समर्पित किया। इतना ही नहीं, इस वंश की अन्य रियासतों–जैतपुर, बिजावर, चरखारी, टेहरी, खनियाधाना आदि–के राजाओं की रानियों ने रामभक्ति के पदों का सृजन किया। इन रामभक्त कवयित्रियों में ओरछा राजवंशान्तर्गत महारानी वृषभानकुँवरि का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

ओरछा के बुन्देला वंश के महाराज विक्रमाजीत ने ई. सन् 1783 में अपनी राजधानी ओरछा से टेहरी (टीकमगढ़) स्थापित की। इसी वंश में टीकमगढ़ के महाराज प्रताप सिंह जूदेव की पत्नी थीं महारानी वृषभानकुँवरि। वृषभानकुँवरि ने अयोध्या के कनक भवन मन्दिर का निर्माण कराया था और इस मन्दिर में युगल विग्रह श्री कनक भवन विहारिणी एवं बिहारी जू की प्राण प्रतिष्ठा विक्रम संवत् 1948 वैशाख शुक्ल 6 गुरुवार (ई. सन् 1891) में हुई थी।[1] ये रामभक्ति धारा के रसिक सम्प्रदाय से थीं और रामप्रिया उपनाम से कविता करती थीं। अपने ग्रन्थ 'अनुराग चन्द्रिका' में वृषभानकुँवरिजी

ने अपना परिचय स्वयं इस प्रकार दिया है–

ओरछेश राजेन्द्रमनि बर बुन्देलकुल ईस।
महत महेन्द्र सपाद प्रभु भूसित जस रजनीस।।
प्रभु तारापति सिन्धु हरि पंच सब्द रमनीय।
आदि बरन जुरि नाम जिहिं जस कीरत रमनीय।।
श्री महेन्द्र महाराज पद सहित सवाई जास।
विद्यमान टेहरी नगर टीकमगढ़ जु प्रकास।।
राजगान बुन्देलवर सर आमद इलकाब।
जी.सी.आई.ई. सहित दिय अँग्रेज खिताब।।
विजय सिंह बाघाट पति प्रमरसुता मम नाम।
श्री वृषभानकुमारि भनि उक्त महीपति बाम।
श्री सीता सहचरि सदा रामप्रिया उपनाम।।
सरस उपासक रीति तें दम्पतिरति सब जाम।
पटरानी पद पाइकैं तिहिं महेन्द्र प्रभु संग।
श्री दम्पति पद प्रीति करि साधु सुकृत अभंग।।
श्री अनुराग सुचन्द्रिका यह सुग्रन्थ रमनीय।
श्री दम्पति जस रस रसिक सोधहिं कवि कमनीय।।
नव रस अंक निसेष सित सप्रमार्ग गुरुवार।
ग्रन्थ पूर्ण टेहरी नगर ओड़छेन्द्र थल सार।।[2]

वृषभानकुँवरि द्वारा सृजित निम्नलिखित ग्रन्थ बताये जाते हैं–

1. दम्पति विनोद लहरी
2. मिथिलाजी की बधाई
3. बना
4. होरी रहस
5. झूलन रहस और पावस
6. भक्त विरुदावली
7. औरंग भक्ति की
8. दानलीला
9. अनुराग चन्द्रिका
10. वृषभान विनोद
11. श्रीमद्रामचन्द्र माधुर्यलीलामृतसार
12. सीतागुन मंजरी

इन ग्रन्थों में से अनुराग चन्द्रिका में रास सम्बन्धी 104 पद और अनेक दोहे हैं। कृति की भूमिका दोहों में लिखी गयी है। पदों की टीका बुन्देली गद्य में है। विवेच्य कवयित्री द्वारा विरचित उपर्युक्त ग्रन्थों में से होरी रहस, वृषभान विनोद तथा श्रीमद्रामचन्द्र माधुर्यलीलामृतसार प्रकाशित हैं। एक और प्रकाशित ग्रन्थ–सीता गुन मंजरी का एक पृष्ठ टीकमगढ़ (बुन्देलखण्ड) के वरिष्ठ साहित्यकार पं. श्री हरिविष्णु अवस्थी जी के पास है।[3]

रसिक सम्प्रदाय का उद्भव

श्री राम की मर्यादामण्डित भक्ति के विरोध में राधाकृष्ण की माधुरी भक्ति की तर्ज पर रसिक सम्प्रदाय का उद्भव हुआ। अयोध्या के महन्त रामचरणदास जी महाराज का जानकी घाट पर आश्रम था। इनके द्वारा प्रवर्तित सम्प्रदाय स्वसुखी सम्प्रदाय कहलाया। इस सम्प्रदाय के आराधक श्री राम को लालजी साहब की संज्ञा प्रदान कर स्वयं स्त्रीवेश में रहते थे। स्वसुखी सम्प्रदाय का मत था कि श्री राम ने 99 रास किये। एक रास श्री राम के जीवन में शेष रहा था जो उन्होंने कृष्णावतार में पूर्ण किया। (डॉ. परशुराम शुक्ल 'विरही' शिवपुरी द्वारा प्रदत्त जानकारी)

रामचरणदास जी के उपरान्त छपरा के श्री जीवारामदास ने इस शृंगारी व्यवस्था को ग्रहण कर दम्पती भाव के स्थान पर इसे सखा-सखी के रूप में उपस्थित किया। इस प्रशाखा का उन्होंने नामकरण किया—तत्सुखी सम्प्रदाय। अयोध्या के ही श्री युगलान्यशरण ने इस सम्प्रदाय का प्रचार-प्रसार किया। रीवा नरेश रघुराजसिंह इस सम्प्रदाय से अत्यधिक प्रभावित थे। इन्होंने चित्रकूट में प्रमोद वन का निर्माण करवाया।[4] इस वन को वृन्दावन की भाँति रामरास का स्थान प्रचारित किया गया। रामभक्ति की इस रसिक शाखा में अनेक भक्तकवि हुए हैं। इनमें रामप्रियाशरण (संवत् 1760 ग्रन्थ-सीतायन), रीवा नरेश विश्वनाथ सिंह (संवत् 1790 ग्रन्थ-रामायण) रामनाथ प्रधान (संवत् 1900 ग्रन्थ-रामहोरी) तथा जनकराज किशोरीशरण (मधुर अली, संवत् 1900) आदि के प्रमुख नाम हैं।[5] रसिक सम्प्रदाय के भक्त श्री राम के मर्यादा पुरुषोत्तम की छवि स्वीकार नहीं करते। ये भक्त उनकी आराधना पूर्णतः माधुरी भाव से ठीक वैसे ही करते हैं जैसे कृष्ण-राधा की आराधना कृष्ण भक्तों ने शृंगारी भावना से की है।

वृषभानकुँवरि और उनकी रामभक्ति

ओरछेश मधुकर शाह की रानी गणेश कुँवरि ने अयोध्या से रामलला को ओरछा लाकर बुन्देलखण्ड में रामभक्ति का सूत्रपात किया था। श्रीराम की यह भक्ति मर्यादा पुराषोत्तम के रूप में थी। कालान्तर में इस राजघराने की रानियों ने रामभक्ति का रसिक रूप स्वीकार किया। वृषभानकुँवरि रसिक सम्प्रदाय में प्रमुख थीं। बुन्देलखण्ड में रसिक सम्प्रदाय की स्थापना और उसके पल्लवन का श्रेय वृषभानकुँवरि को ही है। यह भी सत्य है कि श्री राम के मर्यादा पुरुषोत्तम रूप को ही बुन्देलखण्ड ने स्वीकार किया, उनकी माधुरी भक्ति को इस क्षेत्र में मान्यता प्राप्त न हो सकी। महारानियों के द्वारा इस सम्प्रदाय का बुन्देलखण्ड में बीजवपन हुआ और उनके साथ ही इस सम्प्रदाय-विटप का बुन्देलखण्ड से उत्पाटन हो गया। इसका जो माधुर्य भाव था, वह कुछ वर्षों पूर्व तक ग्राणीण क्षेत्रों में विवाहादि शुभ अवसरों पर गाये जाने वाले जेवनार गीतों में घोर अश्लीलता के रूप में उपस्थित था। यदा-कदा यह दृश्य अब भी पंगतों के अवसर पर ग्रामीण क्षेत्रों में दिखाई-सुनाई दे जाता है। इन गारी गीतों में वर-पक्ष के सदस्यों—वर की माँ, पिता, बहन आदि पर अश्लील सम्बन्धों के ताने मारे जाते हैं। परन्तु इतना होने पर भी इसमें वासना का भाव नहीं होता।

वृषभानकुँवरि के राम मर्यादा में आबद्ध नहीं हैं। वे न तो 'रामलला' हैं और न ही 'राजा'। वे मात्र छैल और छैला हैं, जिन्हें सखी होरी खिलाती है और लाल को 'जो मन भाता है' 'उसके लिए उद्यत रहती है। सखियाँ श्रीराम के कपोलों पर गुलाल मलने को आतुर हैं, उनका नारी-सा शृंगार करना चाहती हैं और 'कामकेलि' सिखाना चाहती हैं—

आवो छैल तुमें होरी खिलावें मनभावें सोई लाल करावें।
सखी सिरमौर गहे मनभावन केशर रंग बरसावें।
अबीर गुलाल कपोलन मीजों नार सिंगार बनावें
काम कल केल सिखावें।[6]

मात्र ब्रज बालाएँ ही दधि बेचना नहीं जानतीं, अवध की नवेलियाँ भी दधि बेचने जाती हैं। ब्रज में यदि कुंजवन है तो अवध में प्रमोद वन। अद्भुत साम्य उपस्थित किया है कवयित्री ने–

डगर में छेड़े अकेली जान के रसमातौ नृपति किशोर
मैं दधि बेचन जाततीं सखी वनप्रमोद की ओर
अनुज सखा संग में लिये फिर हेरत हमरी ओर
वृषभानकुँवरि को हँस मिले पिया मो चितके चितचोर।[7]

रसिक श्री राम सखियों के साथ अनोखी होरी खेल रहे हैं। वे गुरुजनों की भी लाज नहीं करते। सखियों को पनघट पर रोकते हैं और उनसे रार मचाते हैं–

राजकुँवर गरबीलो मो से खेले अनोखी होरी लाल।
तनक न लाज करत गुरजन की रोके बाट रसीलौ
क्रीट मुकुट मकराकृत कुण्डल पीतवसन चटकीलौ।
पनघट रोकत रार मचावत पेड़ें परो है नवीलौ।।[8]

रामप्रिया (वृषभानकुँवरि) ने अपने आराध्य रसिक राम की लीला गायन में उन समस्त उपादानों का आश्रय ग्रहण किया है जो श्री कृष्ण के माधुरी भक्ति के हैं। होली तो शृंगार का उद्दीपन पर्व है ही। अन्य प्रसंगों को भी कवयित्री ने मनोयोग से ग्रहण किया है। दान लीला, पनघट-प्रसंग, नगर-भ्रमण, मार्ग-रोकना, बरजोरी करना, नैन-नचाना, श्रावण मास में पिया-प्रियतम का झूला झूलना, प्रमोद वन में शरद-ज्योत्सना में रास रचाना आदि रसमय प्रसंगों के अंकन में रामप्रियाजी की लेखनी अत्यन्त दक्ष रही है। शृंगार के दोनों पक्षों का कवयित्री ने वर्णन किया तो है, परन्तु इसका रस पक्ष ही उन्हें विशेष प्रिय रहा है। विप्रलम्भ में उनका मन उतना रमा नहीं है। विप्रलम्भ के पद संयोग की अपेक्षा कम ही हैं–

प्रीतम बिन रतियाँ कैसे कटैं
अवध छैल दिलदारयार बिन विरह विथा अब कापै कटै
हिय की पीर अब कासौं कहौं सजनी मदन दर्द कहौ कैसे घटै
जनक लली सुन मोर मनोरथ यह जग में कहौ कासैं सहै।
रामप्रिया आशिक भई तुम पर जुगल नाम निशिजाम रटै।।[9]

रामप्रिया जी का वस्तु वर्णन विस्तृत है। श्री राम जन्म, श्री किशोरी जी का जन्म, बधावा, जन्म महोत्सव, पुष्पवाटिका-प्रसंग, श्रीराम का दूल्हा-वेश, जेवनार आदि का अनुपम वर्णन कवयित्री ने किया है। पुष्पवाटिका और नगर-भ्रमण प्रसंग तो सीधे-सीधे 'मानस' से प्रभावित हैं। तुलसी की 'रामलला नहछू' में भी विवाह के अवसर पर गाये जाने वाले कतिपय शृंगारिक नहछू हैं–

कटि के छीन बरिनिआँ छाता पानिहि हो।
चन्दबदनि मृगलोचनि सब रस खानिहि हो।[10]
नैन बिसाल नउनिआँ भौं चमकावहि हो।
देइ गारी रनिवासहिं प्रमुदित गावइ हो।[11]

जेवनार के शृंगारिक पदों के सृजन का हलका-सा संकेत गोस्वामीजी कर ही चुके थे—

पंच कँवल करि जेवन लागे। गारि गान सुनि अति अनुरागे।
जेवँत देहिं मधुर धुनि गारी। लै लै नाम पुरुष अरु नारी।।
समय सुहावनि गारि विराजा। हँसत राउ सुनि सहित समाजा।।[12]

'लै लै नाम पुरुष अरु नारी' की गारी-गायन का विस्तार वृषभानकुँवारि ने अपने अनेक पदों में और गीतों में किया है—

सॉंता बिहिन तुमारी लालजी रघुनन्दन की नारीजू
तुमसे बची रिसिन ने पाई, ऋषि नारी वे कहांई जू
तुमरी बहिनी सौत हमारी एक बड़ी या हाँसीजू
हम माँगीती अपने बिरन को तुम अपने गृह राखी जू।[13]

एक गारी सुनो महाराज तो रसभरी गावति हैं
हम सुनी महामहिपाल सो रिषि बुलवावत हैं।
महलन में देत निवास सो सुत उपजावत हैं
महारानी बड़ी रसखानि सो अधिक रमावत हैं
जो जाँचत हैं मुनराज सुमन सो पुजावत हैं।[14]

तुमसे पूँछत इक बात लाल सकुचावत हैं
प्यारे पितु करतूत की साख सो सब जग जानत है
हम कहत बड़न की बात अधिक शरमावत हैं
मइया तुमरी रसखान सो कोविद गावत हैं
अति काम कला में प्रवीन केलि मन भावत हैं
पितु नवल जानि मनमाहि बहुत दुख नावत हैं
बलवान पुरुष को खोज बहुत करवावत हैं
ऋषराज बड़े तपसाल बहुत मनभावत हैं
मुनि साधि के आशिरवाद से सुत उपजावत हैं
अब साँच कहाँ नृप लाल कवन पितु मानत हैं
इक भारी अचम्भे की बात सुनो समझावत हैं
पितु तीन सुनें सुत चार सो की के कहावत हैं

नवकोकसार की कला भली विधि जानत हैं
आसन चौंसट की गुरु नारि ऋषि जानति हैं
वे काम कला में प्रवीण श्रीसान्ता कहावति हैं।
तुम्हरी बहिनी की चाह नृमतिसत राखत हैं।[15]

रघुवंशी राजकुमार हमारी इक गारी सुनो
तुमरी बहिनी के गुण अमित कहत हम हृदय गुनो।

वाके नैना आम जैसी फाँक विकट कजरारे हैं
हँस हेरन चित के चोर मदन मतवारे हैं
वा के नवजोवन अनुरूप विल्व फल भारे हैं।
जस कस कंचुकि के बीच गेंद जुग-धारे हैं
वाकी त्रिवली रेखा उदर नाम मनहारी है
जुग जंघा कदलि समान चाल गजन्यारी है
राज विश्वा (वैश्या?) कैसो सा (ज?) पुरुष मगजोय रही।
नहिं कपायो कोउ बलवान समुझचित सोच रही
नवजोवन लषन लाल देखि पलंग पर आय गयी
जिय जानी गुलटानार गरे-से लाइ लई।।[16]

वृषभानकुँवरि ने उपर्युक्त घोर शृंगारिक विनोद गीतों के अतिरिक्त स्वस्थ शृंगार पदों का सृजन भी किया है। बुन्देलखण्ड में वर को 'बना' अथवा 'बनरा' और वधू को 'बनी' अथवा 'बनरी' कहते हैं। 'बना' सम्भवतः 'वर' का ही बुन्देली अपभ्रंश हो और इसकी तर्ज पर स्त्रीलिंग में 'बनी' हो गया हो। अस्तु, वृषभानकुँवरि जी द्वारा विरचित 'बना', 'बनी' अत्यन्त लोकप्रिय है। सूचना क्रान्ति के आगमन के पूर्व तक बुन्देलखण्ड का हर 'बना' राम और प्रत्येक 'बनी जनकदुलारी ही होती थी–

बाँकी चलन हँसन बनरे की
माथे मौर खौर चन्दन की फुँदरी हलन लटक जुलफन की
ब्याह विभूषन सोहत सुन्दर राजकुँवर छवि दलन मदन की
अली वृषभानकुँवरि मनभावत जुग जीवे जोरी सियावर की।[17]

क्या बनरा मजेदार सलोना
तुरग नचावत बदन दिखावत चितवन में पड़ डारत टोना।[18]

बना जी तोरी अँखिया लागनी हो
अरुन कंज कारे रतनारे मदन बान के घालनी हो।[19]

इस प्रकार के बना, बनरी और गारियाँ आज भी बुन्देलखण्ड में कहीं-कहीं सुनाई दे जाती हैं। ये गारियाँ और बनरे वृषभानकुँवरि द्वारा विरचित होते हैं। यह अलग बात है कि इनकी लोकप्रियता से प्रेरित होकर अन्य रचनाकारों ने भी इनकी देखादेखी गारियाँ और बनरे रचे।

वृषभानकुँवरि जी ने रसिक सम्प्रदाय की विधि के प्रतिकूल विनय के पदों का भी सृजन किया है, परन्तु ये संख्या में कम हैं। पर, जो भी और जितने भी हैं, वे निश्छल और भावुक हृदय के सरल उद्गार हैं–

तुमैं प्रभू बाँह गहे की लाज।
आयी दीन सरन आरतजन सुनौ गरीब निवाज
अधम उधारन विरदतिहारे सुन आयी महाराज
रामप्रिया सब भाँत तुमारी तुम त्रिभुवन सिरताज ॥[20]

सारांश

वृषभानकुँवरि जी के सम्पूर्ण काव्य का मूल स्वर विशुद्धतः शृंगार है। शृंगार भाव से इन्होंने श्री रामभक्ति-सरयू में अवगाहन किया है। बुन्देलखण्ड में प्रचलित बुन्देली के अपने छन्दों—गारी, बनरा-बनरी, मधुरला, बधावा, कजरी, फाग, झूला, लेद आदि में इन्होंने काव्य-सृजन किया है। इनके अतिरिक्त पद, दोहा, ठुमरी, भैरवी, रसिया, गजल जैसे शास्त्रीय, लोकगीतों तथा उर्दू-छन्दों का आश्रय भी ग्रहण किया है। कवयित्री की भाषा सीधी-सरल और आडम्बरहीन बुन्देली है। इसमें ब्रज और अवधी के अतिरिक्त अरबी-फारसी के प्रचलित शब्दों का सहज प्रयोग है। मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रायः अभाव है। तोड़-फोड़ के कारण शब्दों का प्रकृत रूप भी यत्र-तत्र विकृत हुआ है।

परन्तु, बुन्देलखण्ड में श्री राम भक्ति की रसिक धारा को प्रवाहित करने में वृषभानकुँवरि के अवदान को अनदेखा नहीं किया जा सकता।

सन्दर्भ

1. वृषभान विनोद : सम्पादक : अजय कुमार छावछरिया (ट. अपपप.पग) कोशल पब्लिशिंग हाउस, लेखेश्वर काम्प्लेक्स, नाका बाईपास, विश्वविद्यालय मार्ग, फैजाबाद, संस्करण 2012
2. पं. श्री हरि विष्णु अवस्थी, अवस्थी चौक, टीकमगढ़ द्वारा प्रदत्त जानकारी
3. वही
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी)—भक्तिकाल
5. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास डॉ. राम कुमार वर्मा, पृ. 482 (रामनारायण बेनी माधव इलाहाबाद, छठा संस्ककरण, 1971)
6. वृषभान विनोद : सम्पादक—अजय कुमार छावछरिया, पद संख्या-79, पृ. 50
7. वही, पद सं.-100, पृ. 54
8. वही, पद सं.-107, पृ. 56
9. वही, पद सं.-184, पृ. 73
10. रामलला नहछू : गोस्वामी तुलसीदास, छन्द संख्या. 8 (गीता प्रेस गोरखपुर)
11. वही, छन्द संख्या-5
12. श्रीरामचरितमानस : गोस्वामी तुलसीदास : बालकाण्ड, 1, 6, 7/329
13. वृषभान विनोद, पद सं. 44, पृ. 39
14. वही, पद सं. 45, पृ. 39
15. वही, पद सं. 46, पृ. 40
16. वही, पद सं. 48, पृ. 41-42
17. वही, पद सं. 30, पृ. 32
18. वही, पद सं. 31, पृ. 32
19. वही, पद सं. 34, पृ. 33
20. वही, पद सं. 345, पृ. 112

बुन्देलखण्ड के रामभक्त मुसलमान कवि

–डॉ. कामिनी

समाज में अनेक जातियों और नस्लों के लोग रहते हैं। उनके रीति-रिवाज और धर्म अलग-अलग हैं। धर्म के नाम पर लोग लड़ते रहे और समाज को आन्दोलित करते रहे। मनुष्य का इतिहास धर्म, राष्ट्रीयता, इतिहास आदि के नाम पर संघर्षों और युद्धों का इतिहास है। स्थाई और सार्थक एकता के लिए भीतरी प्रयास की आवश्यकता होती है। ऐसे प्रयास सन्त और कवि ही कर सकते हैं। मुसलमान कवियों ने हिन्दी में रचनाएँ लिखीं और राम तथा कृष्ण के प्रति भक्ति भावना प्रकट की तथा सामाजिक समरसता स्थापित करने का प्रयास किया। 'इन मुसलमान हरिजनन पै कोटिक हिन्दू वारिये।' हिन्दी के मुसलमान कवियों में सन्देश रासककार अब्दुर्रहमान और भारतीयता के अमर गायक अमीर खुसरो का नाम प्रमुख है। इसी क्रम में मुल्ला दाऊद का ग्रन्थ 'चन्दावत' है।[1] कुतुबन, मंझन, जायसी, नूर मोहम्मद आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। अमीर खुसरो के बाद सबसे प्रभावशाली नाम कबीर का है। कबीर की खरी-खरी बातों से हिन्दू और मुसलमानों का कट्टरपंथी वर्ग आहत हुआ। अकबर के दरबार में हिन्दी साहित्य का कोहिनूर अब्दुर्रहीम खान खाना सद्भाव स्थापित करने वाला बहुत बड़ा नाम है। रहीम के दोहे जन-मानस में लोकप्रिय हैं–

चित्रकूट में रमि रहे, रहिमन अवध नरेश।
जा पर विपदा परत है, सो आवत इहि देस।।

रहीम की तरह रसखान कवि का नाम अत्यन्त श्रद्धा से लिया जाता है। इनका वास्तविक नाम सैयद इब्राहिम था। इनके आराध्य कृष्ण थे। इस परम्परा को आगे बढ़ाने में मुस्लिम कवियों ने अपना योगदान दिया है।

बुन्देलखण्ड में कई मुसलमान रामभक्त हुए हैं। इनमें कुछ मुसलमान कवियों का उल्लेख किया जा रहा है–

1. कारेबेग फकीर–डॉ॰ गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर' ने बुन्देलखण्ड के कवियों पर बृहत् शोध-कार्य किया है।[2] कारेबेग फकीर मुसलमान रंगरेज फकीर थे। डॉ॰ निर्भय साधना के अनुसार–'सागर जिले के रहली गाँव में इनका जन्म हुआ था। इनका रचनाकाल संवत् 1843 है। कथा है कि किसी ब्राह्मण पुत्र से इनकी घनिष्ठ मित्रता थी। वे कहीं बाहर गये हुए थे, इसी बीच मित्र की अचानक मृत्यु हो गयी। लौटने पर समाचार मिला तो ये श्मशान भूमि की तरफ दौड़े और दूर से ही चिल्लाकर कहा–खबरदार जीवित व्यक्ति को चिता पर मत रखना और पास आकर कहा–मित्र उठो। शव नहीं उठा, तब इन्होंने 108 कवित्त पढ़े। अन्तिम कवित्त पूरा होते-होते मृतक जीवित हो गया।'[3]

'मुस्फिक सफीक बदल दोस्त तू रफीक मेरा,

तू ही नजदीकी है, हकीकी ख्याल कीजिए।
बन्दे की अरज दोस्त बस्ताये गरज अटकी,
मेरी ओर देख जरा अब तो दर्श दीजिए।
कारे का करार पड़ा है, तेरे दरम्यान द्वार,
अब चाहूँ दीदार बेमुरब्बत न हूजिए।
हिन्दुअन के नाथ तौ हमारा कछू दावा नहीं,
जगत के नाथ तौ हमारी सुध लीजिए।।

डॉ॰ लखनलाल खरे कारे बेग फकीर की जन्मस्थली ललितपुर मानते हैं।[4]

ऐंनसांई ने अपने काव्य की पावन-धारा प्रवाहित की। संवत् 1902 में आपने अपनी नश्वर देह का त्याग किया।

2. नबीवख्श 'फलक'—साम्प्रदायिक सद्भाव के लिए अपने काव्य-सृजन के द्वारा 'फलक' जी द्वारा किया गया कार्य सदैव याद किया जाएगा। उनका परिचय निम्न छन्द में मिलता है—

राम या रहीम का न भेद मान,
मन्दिर में मस्जिद में रोज-रोज जाता हूँ।
आयतें कुरान की खुशी से पढ़ता हूँ यथा,
वेद और पुरान के तथैव गीत गाता हूँ।
मेरे यहाँ काशी और काबा में न भेदभाव,
साधुओं फकीरों में प्रसन्नता दिखाता हूँ।
हिन्दी की जुवान हिन्दी-उर्दू का गुमान मुझे,
दतिया निवासी कवि 'फलक' कहाता हूँ।।

तुलसीदास ने 'केसव कहि न जाइ का कहिए'—कहकर संसार की क्षणभंगुरता को प्रतिपादित किया है। इसी प्रकार 'फलक' भी अपने काव्य में शून्यवाद का प्रतिपादन करते हैं[6]—

रंक राव सुकृती, अधी, कुटी-झोंपड़ी मौन।
सपना है ये सब जगत अपन पराया कौन?
जैसे हैं अमीर जन, वैसे ही गरीब लोग,
जैसे नर तैसे पशु, सारी एक माया है।
पापी है न कोई, परमात्मा न कोई कहीं,
कोई न पुरुष ना नपुंसक न जाया है।
देवता न दानव है, दानवी न दैवी सृष्टि,
मन्दिर न मस्जिद का रूप कहीं पाया है।
विधि का बनाया यह जग, एक सपना है,
कोई भी कहीं भी नहीं अपना पराया है।।

'फलक' का जन्म सन् 1892 में दतिया में हुआ था। विन्ध्यकोकिल भैयालाल व्यास ने 'फलक' के व्यक्तित्व को इस प्रकार रूपायित किया है—'फलक का रंग साँवला था। छबीला गोल मुख मण्डल, हँसती आँखें, मुसकुराते दाँत, खसखसी खिचड़ी दाढ़ी और सँवरी हुई मूँछें, औसत कद, अलीगढ़ी पायजामा, उसके ऊपर कालरदार सिलेटी रंग का कोट तथा सिर पर गहरी झब्बेदार लाल रंग की तुर्की टोपी पहनते थे।'[7] कवि सम्मेलनों में जब वे यह छन्द पढ़ते तो श्रोता झूम उठते थे—

दे सके तृप्ति तृषाकुल को वह निर्मल नीर प्रपात का हूँ मैं,
कंज खिला हृदयों के सके, वह बाल दिनेश, प्रभात का हूँ मैं।
देश की उन्नति चाहता हूँ, सदा सेवक भारतमाता का हूँ मैं।
मीर-नजीर का चातक हूँ, रहमान रहीम की जात का हूँ मैं।।

'फलक' का जीवन सादगी और संयम से पूर्ण था। वे पाँचों वक्त की नमाज़ पढ़ते थे। मन्दिरों का कोई अनुष्ठान अथवा व्रत-त्यौहार तब तक पूरा नहीं होता था, जब तक फलक जी उसमें शामिल न हों। वे भगवान की मूर्ति के सामने भाव-विभोर होकर गा उठते थे। कवि-सम्मेलनों का प्रारम्भ फलक जी की सरस्वती वन्दना से ही होता था—

मुसलमान हिन्दू यहाँ मस्त कुरान पुरान में,
भेदभाव तज भारती सबकी बसहुँ जुबान में।

'फलक' जी ने लगभग तीस वर्षों तक काव्य-साधना की। अपने गुरु श्री बलवीर सिंह के प्रति उनके हृदय में अपार श्रद्धा थी—

गुरुवर श्री बलवीर सिंह बन्दहुँ बारम्बार।
जासु कृपा-घन फलक सों बरसावत कृतिधार।।

'फलक' की कोई स्वतन्त्र काव्य-कृति नहीं है उन्होंने स्फुट पद ही लिखे हैं। सरस्वती वन्दना का छन्द देखकर कोई अनुमान नहीं लगा सकता कि यह किसी मुसलमान कवि की रचना है—

बुद्धि वरदानी, महारानी सुखखानी जग,
उपमा न जानी वेद-भेद कह थाके हैं।
ध्यावत रमेश, शेष धनद सुरेश आदि,
गावत विमल गुन कवि नित ताके हैं।
रिद्धि सिद्धि वैभव महान दान दैन हारी,
कहत 'फलक' सब फल मन साके है।
काव्य रस रंजनि स्वभक्त भयभंजनि त्यों,
वन्दनीय चरण सरोज शारदा के हैं।।

कवि 'फलक' अपने उद्धार के लिए परमसत्ता को पुकारते हैं—

दीनबन्धु अशरण शरण, प्रभुवर दीनानाथ।
भव सागर सों तारिये, पकरि फलक कौ हाथ।।
दीन हों दुखी हों, दीनबन्धु है तिहारो नाम,
जैसे जिन भजे तिन्हें तैसे तुम तारे हैं।
विनय हमारी पै न कान नेंक दीन्हीं आय,
टेरि-टेरि बेरि-बेरि बाट हेरि हारे हैं।
पापन भरी है नाथ, भौंर में फँसी है नाव,
भय मँझधार है न सूझत किनारे हैं।
सोच निजवान तुम्हें तारने परैगो मोंहि,
ब्याध और अजामिल तें 'फलक' न न्यारे हैं।।

परम आराध्य प्रभु श्रीराम वन गमन करें, इसकी प्रार्थना कितनी हृदय विदारक है—

राम, लखन, सीय वन चले, रोकौ बनहिं न जाँय।
कठिन भूमि कोमल चरन 'फलक' परेंगे जाँय।
अवधपुरी की दशा नेंक तौ विचार करौ,
आप बन रैहौ यहाँ दुख बढ़ि जैहैं नाथ।
दसरथ वृद्ध राजभार कौ सम्हारिबे कों,
कैसे फिर चउदा बरस कड़ि पैहैं नाथ।
आपको निवास यहाँ सकल प्रजा की चाह,
टेक निज राखिबे को सब अड़ि जैहैं नाथ।
कोमल चरन बन भूमि है कठोर महा,
पाँयन में 'फलक' तिहारे पड़ि जैहैं नाथ।

फलक जी ने कभी-भी राम और रहीम में भेद नहीं किया। फलक की काव्य रसधारा में रसखान के रस और कबीर की सजगता का भाव प्रकट होता है। 58 वर्ष की आयु में सन् 1950 में फलक जी का देहावसान हुआ।[8] भैयालाल व्यास के कथनानुसार आप बलवीर सिंह फौजदार, वासुदेव गोस्वामी और चतुरेश के साथ कविता करते थे।

3. सैयद अमीर अली 'मीर'—अमीर अली का जन्म सागर जिले की देवरी तहसील में हुआ था। इनका जन्म अनुमानतः 1885 ई. और 1890 के मध्य हुआ था।[9] प्रारम्भ में आप देवरी में अपने चाचा मीर रहमत अली की मनिहारी की दुकान पर बैठते थे। इनकी प्रेरणा से देवरी में 'मीर मण्डल कवि समाज' की स्थापना हुई थी। मीर साहब का पूरा जीवन अभावों में बीता किन्तु वे हँसते-हँसते परिस्थितियों से संघर्ष करते रहे। सन् 1937 में एक रेल दुर्घटना में इन का दुखद निधन हो गया।

मीर साहब की लेखनी अनवरत चलती रही। मीर समस्या पूर्ति में अत्यन्त सिद्धहस्त थे। सबसे पहली जो समस्या पूर्ति इनके द्वारा की गयी, वह थी—

'लोभ तें अमी के अहि चढ़्यो जात चन्द पै'

यह समस्या इस प्रकार उन्होंने सुलझाई—

सीताराम ब्याह को उछाह अप लोक सब,
जनक समाज बलि जात सुख कन्द पै।
वेद कुल रीति जैसी आज्ञा वशिष्ठ दीनी,
हाववें के सुन्दर शुभ समय निह द्वन्द्व पै।
ता समय दुलहि माँग भरवे चलायौ हाथ,
दूल्हा ने सिन्दूर लय अंगूठा अमन्द पै।
उपमा तहाँ ऐसी मन आयी कवि मीर मानो,
लोभ तें अमी के अहि चढ़्यो जात चंद पै।।[10]

सैयद अमीर अली 'मीर' ने जो दर्द और पीड़ा भोगी, उससे उनका काव्य आप्लावित हुआ। राम उनके आराध्य रहे।

ऐसे अनेक कवि बुन्देलखण्ड में हुए हैं, जिनकी आस्था राम में थी।[11] उनके काव्य में यह भाव दृष्टिगत होता है। उनकी वाणी ने समाज को आन्दोलित किया और स्वस्थ वातावरण का निर्माण किया।

सन्दर्भ

1. मध्य प्रदेश के मुसलमान कवि—श्रीचन्द्र जैन, सन् 1957, पृष्ठ—2-3।
2. बुन्देल वैभव (पंचम खण्ड)—गौरी शंकर द्विवेदी 'शंकर' बुन्देल वैभव ग्रन्थमाला, टीकमगढ़, संवत् 1992 वि., पृष्ठ 375।
3. हिन्दी के मुसलमान कवियों का कृष्ण काव्य—डॉ. साधना निर्भय, साहित्य भवन प्रा. लि., 93, के. पी. कक्कड़ रोड, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1991, पृष्ठ 151।
4. सामाजिक समरसता में मुसलमान हिन्दी कवियों का योगदान—डॉ. लखनलाल खरे, रजनी प्रकाशन, दिल्ली 2009, पृष्ठ 68।
5. मनमृग छौना—डॉ. कामिनी, आराधना ब्रदर्स, कानपुर, 1983, पृष्ठ 18।
6. सामाजिक समरसता में मुसलमान हिन्दी कवियों का योगदान—पृष्ठ 89।
7. बिन्ध्य कोकिल भैयालाल व्यास, छतरपुर से की गयी भेंट, दिनांक 13 फरवरी 2012।
8. श्री कामता प्रसाद सड़ैया, दतिया से दूरभाष पर की गयी चर्चा, दिनांक 25-3-2013।
9. राष्ट्र गौरव (साहित्य अंक) सम्पादक डॉ. गंगा प्रसाद गुप्त, बरसैया, बुन्देलखण्ड केशरी छत्रसाल स्मारक पब्लिक ट्रस्ट चौक बाजार, छतरपुर, 1994, पृष्ठ 150।
10. बुन्देली वसन्त—सम्पादक डॉ. बहादुर सिंह परमार, बुन्देली विकास संस्थान, बसारी, जिला छतरपुर (म.प्र.), सन् 2008, पृष्ठ 39।
11. दतिया उद्‌भव और विकास—सम्पादक के. बी. एल. पाण्डेय 1986, दतिया के प्राचीन तथा अर्वाचीन कवि—कामता प्रसाद सड़ैया, पृष्ठ 188।

रामकथा ग्रन्थों के रचयिताः परमानन्द प्रधान

–डॉ. देवी प्रसाद खरे 'प्रसाद'

सत्रह तोपों की सलामी वाले बुन्देलखण्ड का सबसे बड़ा ओरछा राज्य, न केवल साहित्य के क्षेत्र में अग्रणी रहा, बल्कि ललित कलाओं में भी श्रेष्ठ गौरव प्राप्त करने वाला राज्य रहा। आचार्य केशव के साहित्य, उनकी शिष्या राय प्रवीण के संगीत तथा मन्दिरों में उत्कीर्ण भित्तिचित्रों की त्रिवेणी के साथ-साथ बुन्देली स्थापत्य एवं मूर्तिकला के लिए यह राज्य बहुचर्चित रहा है।

ओरछा राज्य की एक विलक्षणता और रही। यहाँ के महाराजे शासक जहाँ कृष्ण भक्ति हेतु मथुरा-वृन्दावन तीर्थाटन हेतु जाते थे, वहीं इनकी रानियाँ राम भक्ति में पूर्ण आस्था रखते हुए अयोध्या में कनक भवन में श्री राम के दरबार में मत्था टेकने जाया करतीं। ओरछा के श्री राम राजा मन्दिर में दैनिक आरती में अब भी गाया जाता है–

"मधुकर शाह महाराज की रानी कुँअर गणेश।
अवध पुरी से ओरछा लायीं अवध नरेश।
सप्त धार सरयू बहे नग्र ओड़छा धाम।
फूल बाग नौ चौक में बिराजें राजाराम।"

उक्त आरती से इस किंवदन्ती को बल मिलता है कि महाराजा मधुकर शाह ने अपनी महारानी को व्यंग्य में ही सही, यह उलाहना दिया कि अबकी बार तो भगवान राम को ही अपने साथ लेती आओगी, जिसे महारानी कुँअर गणेश ने पूरा कर दिखाया था। सम्भवतः यही कारण रहा होगा कि यहाँ के साहित्यकारों ने श्री राम तथा श्री कृष्ण की भक्ति में अपनी-अपनी आस्था प्रकट करते हुए भक्ति ग्रन्थों की रचनाओं से साहित्य को महिमा मण्डित किया।

इसी ओरछा राज्य की राजधानी टीकमगढ़ (टेहरी) में जन्मे लाला परमानन्द प्रधान[1] उस विलक्षण प्रतिभा वाले आचार्य कवि हुए जिन्होंने श्री तुलसीकृत 'रामचरित मानस' को आधार मानकर चार रामायणों की रचना की तथा संस्कृत की शिवकृत 'अमर रामायण' को आधार मानकर 'प्रमोद रामायण[2] जैसा महाकाव्य रच डाला जिसमें श्री राम के रसिक शिरोमणि वाले स्वरूप का श्रेष्ठ चित्रण करते हुए उनको भोगानन्द लोक वासी निरूपित किया।

श्री प्रधान द्वारा रचित 32 ग्रन्थों में 14 ग्रन्थ भक्ति सम्बन्धी, 05 ग्रन्थ नीति सम्बन्धी, 12 ग्रन्थ विविध तथा 01 ग्रन्थ रम्भा-शुक संवाद शृंगार प्रधान ग्रन्थ है। इन 14 भक्ति सम्बन्धी ग्रन्थों में चार ग्रन्थों का आधार प्रातः स्मरणीय गोस्वामी तुलसीदास जी रचित रामरचित मानस है, जिनका अति संक्षिप्त विवरण देने के उपरान्त प्रमोद रामायण पर प्रकाश डालना समीचीन होगा।

1. मंजू रामायण

यह महाकाव्य संवत् 1949 में रामचरित मानस में वर्णित सातों काण्डों पर आधारित है। कुछ प्रक्षिप्त कथाओं में सती सुलोचना की कथा, अहिरावण द्वारा श्री राम-लक्ष्मण को पाताल लोक ले जाने एवं श्री हनुमान जी द्वारा अहिरावण वध तथा श्री राम की सहायता करने सम्बन्धी 899 ललित पद[3] छन्दों में की गयी है।

2. रामायण मानस दर्पण

यह ग्रन्थ 'मानस' में वर्णित सातों काण्डों पर आधारित 1278 छन्दों में संवत् 1950 में रचित है।

3. रामायण मानस तरंगिणी

इस रामायण में कुल 387 छन्द हैं। 'मानस' के सातों काण्डों की संक्षेप में कथा दी गयी है।

4. रामायण मानस चन्द्रिका

'मानस' की कथा को मात्र 192 छन्दों में काव्यमय वर्णन देकर श्री राम की भक्ति को ही प्रधान जी ने सर्वोत्कृष्ट माना है।

उपर्युक्त चारों रामायणों के अतिरिक्त श्री प्रधान ने निम्नांकित कृतियों में भी श्री राम की भक्ति का वर्णन किया है—

(i) जानकी मंगल—10 विलास व 516 ललित पद छन्द

(ii) रामचन्द्र पचासा—51 सवैया छन्द—रचनाकाल संवत् 1951

(iii) विश्वम्भर सुमिरिणी—18 ललित पद छन्द। प्रत्येक छन्द की चौथी पंक्ति में 'विश्वम्भर जगदीश विरद कत मेरी वार विसारत' की पुनरुक्ति है।

(iv) अपराध भंजन श्री रामचन्द्र चालीसी—कुल 28 छन्दों की रचना है। प्रत्येक सवैया की अन्तिम पंक्ति निम्नानुसार है—

'अपराध क्षमा कर श्री रघुवीर महादुख सागर पार करौ।'

(v) वर्ण चौंतीसी—यह श्री प्रधान की एक अनूठी रचना है। इसमें दोहा छन्द का प्रयोग करते हुए कवि ने अपने इष्ट श्री राम का यशोगान किया है। छन्द द्रष्टव्य है जिसमें समस्त चौदह शब्द 'प' वर्ण से बने हैं—रचना काल संवत् 1960 है।

'पावन परम प्रभाव प्रिय प्रेम पियूष प्रदीन।
पद पंकज पूरक प्रमुद परमानंद पन पीन।'

कबीर दास जी ने बीजक (एमैनी 75) में चौंतीस अक्षर में हजारों ब्रह्म नाम देखकर ईश्वर में जिस तरह श्रद्धा व्यक्त की है, वैसे ही प्रधान ने अपनी भक्ति भावना व्यक्त की है।

प्रमोद रामायण

प्रमोद रामायण में भक्ति भावना प्रमुख है, किन्तु गोस्वामी तुलसीदास जी की भाँति राम को मर्यादा पुरुषोत्तम नहीं, अपितु रसिक शिरोमणि के रूप में बताया गया है जो भोगानन्द लोक में निवास करते हैं। इस महाकाव्य में 62 विलास हैं। इस ग्रन्थ की रचना संस्कृत भाषा की अमर रामायण

के आधार पर की गयी है जो शिवकृत है। प्रमुख रूप से इस ग्रन्थ का प्रकाशन सन् 2004 में पूर्ण हुआ। प्रकाशित कृति में 303 पृष्ठ हैं, जिनका अति संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत है–

प्रथम विलास–इसमें पार्वती संस्कार वर्णन है। भरद्वाज मुनि ने मुनिराज याज्ञवल्क्य जी से विनय किया कि दशरथ सुत राम की वही कथा, जो शंकर जी ने पार्वती जी को सुनायी का वर्णन कीजिए। श्री शंकर जी ने पार्वती जी की सुसंस्कृत होने की परीक्षा लेकर उन्हें रामकथा सुनाने योग्य जान धन्य समझा। तदोपरान्त सीता-राम की मूर्ति की स्थापना की गयी एवं शम्भु (शंकर जी) ने इनका सोलह विधि से पूजन किया।

"सिय रघुवर के मन्त्र उदारा। जुगल षडक्षर जे श्रुति सारा।।
चतुर्विंस अक्षर वर जोई। व्याख्या नाम कहत बुध लोई।।
सो गायत्री अति सुखदायक। संकर सुमति सिन्धु सब लायक।।
महा सम्भु अरु विष्णु महाना। उत्सव सुनि सिय सदन सुजाना।।
निज-निज सक्तिन कौ संग लीन्हैं। आये तिंहि अवसर मुद भीनैं।।"

उपर्युक्त छन्दों में नारी की शक्ति निरूपित कर चित्रित किया गया है। अग्रिम छन्दों में महाविष्णु द्वारा सीता जी की आरती (अस्तुति) का मनोरम वर्णन है।

"महा विष्नु अस्तुति सिय केरी। करी कहत तिहिं भाव निवेरी।"

इस प्रकार पार्वती संस्कार वर्णन उपरान्त शंकर जी से राम तत्त्व की जिज्ञासा पूर्ण करने हेतु विनय किया गया है।

द्वितीय विलास–इस विलास में सीता रामचन्द्र प्रादुर्भाव का वर्णन है। सीता-राम के गुणों को मन में धारण करने पर मोक्ष से भी अधिक सुख बताया गया है।

'मोक्षहु में न होत सुख सो है। सिय रघुवर गुन मन मधि जो है।'

चारों वेदों का वर्णन प्रकट करने वाला छन्द दृष्टव्य है–

"साम वेद सीकार तैं, तातैं यजुर अमन्द।
रिग रातैं सुमकार तैं, प्रगट अथर्वन छन्द।"

वे रस को अन्य की भाँति ब्रह्मानन्द सहोदर नहीं कहते, बल्कि ब्रह्मानन्द ही कहते हैं–

"राम ब्रह्म सुख धाम, प्रगट भयो रस रूप।
तातैं कविता में कहत, 'ब्रह्मानन्द' अनूप।"

उन्होंने रस की पूर्णता वाला सोरठा रच कर अपने में आचार्यत्व रूप की छाप छोड़ी। छन्द द्रष्टव्य है–

"मिलि विभाव अनुभाव, सात्वक संचारी तथा।
जहँ प्रगटत थिर भाव, रस पूरन वरनत सुकवि।"

इस विलास में आठ प्रकार के रस–यथा–शृंगार, हास्य, करुण, अद्भुत, वीर, भयानक, बीभत्स और रौद्र तथा पाँच प्रकार की भक्ति अन्तर्गत दास्य, सख्य, वात्सल्य, शन्त, शृंगार के अतिरिक्त छठे प्रकार ने मिश्र भक्ति को वर्णित कर प्रत्येक रस एवं भक्ति के वरन एवं देवताओं का उल्लेख किया है। उन्होंने विलास के अन्त में दुर्लभ कथा वर्णन का संकेत इस तरह दिया है–

"अब सु प्रश्न किय जौन, बरनहुँ ताह विचित्र बिधि।
सावधान सुन तौन, अति दुरलभ रसवत कथा।"

तीसरा विलास–इस विलास में पाँच प्रकार के जीवों का वर्णन किया है। यथा–

"भनत जीव श्रुति पंच विधि कैवल्य अरु नित्य।

मुक्त मोक्ष अरथी बहुरि, वरनत बद्ध अनित्य।।"

इस विलास में दुर्लभ कथानक का विस्तार करते हुए विरजा नगरी, नारायन गिरि पर नारायनपुर तथा नारायन वन का वर्णन है, जहाँ असंख्य तनुधारी अपनी-अपनी शक्तियों सहित शोभित हैं। इसके आगे ज्योति धामगिरि पर भास्वरा नामक पुरी व भास्वरा वन में वसन्त ऋतु पूर्ण है, जहाँ हरि देव के वाम भाग में लावन्या शोभित है।

चतुर्थ विलास–इस विलास में श्री रामचन्द्र जी के भोगानन्द लोक का वर्णन है। इन धामों से आगे गम्भीर सिन्धु है, जहाँ समुद्रक नामक अवनि है, जिस पर–

"सप्त द्वीप सागर सहित सप्तावरन अनूप।
मुक्त जीव तिन मूधि लसत अनुसंगिक सुख रूप।"

इसके आगे निम्नांकित सातों द्वीपों का वर्णन है–

1. चन्द्र द्वीप, 2. भद्र द्वीप, 3. पंगल द्वीप, 4. प्रभा द्वीप, 5. हय द्वीप, 6. गज द्वीप, 7. भोगानन्द।

"सप्तम द्वीप सुभग सुख दाता। भोगानन्द नाम अवदाता।
कौशल देश मध्य तिहिं केरे। तिमि मैथिल जुत देस घनेरे।
नगर अयोध्या कौशल माहीं। मिथिल मध्य मिथिलापुर जाहीं।"

इसके आगे स्वर्ग लोक पाताल लोक आदि का वर्णन है।

पंचम विलास–इस विलास में वानवती स्वर विष्णु कन्या विवाह का वर्णन है। विष्णु भक्त राजा मण्डलेश्वर वानावतीपुर में राज्य करता था जिसके दो पुत्र पुरुकान्त तथा महाकान्त थे। महावीर तथा सुवीरा मण्डलेश्वर के विमाता के पुत्र थे। महावीर के दो पुत्र वीरशक्ति तथा वीरकान्त तथा सुवीरा के दो पुत्र विद्याकान्त व सूरकान्त थे।

मण्डलेश्वर राजा की रानी चन्द्रकरा की पुत्री सुरंजसा, महावीरा की पत्नी सुखावानी की पुत्री सुकला एवं सुरीरा की पत्नी चन्द्रवली की पुत्री चन्द्रमा थीं।

एक दिन नारद मुनि स्वेच्छा से उपवन में आये, जहाँ इन तीनों पुत्रियों ने मुनिवर से आशीष लिया। हस्तरेखा देख कर मुनि ने कहा कि इन्हें राम नाम का पति मिलेगा।

"सिव पूजन प्रभाव सब कन्या। राम नाम पति पावह धन्या।
परी हस्तरेखा यह भाती। यह सुन कहन लगीं सखिंयाती।"

सम्पूर्ण कथा का वृत्तान्त मुनिराज ने समझाया। दशरथ सुत श्री राम का विवाह वसिष्ठ जी को बुलवा कर विधान सहित उक्त तीनों कन्याओं के साथ सम्पन्न हुआ।

षष्ठ विलास–इस विलास में दशरथ जी की पत्नियों व पुत्रों के नामों का वर्णन है–श्री दशरथ जी के दो भाइयों विक्रम रथ तथा यशोरथ एवं विक्रम रथ के दो पुत्रों भानु प्रभ तथा गुन प्रभ तथा यशोरथ के दो पुत्रों भद्र कांनि व चित्र विक्रम एवं दशरथ जी के चार पुत्रों राम, लक्ष्मण, भरत व रिपुसूदन का वर्णन है।

सप्तम विलास–इस विलास में रुपालिका नगरी में महामति नामक क्षत्रिय राजा के यहाँ दस कन्याओं का एक ही लग्न में जन्म व नारद जी द्वारा समस्त कन्याओं का राजा दशरथ जी के साथ विवाह का परामर्श व विवाह का वर्णन है।

अष्टम विलास–इस विलास में दशरथ जी के अष्ट रत्नों व राम जी की माता जी की सेवा में 16 प्रमुख दासियों का वर्णन है।

नवम विलास–इस विलास में श्री रामचन्द्र जी के पितृ पक्ष तथा मातृ पक्ष व अनेक सम्बन्धियों

का वर्णन है। इस विलास में वर्णित छन्दों के आधार पर शोध प्रबन्ध में अग्रलिखित वंशावली इन पंक्तियों के लेखक ने तैयार की। वंशावली द्रष्टव्य है।

देवकला जी राजा दशरथ की बहन हैं, जिनका विवाह राजा संधि राज से वैदिक विधि से सम्पन्न हुआ। श्री नामदेव देवकला जी के सुपुत्र हैं।

'श्री नृप दशरथ की भगनि दिव्य रूपनी पर्म।
देव कला नामा ललित वलित सकल सुभ कर्म।
संधि राज नरनाथ, सालनीक सुत तास वर।
किय विवाह तिहिं साथ, वेद विहित सनमान करि।'

दशम विलास–इस विलास में मिथिलापति वैभव वर्णन है।

ग्याहरवाँ विलास–इस विलास में अयोध्या वैभव वर्णन है।

बारहवाँ विलास–इस विलास में अयोध्या वैभव का पंच दुर्गान्तर वैभव तथा चारों वर्णों के लोगों द्वारा स्व वर्ण में कर्तव्य पूरित करने का वर्णन है।

तेरहवाँ विलास–इसके अन्तर्गत अयोध्या वैभव का वर्णन षष्ठ दुर्गान्तर में है।

चौदहवाँ विलास–इस विलास में सप्तम दुर्गान्तर षष्ठ कच्छात्र विधान का वर्णन है। इसके षष्ठ कक्ष में मुनिगन शोभित हैं।

पन्द्रहवाँ विलास–इसमें सप्तम दुर्गान्तर सप्त कक्षा विधान का वर्णन है। सप्तम कक्षा राजाश्रित विद्या मन्दिर है।

सोलहवाँ विलास–इस विलास में अयोध्या विभव राज मन्दिर राज सभा विधान का वर्णन है। सप्त कक्षा के मध्य में कौसल्या जी का गृह है।

सत्रहवाँ विलास–यह विलास प्रकृति के श्रेष्ठ चित्रण से भरपूर है। गालव वन में श्री वामदेव मुनि, अैंग द्वीप विपिन में भरद्वाज, पलास वन में याज्ञवल्क्य, पाटल वन में कौशिक, रसाल वन में गौतम तथा घटज प्लाक्ष वन में रहते हैं। क्रीड़ा करते हुए राजकुमार हास विलास व खेल में मग्न हैं। छन्द द्रष्टव्य है–

'करहिं परस्पर हास अनेका। क्रीड़हिं कन्दुकादि मिलि एका।
करनि परस्पर गेंद उछालत। भूषन ते सिंजित सुभ चालत।'

अठारहवाँ विलास–इसमें अयोध्या विभव राज मन्दिर पूर्व तथा दक्षिण दिशा का वर्णन है।

उन्नीसवाँ विलास–इसमें वन्य जीवों का सजीव वर्णन है।

बीसवाँ विलास–इसमें अयोध्या विभव राज मन्दिर, पूर्वोत्तर विभाग में शृंगार नामक वन में श्री रामचन्द्र जी के मन्दिर का श्रेष्ठ वर्णन है। एक चौपाई द्रष्टव्य है–

"सुक पिक सारस हंस मयूरा। चक्र चकोर क्रौंच मुद पूरा।
जुगल-जुगल क्रीड़हिं जहँ ताहीं। कर ध्वनि मधुर-मधुर फल खाँहीं।'

इक्कीसवाँ विलास–इस विलास में सीता रामचन्द्र मन्दिरान्तर्गत चारु शीला आदि सखी मण्डल का वर्णन है। सीता जी की आठ सखियों तथा सीता भवन के चारों ओर रूप भौन हैं।

बाइसवाँ विलास–इस विलास में रामचन्द्र निज मन्दिर का वर्णन 56 पदों में है।

तेईसवें विलास से चौतीसवें विलास तक सीता राम शयन मन्दिर, प्रातः जागरण से रात्रि शयनागार तक भोजन, शृंगार, स्नानादि दिनचर्या का वर्णन है।

पैंतीसवें से 37वें विलास तक दम्पती रास क्रीड़ा, मानलीला व जल क्रीड़ा का वर्णन है। श्री राम

मानिनी सीता जी को किस प्रकार सम्बोधित कर रहे हैं, छन्द द्रष्टव्य है–

'हे प्रमुदे प्रान प्रिये प्रिय मानत कब मान।
तव मत बिन कछु करत नहिं हौं तुव प्रेम निधान।'

38वें 39वें विलास में अयोध्या नगर के बहिर भाग का विस्तृत वर्णन है। चालीसवाँ सर्ग सैन्य विन्यास वर्णन से युक्त है।

इकतालीसवाँ विलास–इस विलास में कौतुक अवलोकन हेतु श्री राम के आने का वर्णन है।

बयालीसवाँ विलास–इसमें कौतुक अवलोकन हेतु श्री रामचन्द्र जी का राज मन्दिर में प्रवेश तथा नट नटी के कौतुकों का सजीव चित्रण है। छन्द द्रष्टव्य है–

"आयो तहं नट ऐक, जुत समाज कौतुक कुशल।
दण्ड रोपि गह टेक, डमरू सब्द नादित करिब।"

तैंतालीसवाँ सर्ग–इसमें श्री राम जी का कनक भवन में प्रवेश का वर्णन है।

चवालीसवाँ विलास–इसके अन्तर्गत श्री दशरथ वसिष्ठ संवाद में तत्त्व ज्ञान की शिक्षा वर्णित है। श्री राम के संसर्ग से निर्गुण भी सगुण रूप में हो जाने का गूढ़ रहस्य वर्णित है। 46वें से 49वें विलास में राम अनेक विवादों का वर्णन नारद उपदेश प्राप्त करने उपरान्त दिया गया है।

पचासवाँ विलास–यह विलास दशरथ पिताश्री अज के लोक तथा गुरु माहात्म्य का अपूर्व वर्णन से युक्त है।

51वें सर्ग में बरात के कानन मार्ग से आने पर कौतूहलपूर्ण घटना का उल्लेख है।

52वें सर्ग में दशरथ जी की सभा का वर्णन करते हुए आदर्श राजा की नीति का चित्रण है, यथा–

"जो सुत सदृस प्रजहि नहिं पालै। निर्दय निपट नीति तजि चालै।
सो सन्तान बिगत नृप होई। बसत वेद विद्रख बुध जोई।"

53वें से 55वें सर्ग में राम की बरात का आगमन, विवाह तथा पुरवासियों एवं सीता जी के आनन्द का श्रेष्ठ छन्दबद्ध वर्णन है।

छप्पनवाँ सर्ग–इस सर्ग में चन्द्रतनुजा द्वारा सीता जी की वन्दना, सीता जी के आनन्द, कन्द राम की छवि तथा होली पर्व का अभूतपूर्व वर्णन है।

सत्तावनवें वर्ग में पार्वती जी शंकर जी से सुरोज कन्याओं का राम द्वारा वरण करने का रहस्य पूछ रही हैं।

58वें से 61वें सर्ग में श्री राम के अनेक राजकन्याओं से विवाह व राजा दशरथ चक्रवर्ती राजा के चरण स्पर्श करने का वर्णन है।

62वाँ सर्ग–इस सर्ग में परमानन्द प्रधान जी ने कविकुल वर्णन तथा ग्रन्थ रचना की प्रेरणा व अमर रामायण के आधार को प्रस्तुत किया है।

प्रमोद रामायण श्री प्रधान की सगुण भक्ति से ओतप्रोत श्रेष्ठ प्रबन्ध काव्य (महाकाव्य) के अन्तर्गत रसिक भक्ति की सरस धारा बहाने में पूर्ण सक्षम हैं। पार्वती जी को सुसंस्कृत करने हेतु गायत्री मन्त्र का माहात्म्य बताते हुए शंकर जी द्वारा सीता-राम की वन्दना से युक्त मोक्ष से भी अधिक सुख प्रदान करने हेतु, राम तत्त्व की शिक्षा ग्रहण करने हेतु उनका शिष्यत्व स्वीकार करने की शिक्षा से भरपूर समस्त रसों को अवगाहन कराने की क्षमतावान महाकाव्य है। इसमें ब्रह्म के अनेक रूपों के साथ सगुण ब्रह्म के रूप में श्री राम का गुणगान किया गया है। महाकाव्य की भाषा में भावों के अनुकूल खड़ी बोली के साथ-साथ बुन्देली के शब्दों का प्रयोग किया गया है। तत्सम व

तद्भव के साथ आंचलिकता युक्त वैविध्य दृष्टिगोचर होता है। सहज ही रूपक, उपमा, विरोधाभास श्लेष, दृष्टान्त तथा मानवीकरण के साथ अनुप्रास अलंकार भी छटा बिखरी हुई है। छन्द नियोजन में हिन्दी के प्रयुक्त छन्दों के अलावा संस्कृत पिंगल शास्त्र के छन्दों का गठन है। यह महाकाव्य सिय जन्म दिवस (वैशाख सुदि 9) संवत् 1945 में पूर्ण हुआ।

सन्दर्भ

1. "अज्ञात कवि लाला परमानन्द प्रधान : जीवन और साहित्य" पर इन पंक्तियों के लेखक डॉ. देवी प्रसाद खरे को डॉ. गंगा प्रसाद गुप्त "वरसैंया'जी के निर्देशन में सन् 1997 में अवधेश प्रसाद सिंह विश्व विद्यालय रीवा से पी.एच-डी. की उपाधि मिली। यह उपाधि प्रधान द्वारा रचित 32 ग्रन्थों पर शोध कार्य (प्रबन्ध) प्रस्तुत करने पर दी गयी।
2. प्रमोद रामायण लाला परमानन्द प्रधान द्वारा रचित राम के रसिकशिरोमणि स्वरूप को उद्घाटित करने वाला 62 सर्गों का बृहद् महाकाव्य है। उपर्युक्त दोनों कृतियाँ सार्थक प्रकाशन 100ए, गौतम नगर, नयी दिल्ली-110049 से प्रकाशित हैं। (प्रकाशन वर्ष 2004)
3. ललित पदछन्द—इस छन्द में चार चरण, प्रत्येक चरण में 28 मात्राएँ तथा चरणान्त में तुक मिलती हैं।

खुमान (मान) कवि कृत राम और हनुमान साहित्य

–शिवशंकर मिश्र

खुमान (मान) बुन्देलखण्ड के रीतिकालीन एकमात्र ऐसे कवि हैं, जिन्होंने चरखारी राज दरबार में आश्रय प्राप्त होते हुए भी किसी रीतिपरक ग्रन्थ की रचना नहीं की। इन्होंने राम के परम भक्त हनुमान की यशगाथा और लक्ष्मण और राम की वीरता का बखान किया। नागरी प्रचारिणी सभा काशी के खोज विभाग में कार्य करते हुए मुझे मान कवि रचित ग्रन्थों के विवरण पत्रों और खोज विवरिणिकाओं में विवृत उनके ग्रन्थों को पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मान कवि के हनुमान पचासा और लक्ष्मण शतक ग्रन्थ के छन्दों ने मुझे अत्यधिक आकृष्ट किया।

यद्यपि सभा को मान कवि की कृतियों का पता सन् 1906 ई. में लग चुका था और खोज में निरन्तर उनके ग्रन्थ मिलने की सूचना मिलती रहती थी, किन्तु सन् 1960 ई. से 1980 के मध्य बुन्देलखण्ड सम्भाग द्वारा हुए खोज कार्य में मान कवि की एक-एक रचनाओं की कई हस्तलिखित प्रतियों की सूचना प्राप्त हुई। इसका कारण यह था कि इस अवधि में दो अन्वेषक बुन्देलखण्ड में निरन्तर खोज कार्य में संलग्न थे। यहाँ पर मैं कवि द्वारा रचित वीर रस पूर्ण रामभक्ति और हनुमान से सम्बन्धित ग्रन्थों की चर्चा करना अपना अहोभाग्य मानता हूँ।

मान कवि का जन्म छतरपुर (म.प्र.) जिले में स्थित खरगाँव नामक गाँव में हुआ था। कवि ने लक्ष्मण शतक ग्रन्थ के अन्त में अपना और अपने पूर्वजों का परिचय दिया है–

कविवंश

हठे सिंह बसहरिय प्रगट बन्दीजन बंसहि
हरि चन्दन सुत तासु इन्द्रगढ़ जासु प्रसंसहि
तासु तनय प्रहलाददास इमि लौहट छाइब।
ता सुत दाँनी राँम अखय षड गाँव बसाइब।
कवि बैदभान ता सुत उदित बिस्व विदित विद्वनि बलित।
ता सुत कनिष्ठ कवि मान यह लखन चरित किन्हिय ललित।
चित्रकूट मन्दकिनी राधौ प्राग निवास।
श्री मुद्राभाचार्य के मान कवि दास।
इषु सरै ससि बसु मित्रबर रवि पंचमी बसन्त।
थिर षड गाव खुमान कवि लक्ष्मण सतक रचन्त।

लक्ष्मन सतक छन्द संख्या 131-33 इनके पूर्व पुरुष हठे सिंह थे, जो बसहरिय नामक स्थान में रहते थे। हठे सिंह के पुत्र हरिचन्दन हुए, हरिचन्दन के पुत्र प्रहलाद हुए, जो लौहट में आकर रहने

लगे। प्रहलाद के पुत्र दानीराम हुए जिन्होंने खडगाँव (खरगाँव) बसाया। दानीराम के पुत्र वैद्य भान (उदयभान) हुए। उदयभान के पुत्र उदित और उदित के कनिष्ठ पुत्र कवि मान हुए। मान के पुत्र का नाम ब्रजलाल था। मान कवि ने अपने को उदयभान का पौत्र कहा है—

उदय भान कौ खुमान कवि पौत्र पवित्र कहिन में।

—नीति निधान छन्द 322

मानकवि के वंशज आज भी खडगाँव में रहते हैं।

बुन्देलखण्ड में ऐसी लोकश्रुति प्रसिद्ध है कि चरखारी के पास जंगल में स्थित काकोनी हनुमान के उपासक मान कवि थे। उस मन्दिर में हनुमान जी की एक विशाल प्रतिमा है, जो काकोनी के हनुमान नाम से प्रसिद्ध है। यह मूर्ति चन्देलकालीन ग्यारहवीं-बारहवीं की लगती है। हनुमान के दायें हाथ में गदा और बायें हाथ में पर्वत है। उनके गले में माला और सिर पर मुकुट है। दोनों पैरों में कड़े पहने हैं। कहते हैं कि चरखारी के राजा विक्रमादित्यजू देव से किसी बात को लेकर मान कवि नाराज हो गये और रूठकर काकोनी के हनुमान मन्दिर में चले गये और वहाँ पर उन्होंने हनुमान की आराधना की और उनकी स्तुति में पचास छन्दों की रचना की। जब इस बात की जानकारी राजा को हुई तो वे भागे-भागे काकोनी स्थित हनुमान मन्दिर पर पहुँचे और मान कवि से क्षमा याचना की। यहाँ सावन मास में भारी मेला लगता है।

श्री अखौरी गंगा प्रसाद सिंह ने मान कवि का कविता काल संवत् 1830 से 1870 वि. माना है[1]। इनके आश्रयदाता चारखारी के राजा विक्रमादित्यजू देव का शासनकाल संवत् 1839 से संवत् 1886 वि. तक था।[2]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने मान कवि कृत 20 ग्रन्थों का नामोल्लेख किया है—

अमर प्रकाश, अष्टयाम, लक्ष्मण शतक, हनुमान नखशिख, हनुमान पंचक, हनुमान पचीसी, नीति निधान, समरसार, नृसिंह चरित्र और नृसिंह पचीसी।[3] इसके अतिरिक्त मान कवि का महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ रामरासो भी है। नागरी प्रचारिणी सभा काशी की सन् 1903 ई., 1904 ई., 1906 ई., 1920 ई. 1923 ई., 1926 ई. और 1932 ई. की खोज विवरणिकाओं में मान कवि कृत चौदह ग्रन्थों का विवरण मिलता है। जिनमें हनुमान पचासा, हनुमान विरुदावली और रामरासो ग्रन्थ हैं।

यहाँ पर हम सर्वप्रथम मान कवि रचित रामदूत हनुमान से सम्बन्धित ग्रन्थों के विषय में विचार प्रस्तुत करते हैं। नागरी प्रचारिणी सभा काशी की सन् 1906 की खोज विवरणिका में मान द्वारा रचित हनुमान की गाथा के चार ग्रन्थों का विवरण मिलता है—हनुमान पंचक, हनुमत पचीसी, और हनुमत सिख नख।[4]

हनुमान पंचक—यह मानकवि की पंचमुखी हनुमान विषयक लघुतम रचना है। भूत-प्रेत रोगादि बाधाओं के निवारणार्थ कवि ने हनुमान के एक-एक मुख को लेकर पाँच कवित्त छन्द लिखा है। एक छन्द प्रस्तुत है—

प्रनत मुदंजन जय जन दसायुध सौ,
देव मनरंजन निरंजन कौ दूत है।
जौं सत मखंजन जितंजन दुखंजन,
कपीस दृग खंजन कौ अंजन अकूत है।
मानकवि रंजन सुमित्रा सुत संजन,
सिया कौ सोक गंजन पुरंजन प्रभूत है।
पंचमुख कंजन प्रचण्ड दल पंजन,
अमित्र मुख भंजन प्रभंजन कौ पूत है। (छन्द सं. 1)

हनुमत पचीसी–सन् 1906 ई. में ही बुन्देलखण्ड स्थित चरखारी और पन्ना से इस ग्रन्थ की दो हस्तलिखित प्रतियों की सूचना मिली थी। इसमें मान कवि ने एकतीस छन्दों में पंचमुखी हनुमान का यश वर्णन किया है। यह ग्रन्थ सवैया, कवित्त छन्द में लिखा गया है। एक उदाहरण प्रस्तुत है–

महावीर बंका पंचमुखी हनुमत भगवन्त,
सीता कंत कौ इकंत चर दूत है।
संकट संघारबे कौ विघन बिडारबे कौ,
मूढन कौ मारबे कौ महा मजबूत है।
मान कवि रंजन कौ गर्भ गढ़ गंजन कौ,
अरि मुख भंजन कौ परम सपूत है। (छन्द सं. 1)

हनुमान पचीसी–इस ग्रन्थ में भी कवि ने पंचमुखी हनुमान की प्रशंसा में ओजस्वी भाषा में छब्बीस छन्दों को लिखा है। बुन्देलखण्ड में एकमुखी हनुमान, पंचमुखी हनुमान और तान्त्रिक हनुमान की प्रतिमाएँ स्थापित हैं। कवि द्वारा रचित पंचमुखी हनुमान का एक छन्द द्रष्टव्य है–

राम रुषी खल कौ पहसी जन कौ सुमुखी मन कौ विदुषी सी।
श्री बपुषी सुभ की जनुषी कलुषी पियुषी जन कौ अरुषी सी।
प्रेम पुषी कविमान मुखी जप जोग जुषी तपतेज तुषी सी।
दुष्ट दुखी सुन सन्त सुखी यह पंचमुखी हनुमन्त पचीसी (छन्द सं. 26)

हनुमत सिखनख–इस ग्रन्थ की हस्तलिखित प्रतियाँ बुन्देलखण्ड के मठों-मन्दिरों में मिलती हैं। कुछ प्रतियों में 45 छन्द तथा कुछ में 48 छन्द मिलते हैं। श्री अखौरीजी सम्पादित प्रति में 46 छन्द ही हैं। इस ग्रन्थ में कवि भान ने हनुमान सिखनख का वर्णन किया है। हस्तलिखित प्रतियों में इस ग्रन्थ का नाम हनुमत सिखनख मिलता है, किन्तु ग्रन्थ के अन्तिम छन्द से ज्ञात होता है कि कवि ने हनुमान का सर्वांग वर्णन करते हुए इसका नाम हनुमन्त (हनुमान) पचासा रखा था। हनुमान पचासा नाम से ही यह ग्रन्थ प्रसिद्ध है–

सिखनि सुखासा रिद्धि सिद्धि को निवासा,
यह दास आस पूरक पचासा हनुमन्त कौ। (छन्द सं. 54)

मान कवि के इष्ट हनुमानजी थे। कवि ने इस ग्रन्थ में भी पंचमुखी हनुमान से सम्बन्धित दो छन्द रखे हैं। कवि का सर्वाधिक प्रसिद्ध ग्रन्थ हनुमान पचासा (हनुमत सिखनख) ही है। बुन्देलखण्ड के वृद्धजन मन्दिरों में आज भी इसका पाठ करते हैं।

लक्ष्मण शतक–इस ग्रन्थ की भी कई हस्तलिखित प्रतियाँ मिलती हैं। सभा की सन् 1806 ई.[5] की खोज विवरणिका में तीन और 1826 ई.[6] की विवरणिका में दो प्रतियों का विवरण मिलता है। लक्ष्मण शतक की प्रकाशित प्रति में कुल 129 छन्द मिलते हैं। जबकि हस्तलिखित ग्रन्थों में इनकी संख्या 133 है। वस्तुतः अन्तिम चार छन्द में कवि ने अपने वंश का परिचय दिया है। इसलिए लक्ष्मण से सम्बन्धित 128 छन्द ही मान्य है।

यह ग्रन्थ दोहा, सवैया, छप्पय और कवित्त छन्द में लिखा हुआ है। मान पहले कवि हैं जिन्होंने लक्ष्मण को अपने काव्य का नायक बनाया। इसके पूर्व हिन्दी में लक्ष्मण को लेकर कोई स्वतन्त्र काव्य ग्रन्थ नहीं लिखा गया। लक्ष्मण शतक के छन्दों में लक्ष्मण और मेघनाथ के युद्ध का ओजपूर्ण वर्णन पढ़कर बाँहें फड़क उठती हैं। यह कवि की उत्कृष्ट रचना है। कवि ने लक्ष्मण को धरनीधर (धरणी को धारण करने वाला) कहकर उनकी वन्दना की है–

श्रीरामानुज मनुज नहिं धरनी धारन धीर।
बन्दौं जनक दुख अच्छ मन, लच्छ अच्छमन वीर (छन्द सं. 3)

रामरासो–रामरासो ग्रन्थ की प्रथम हस्तलिखित प्रति की सूचना सन् 1826[7] की खोज रिपोर्ट में मिलती है। इस प्रति का लिपिकाल संवत् 1816 वि. है। यह प्रति चरखारी के श्री दरियाव सिंह रैवार के संग्रह की है और पूर्ण है। इसके अतिरिक्त इस ग्रन्थ की दो प्रतियाँ दतिया राजकीय पुस्तकालय में सुरक्षित हैं। कवि मान ने इस ग्रन्थ की रचना संवत् 1865 वि. (सन् 1808 ई.) में की थी। इस ग्रन्थ में कवि ने तुलसीदास कृत रामचरित मानस के लंका काण्ड की कथा को आधार मानकर दोहा, सवैया, कवित्त आदि छन्दों में राम-रावण के युद्ध का बड़ा सशक्त वर्णन किया है। यह कवि की रामकथा से सम्बन्धित वृहद् रचना है। यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि 'रामरासो' का प्रचार चरखारी के अतिरिक्त अन्य रियासतों में भी हो गया था और इस ग्रन्थ के क्लिष्ट छन्दों पर टीकाछन्द भी तैयार की गयी थी। रामरासो की दो प्रतियाँ एक मूल और दूसरी टीकायुक्त प्रति राजकीय पुस्तकालय दतिया (म.प्र.) में सुरक्षित हैं। जिनमें से टीकायुक्त प्रति का विवरण सभा की 1806 ई. की खोज रिपोर्ट में है, किन्तु इस रिपोर्ट में यह ग्रन्थ दतिया के राजा पारीछत[8] (सन् 1801-1839 ई.) के आश्रित कवि सीताराम के नाम पर अंकित है। इसका कारण यह है कि कवि सीताराम ने अपने आश्रयदाता पारीछत के आदेश से मान कवि कृत 'रामरासो' के कठिन छन्दों पर पद्यबद्ध टीका लिखकर उसमें सम्मिलित कर दिया है। खोज रिपोर्ट के सम्पादक डॉक्टर श्यामसुन्दर दास ने 'नोट्स ऑन आथर्स' के अन्तर्गत इस तथ्य का उल्लेख किया है।[9] रामरासो की रचना संवत् 1865 वि. में हुई थी और सीताराम कवि द्वारा टीकायुक्त रामरासो की प्रति सात वर्ष बाद संवत् 1872 वि. में लिखी गयी। इससे सिद्ध होता है कि कुछ वर्षो ही बाद 'रामरासो' का प्रचार बुन्देलखण्ड में हो गया था। 'रामरासो' का अभी तक प्रकाशन नहीं हुआ है। आवश्यकता है मान कृत 'रामरासो' के मूल छन्द और सीताराम कवि के टीका छन्दों का विधिवत् अध्ययन कर उसे प्रकाश में लाने की।

कवि मान द्वारा रचित हनुमान, लक्ष्मण और राम की वीरता से भरे ग्रन्थ यह सिद्ध करते हैं कि बुन्देलखण्ड के मान कवि ही एकमात्र ऐसे विरले कवि हैं जिन्होंने अपने इष्टदेव राम, लक्ष्मण और हनुमान की यशगाथा का आन्तरिक हृदय से गान किया।

सन्दर्भ

1. नागरी प्रचारिणी पत्रिका भाग–13, अंक–4 माघ संवत् 1986 वि. में प्रकाशित अखौरी जी का खुमान और उनका हनुमत सिखनख लेख, पृ. 467, 484।
2. बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, पृ. 283-4, लेखक गोरेलाल तिवारी, ना. प्र. सभा, काशी, संवत् 1990 वि.।
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. 355, रामचन्द्र शुक्ल ना. प्र. सभा, काशी।
4. हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों की खोज विवरण, भाग-3, सन् 1906-1908 संख्या–70, पृ. 40-41, सम्पादक डा. श्याम सुन्दर दास, द्वितीय नवीन संस्करण, संवत् 2055 वि., ना. प्र. काशी।
5. खोज में उपलब्ध हिन्दी ग्रन्थों का त्रैवार्षिक विवरण, सन् 1926 ई.-1928 ई. पृ. 376, सम्पादक–डॉ. हीरालाल, श्री बटेकृष्ण द्वारा अंग्रेजी से हिन्दी में रूपान्तरित, ना. प्र. काशी, संवत् 2010 वि.।
6. उपर्युक्त।
7. उपर्युक्त।
8. दतिया दर्शन, पृ. 13, सम्पादक हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प्रकाशक–राधाचरण गोस्वामी, स्वागत मन्त्री, दतिया अधिवेशन, विन्ध्य प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन, सन् 1956 ई.।
9. द्रष्टव्य–हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों की खोज का विवरण भाग–3, सन् 1906-8, नोट्स ऑफ आथर्स, पृ. 56, सम्पादक–श्यामसुन्दर दास, द्वितीय नवीन संस्करण, संवत् 2055 वि., ना. प्र. सभा, काशी।

महारानी कंचन कुँवरि और उनकी कृति कांचन कुसुमांजलि में राम

–एन. डी. सोनी

राजा राम की कृपा भूमि ओरछा, वनवासी राम की बिहार स्थली चित्रकूट, मतंगेश्वर शिवधाम खजुराहो और तपोनिष्ठ प्राणनाथ जी के आशीर्वाद से अभिसिंचित हीरों के भण्डार पन्ना से युक्त बुन्देलखण्ड की भूमि जहाँ वीर प्रसूता रही है, वहीं साहित्य सृजकों की जननी भी रही है। महात्मा गोस्वामी तुलसीदास, आचार्य प्रवर केशवदास, कविरत्न हरीराम व्यास जैसे महाकवियों के प्रभाव और संसर्ग से बुन्देलखण्ड के अनेक राजा-महाराजा और रानी-महारानियों ने काव्य-सृजन के क्षेत्र में नाम कमाया है। बुन्देलखण्ड के सबसे महत्त्वपूर्ण राज्य ओरछा के राजा-रानियों ने भी साहित्य जगत में अहम् भूमिका निभायी है। ओरछा राज्य के आखिरी समय में महाराज प्रताप सिंह जू देव की महारानी वृषभान कुँवरि एक जानी-मानी कवयित्री हुई हैं। यह एक सुखद संयोग ही है कि उनकी पुत्रवधू विजावर नरेश सावन्त सिंह जू देव की महारानी कंचन कुँवरि भी उन्हीं के समान योग्य कवयित्री हुईं।

मायके और ससुराल की धार्मिक पृष्ठभूमि से ओत-प्रोत वातावरण से उभरीं कवयित्री कंचन कुँवरि की रचनाएँ भी धार्मिक विषय पर आधारित हैं। बहुत सी स्फुट रचनाओं के साथ ही उन्होंने 'कांचन कुसुमांजलि' नामक एक पुस्तक की भी रचना की जो उनकी काव्य प्रतिभा को उजागर करती है। उनकी कविता शौकिया लेखन नहीं है, बल्कि मन में उमड़ते भगवत प्रेम की अभिव्यक्ति है। राज्य परिवार के सुख भोगों से परे सिया-राम के प्रति उनकी जो आसक्ति बचपन से रही, उसी के परिणाम स्वरूप धार्मिक काव्य-सृजन स्वाभाविक रूप से हुआ। कंचन कुँवरि के काव्य संसार का दिग्दर्शन करने से पूर्व अगर हम उनके जीवनवृत्त में झाँककर देखेंगे तो हमें उनके धार्मिक कवयित्री बनने का रहस्य आसानी से समझ में आ जाएगा।

कंचन कुँवरि का जन्म करहिया रियासत (ग्वालियर) के दीवान श्रीमान् गजराज सिंह की पुत्री के रूप में राजधानी दतिया नगर में हुआ था। वे वैशाख शुक्ल अक्षय तृतीया संवत् 1951 को शुभ लग्न में पैदा हुईं। दतिया रियासत से उनके पितृकुल के रिशतों और घनिष्ठ सम्बन्ध होने के कारण ही दतिया में जन्म का संयोग बना। बचपन से ही राजकुमारी कंचन कुँवरि सुशील, सरल और सद्भाव युक्त स्वभाव की थीं। करहिया के मकरध्वज पर्वत और उसके आस-पास की वन भूमि में अक्सर सखियों के साथ विचरण करने के कारण वे प्रकृति प्रेमी बन गयी। वन प्रान्तर में घूमना, पेड़ों पर झूला डलवाकर झूलना और भजन आदि गाना उनकी दिनचर्या में शामिल हो गया था। वे वन में भगवान की मूर्ति को भी झूला झुलाती थीं। भगवान राम के प्रति उनकी आस्था ने उन्हें रामचरित मानस के अध्ययन और मास पारायण के लिए प्रेरित किया। वे भक्तमाल के अध्ययन में भी रुचि लेती थी, जिससे सन्त-महात्माओं के प्रति उनकी रुचि और आस्था में वृद्धि होती रही। व्रतोपवास

करने में उन्हें शान्ति का अनुभव हुआ। एक बार मकरध्वज पर्वत पर जब वे एक सिद्ध महात्मा के दर्शन करने गयी तो महात्मा जी ने उनकी भावना को समझते हुए उन्हें राम की भक्ति का वरदान और अनुरूप सुभग वर का आशीर्वाद प्रदान किया। वह आशीर्वाद उनके जीवन में फलित हुआ और उनका विवाह संवत् 1969 में विजावर नरेश सावन्त सिंह के साथ हो गया।

महाराज सावन्त सिंह ओरछा के महाराज प्रताप सिंह जू देव के पुत्र थे जो विजावर की गद्दी पर आये थे। अतः उनका सम्बन्ध ओरछा राजघराने से भी हो गया। ओरछा की महारानी वृषभान कुँवरि रिश्ते में कंचन कुँवरि की सास होती थीं जो एक अच्छी कवयित्री थीं। कंचन कुँवरि का आना-जाना ओरछा राज्य की तत्कालीन राजधानी टीकमगढ़ भी हुआ जिससे सासु जी से उन्हें लेखन की प्रेरणा मिली। वे टीकमगढ़ से राम राजा के दर्शनार्थ ओरछा भी गईं और वहाँ वे रामचन्द्रजी और जानकी जू की पोशक बनवाने हेतु रंग में चुनाव के असमंजस में थीं, तो भगवान ने उन्हें सपने में पोशाक का रंग दिखाया।

इस वाकये से भगवान के प्रति उनकी दीवानगी में और वृद्धि हुई। विजावर राजघराने में भी उन्हें उनके अनुकूल धार्मिक वातावरण प्राप्त हुआ और उन्होंने राम-जानकी तथा अन्य देवी-देवताओं की भक्ति में पद लिखना प्रारम्भ किया, जिसमें उन्हें भगवत् कृपा से सफलता मिलती गयी। पहले स्फुट छन्द लेखन और बाद में 'कांचन कुसुमांजलि' की रचना उन्होंने की।

महारानी कंचन कुँवरि ने विजावर नगर के पुराने हरि मन्दिर का जीर्णोद्धार करवा कर उसका नाम श्रीनिवास रखा तथा वहाँ नियमित रूप से दर्शनार्थ जाना भी प्रारम्भ कर दिया। मन्दिर की समस्त व्यवस्थाएँ सुचारु रूप से चलने के साथ ही समैया उत्सव मनाने व अतिथि व्यवस्था के पुख्ता इन्तजाम होने से मन्दिर की प्रसिद्धि हो गयी। महारानी ने मन्दिर में एक धर्मसभा भी स्थापित की जिसमें सभी वर्गों के लोगों को शामिल किया तथा पूर्णिमा और अमावस्या को सभा की बैठकें होती थीं जिनमें स्थानीय और आस-पास के कवियों का काव्यपाठ भी अन्य क्रियाकलापों के साथ होता था। इस पर्यावरण में कंचन कुँवरि ने जो कुछ लिखा, वह क्षेत्र की जनता और साहित्य जगत् के लिए धरोहर बन गया।

महारानी ने 'कांचन कुसुमांजलि' परम्परागत रूप से मंगलाचरण से शुरू करते हुए सरस्वती जी, गणेश जी, हनुमान जी, किशोरी जी, राम जी तथा गुरु जी की वन्दनाएँ व प्रार्थनाएँ लिखी हैं। कृति की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसकी भाषा सरल व सहज होने के साथ ही भक्ति भावना से ओत-प्रोत है। कहीं किसी भी छन्द में बनावटीपन या विद्वत्ता दिखाने की जरा भी कोशिश नहीं है। कविता का मूल उद्देश्य भगवान के प्रति मन की भावना का प्रगटीकरण स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है। कृति की दूसरी विशेषता जो दिखाई देती है, वह है विभिन्न प्रकार के प्रचलित छन्दों का प्रयोग। कंचन कुँवरि ने सभी छन्दों को महारत के साथ लिखा है, जो गाये जाने योग्य हैं। इससे ऐसा आभास होता है कि उन्हें संगीत का ज्ञान भी रहा होगा। इन्होंने अपनी पुस्तक में दोहा, चौपाई, पद, गजल, दादरा, ठुमरी, बधाई, ठुमरी पीलू, पद गौरी, सोरठ, भजन, रेखता आदि का प्रयोग कर अपने काव्य कौशल का परिचय दिया है। कुछ उदाहरणों पर दृष्टिपात करने से कविता की विशेषताओं से हम भलीभाँति परिचित हो सकते हैं।

सहज ढंग से संक्षेप में अपनी भावना व्यक्त करने का पहला उदाहरण उनके मंगलाचरण में ही मिलता है। यथा–

"वाणी बुद्धि विशारद दोऊ। सदय हृदय मंजुल मृदु सोऊ।।
देहु सुमति सिय पिय गुण गाऊँ। कंचन कुँवरि यही वर पाऊँ।।"[1]

सिया राम जी से प्रेम के वशीभूत उत्पन्न लालसा को कंचन कुँवरि ने किशोरी जी की गजल के से माध्यम से अभिव्यक्त किया है, जिसका नमूना द्रष्टव्य है–

"बन जाय कोई तरह से कंचन महल अवध में।
सरजू के तीर सुन्दर इहि लालसा है भारी।।
अभिराम पर्म पावन विश्राम आपका हो।
सेऊँ चरण कमल मैं बसु जाय प्रान प्यारी।।"[2]

इसी भावना को व्यक्त करते हुए कवयित्री ने राम जी से प्रार्थना इन पंक्तियों में की है–

श्री रामचन्द्र स्वामी सुनिए विनय हमारी।
लागै लगन तुम्हीं से यह कामना हमारी।।
सुखधाम श्री अवध में मोहि बास नाथ दीजे।
श्री वन प्रमोद कुंजन लीला लखों तुम्हारी।।[3]

वन्दना और प्रार्थना के पश्चात् श्री रामजी और उनके भाइयों के जन्मोत्सव पर दशरथ महल और अवधपुरी में जो आनन्द और उत्सव का माहौल है, उसका वर्णन पाँच बधाई के पदों में बड़ी सरलता के साथ किया गया है। महलों में कहाँ, क्या, कैसे होता है, इसका उदाहरण इन पंक्तियों से समझने योग्य है–

नृपति गृह शोभा वरणि न जायी।।
जगनिवास प्रभु प्रगट भये हैं आनन्द मंगल छायी।
वन्दनवार पताका सोहैं कंचन कलश धरायी।।
सिंघपौरि पर नौबत बाजै युवतिन मंगल गायी।
विप्रन दान दियो मन भायौ भूषन बसन लुटायी।
कंचन कुँवरि निछावर पायी मैं अपनी मन भायी।।[4]

इसी प्रकार जानकी जी के जन्म की बधाई और राम-सिया दोनों के बाल-लीला के पद लिख कर अपनी लेखनी को कृतकृत्य किया है। अवध में माता कौसल्या की खुशी का सहज वर्णन देखिए–

हर्षित मैया निरखि मुख ललना।
कबहुँ खिलावत गीत सुनावत कबहुँ झुलावत पलना।[5]

जनकपुर में यही हाल रानी सुनैना का भी दिखाई पड़ता है–

सिय दिसि देख जननि हरषावैं।
बार-बार कर जोर निहोरें बहु विधि दैव मनावैं।

इसके आगे पुस्तक में विश्वामित्र जी का अवध जाकर राम-लक्ष्मण को दशरथ जी से माँगना, ताड़का वध, राम-लक्ष्मण और विश्वामित्र जी का मिथिला में जाना और नगर अवलोकन तथा स्वयंवर का सुन्दर वर्णन विभिन्न छन्दों में किया गया है, जो वास्तव में मनोहारी है। एक पद की ये पंक्तियाँ इस बात की गवाही देती हैं–

"सखीरी दोउ आये राजकिशोर।
श्यामल गौर सहज मन भावन लाजत काम करोर।
कंचन कुँवरि विहँसि रघुनन्दन हर लीनो मनमोर।"[7]

फूल वाटिका में राम और सीता के बिहरने के कई पदों में सजीव वर्णन किया गया है। जहाँ राम सीता को लख कर प्रसन्नचित्त दिखते हैं, वहीं सीता जी भी राम को लख कर मन ही मन फूली

नहीं समातीं। ये दो पंक्तियाँ सीता जी का हाल कैसी सरलता से कहती हैं–

“बसे हिय सिय के राजकिशोर।
चली भवन पग परत नहीं चित छीन लियो चितचोर”[8]

धनुष भंग की लीला के पदों के पश्चात् विवाह के समय बुन्देलखण्ड में गायी जाने वाली गारी और बनरा बहुत सुन्दर और सहज बन पड़े हैं। बना की नजरों में जो जादू टोना है, उसकी बानगी बनरा की पंक्तियों में देखें–

“भावैरी बना राज सलौना।
श्यामरी सूरति माधुरी मूरति चितवन में सखि टोना।”[9]
तथा–“बना तोरी नजरिया में जादू भरे।
तिरछी तकन तीर सी लागत नर नारिन बेहाल करे।”[10]

बुन्देलखण्ड में ब्याह के समय के जो रीति-रिवाज प्रचलित हैं, उनके अनुसार ही कलेवा और भोजन के (पंगत के) समय गायी जाने वाली गारियाँ कंचन जी ने भी लिखी हैं। ब्याह पश्चात् वधू की विदाई के समय परिवार जन और सखी-सहेलियाँ जो कहते या कामना करते हैं, उसका अनूठा वर्णन भजन और पदों के माध्यम से कवयित्री ने किया है। पहले एक पद और उसके बाद भजन की दो-दो पंक्तियों पर नजर डालें–

पद–“तनिक इत तेरहु प्रान पियारे।
नेह लगाय चले निरमोही हे अवधेश दुलारे।”[11]
भजन–“लली फिर कब ऐसे सुख दैहौ।
जैसई हिल-मिल रहियत निस दिन तैसे फिर बतरैहौ।”[12]

इसी प्रकार राम की राजगद्दी के साथ ही बसन्त और होली का वर्णन भी प्रसिद्ध कवियों के वर्णन की टक्कर लेता हुआ प्रतीत होता है। होली में गाये जाने वाले रसिया की मात्र दो पंक्तियों का अवलोकन करें–

“होरी खेलत रसिया सिया प्यारी।
रंग अबीर लिये भर झोरिन, कर कंचन की पिचकारी।”[13]

पुस्तक में होली और फाग का वर्णन सबसे अधिक विस्तार से किया गया है। फिर ग्रीष्म वर्षा का वर्णन है। वर्षा में झूलों का वर्णन पूर्वी, बिहाग, कजरी और मल्हार के माध्यम से किया गया है। इसके अलावा और भी भजन राम के प्रति लिखे गये हैं।

यहाँ इससे और अधिक उदाहरण देना मुझे उचित प्रतीत नहीं होता कि पुस्तक में एक से बढ़कर एक सुन्दर छन्द हैं जिन्हें पढ़ कर लगता है कि इन्हें बार-बार पढ़ा जाए। पढ़ने की यही ललक इस बात का प्रमाण है कि कविता मन को मोहने वाली है। कविता रसिकों और अध्येताओं को अध्ययन पश्चात् ही कंचन कुँवरि की काव्य प्रतिभा का सही आभास होगा। आज के समय में पुराने ढंग के पदों का लेखन ही लगभग समाप्त होता जा रहा है। रसों के लिए यह धरोहर प्राणों से प्रिय होगी, ऐसा मुझे लगता है।

सन्दर्भ

1. कांचन कुसुमांजलि—महारानी कंचन कुँवरि विजावर, पृष्ठ 1, सम्पादक और प्रकाशक मैथिली शरण, माधुरी कुंज अयोध्या जी (नजरबाग), सं. 1985 वि.
2. वही, पृष्ठ 3
3. वही, पृष्ठ 3
4. वही, पृष्ठ 4
5. वही, पृष्ठ 6
6. वही, पृष्ठ 9
7. वही, पृष्ठ 12
8. वही, पृष्ठ 18
9. वही, पृष्ठ 21
10. वही, पृष्ठ 23
11. वही, पृष्ठ 28
12. वही, पृष्ठ 29
13. वही, पृष्ठ 51

बुन्देलखण्ड की रामलीलाओं की परिष्कृत कृति लीला नाट्य श्री रामचरित

–प्रो. बी. के त्रिपाठी

"रामायण प्रसंग हमारे देश-समाज में एक ऐसा पारम्परिक प्रसंग है जिसे हर युग में हर स्थान पर गाया गया। लोक नाटक से लेकर आधुनिक मंच तक एक से बढ़कर एक प्रस्तुतियाँ आयीं और यह क्रम विराम लेने वाला नहीं है।..." ओरछा राज्य के अन्तिम राजकवि मुंशी अजमेरी जी, जिनका वास्तविक नाम श्री प्रेम बिहारी था, उनके द्वारा प्रणीत और बुन्देलखण्ड के एक छोटे से कस्बे चिरगाँव में उन्हीं के द्वारा अभिनीत लीला नाट्य–'श्री रामचरित' की भूमिका में लिखे गये डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी के इन शब्दों में ध्वनित है कि बुन्देलखण्ड रामकथा का युगों से केन्द्र रहा है। अनेक ज्ञात और अज्ञात कवियों की रचनाएँ यहाँ पर बहुचर्चित भरी पड़ी हैं। आदि कवि वाल्मीकि, कृष्ण द्वैपायन, गोस्वामी तुलसीदास, हरीराम व्यास, आचार्य केशवदास, रहीम, पद्माकर, मैथिलीशरण गुप्त, मुंशी अजमेरी 'प्रेम' आदि अनेक कवि यहाँ हुए जिन्होंने रामकथा को अपनी रचनाओं का मुख्य विषय बनाया। इनके अलावा भी कुछ ऐसे अज्ञात कवि हैं जो सरस्वती नदी की भाँति अपने समय में प्रवाहित रहे और फिर काल के मरुस्थल में विलुप्त हो गये। ऐसे ही विस्मृत कवियों में लाला परमानन्द प्रधान ओरछा राज्य में महाराजा प्रताप सिंह जू देव के शासन काल में दरबारी कवि थे। उनकी अमरकृति–प्रमोद रामायण, जानकी मंगल, मंजु रामायण, रामायण मानस दर्पण, रामायण मानस चन्द्रिका और रामायण मानस तरंगणी आदि ग्रन्थ रामकथा पर लिखे गये, जो आज प्रकाश में नहीं हैं, उन पर अलग से लिखा जाना अपेक्षित है।

इस प्रकार बुन्देलखण्ड में श्रीराम चरित जैसे लीला नाट्य स्वयं में विशेष महत्त्व रखते हैं। यद्यपि बुन्देलखण्ड की रामलीलाओं का कोई प्रामाणिक ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। अधिकतर रामलीलाएँ तुलसी कृत रामायण को आधार बनाकर प्रस्तुत की जाती हैं और स्थान-स्थान की रामलीला अपनी निजी विशेषताओं के लिए प्रसिद्ध हैं। इनमें कोंच, उरई, जालोन, महोबा, ललितपुर, कालजी, नौगाँव के अलावा चरखारी की रंगशाला तो भारत में ख्यात रही है। कहते हैं चरखारी के तत्कालीन महाराजा अरिमर्दन सिंह कलकत्ता से पूरी की पूरी नाट्य मण्डली खरीदकर चरखारी ले आये थे। इस थिएटर कम्पनी में कार्य करने वाले कलाकार प्रतिभा सम्पन्न थे। इन कलाकारों, नाट्य निर्देशकों, नाट्य लेखकों संगीतकारों आदि को वेतन देकर राज्य में रखा गया था। अपने युग के प्रख्यात नाटककार एवं नाट्य निर्देशक श्री आगा हश्र कश्मीरी इस मंच में विशिष्ट व्यक्तित्व रहे। जिनके लिखे अनेक नाटकों में 'सीता वनवास' की प्रसिद्धि दूर-दूर तक थी। चरखारी के इस रंगमंच में पुरुषों के अलावा महिला पात्र भी थीं। मंच निर्माण, जो कुशल कारीगरों द्वारा हुआ था, वह स्वयं में अद्भुत था। आज

रंग कर्म इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने कहाँ से कहाँ पहुँचा दिया है। परन्तु उस काल में भी चरखारी नाट्य मंच आज के तकनीकी युग से होड़ लेने वाला अवश्य था। इस मंच के दृश्यों में जंगल, सरोवर, नदी, झरने, महल आदि वास्तविक दिखाई देते थे। दृश्य परिवर्तन में सीटी बजते ही पूरा का पूरा दृश्य उठकर ऊपर चला जाता था अथवा बीच से दो फाड़ होकर मंच के दोनों ओर सरका दिया जाता था और नया दृश्य उसी स्वाभाविक दृश्यावली के साथ सम्मुख आ जाता था। अभिनय भी इतना जीवन्त होता था जो मर्म स्पर्श कर दर्शकों को मुग्ध करता था। संगीत में थिएटर म्यूजिक के अलावा शास्त्रीय संगीत प्रमुख होता था। बगैर ध्वनि प्रसारण मन्त्र के पात्रों के संवाद दर्शकों तक सहज पहुँचते थे। बैठक व्यवस्था दर्शकों के लिए व्याख्यान-भवन जैसी थी। सबसे पीछे बैठने वाले ऊँचाई पर होते तथा सबसे आगे वाले रंगमंच के बराबर बैठते थे। राजपरिवार अथवा अति विशिष्ट लोगों के लिए मंच के दोनों ओर दीर्घाएँ थीं।

'सीता वनवास' नाटक का सबसे प्रसिद्ध और मर्मस्पर्शी दृश्य सीता जी का पृथ्वी में समा जाने वाला था। अन्त में तब सीताजी श्री राम के व्यवहार से असन्तुष्ट होकर पृथ्वी माता से विनय करतीं कि—"हे माता, तू मुझे अपनी गोद में ले ले..." तो पार्श्व में बड़े जोर से गड़गड़ाहट का ध्वनि प्रभाव होता और पृथ्वी फट जाती। मंच के बीचोंबीच एक बड़ी दरार बन जाती। उस दरार से गोल पृथ्वी को अपने फन पर धारण किये हुए शेषनाग प्रकट होते थे। शेष नाग के फन पर घूमती हुई पृथ्वी का दृश्य अद्भुत होता था। घूमती हुई पृथ्वी पर कमल के फूल पर पृथ्वी माता साक्षात् दिखाई देती थीं। सीता जी की पुकार सुनकर वे हाथ बढ़ाकर सीता जी को अपनी गोद में बैठा लेतीं। तभी वह गड़गड़ाहट का भीषण ध्वनि-प्रभाव पार्श्व में गूँजता और शेष नाग उसी प्रकार धीरे-धीरे सीता जी सहित पृथ्वी में समा जाते। दरार बन्द हो जाती और श्री राम और लक्ष्मण जी बिलखते हुए सीते-सीते कहते रह जाते थे। इस दृश्य को देखकर दर्शकों की आँखों से अविरल अश्रुधार बहने लगती थी।

उस युग में रंगकर्म इतना महँगा था कि या तो कोई राजा ही उसे वहन कर सकता था अथवा पूँजीपति बड़ा सेठ। बुन्देलखण्ड के छोटे से कस्बे चिरगाँव में वहाँ के रईस प्रचारिणी समिति के मंच पर मुंशी अजमेरी जी द्वारा रचे गये लीला नाट्य श्री रामचरित की भी दूर-दूर तक ख्याति थी। मुंशी जी के इस लीला नाट्य की विशेषता है—बुन्देलखण्ड के पारम्परिक लोक नाट्य, पारसी थिएटर, और शास्त्रोक्त संस्कृत रंगमंच। इन तीनों का अद्भुत समन्वय करते हुए बुन्देलखण्ड की रामलीला परम्परा का निर्वहन। इस नाट्य रचना के कथोपकथन गद्य में कम और पद्य में अधिक हैं। बुन्देलखण्ड में रासलीलाएँ भी होती हैं और रामलीलाएँ भी। रासलीला में संगीत की प्रधानता होती है तो रामलीला में काव्य और साहित्य की। इसी परम्परा में अजमेरी जी ने स्वयं सूत्रधार बन कर चिरगाँव में इस लीला नाट्य को इस गीत के साथ प्रारम्भ करते हुए अभिनीत किया—

"दर्शक वृन्द देखिए अब हम राम चरित दर्शाते हैं,
निज मत के अनुसार आज हम गाकर तुम्हें सुनाते हैं।
शिव शंकर ने गाया गिरि पर, गिरजा को समझाया,
उनसे नारद मुनि ने पाया, ऐसा वृद्ध लोग बतलाते हैं।
नारद मुनि से सुनकर, मन में भलीभाँति से गुनकर;
सुन्दर अक्षर चुनकर, बाबा वाल्मीकि जी गाते हैं।
बाल्मीकि को पढ़कर, कुछ कुछ अन्य भाँति से गढ़कर,
भाषा रामायण बढ़-चढ़कर, स्वामी तुलसीदास सुनाते हैं।

उनकी लेकर छाया, कुछ औरों का काव्य खपाया,
'अजमेरी' ने ग्रन्थ बनाया, वह अभिनय आज दिखाते हैं।"

इस नाट्य लीला में अजमेरी जी ने बुन्देलखण्ड में प्रचलित रही उन रामलीलाओं में गायी जाने वाली ऐसे-ऐसे कवियों की रचनाओं का समावेश संवाद रूप में किया है। वे रचनाएँ भी आज विलुप्तप्राय हैं। श्री राधाबल्लभ त्रिपाठी जी का यह कथन सर्वथा उचित है—" 'श्री राम चरित' नाटक में अधिकांश संवाद कविता और विभिन्न प्रकार के छन्दों में हैं। अजमेरी जी ने अपनी कविता के साथ-साथ तुलसीदास, केशव आदि की कविताओं का यथास्थान प्रयोग किया है। संगीत और कविता की बहुलता के कारण इस नाटक को संगीत नाटिका कहा जा सकता है। यह तत्कालीन परम्परा थी। इसमें पात्र गायन द्वारा अपने संवाद कहते थे। इस रामलीला पर पारसी नाटकों का प्रभाव कहा जा सकता है।"

यह लीला नाट्य चिरगाँव में पूरे पाँच दिन तक आज भी खेला जाता है। पूरा नाटक सात अंकों में विभाजित है। प्रथम दिवस पहला और दूसरा अंक खेला जाता है जिसमें कुल तेरह दृश्य हैं। इसी प्रकार दूसरे दिन तीसरा और आधा चौथे अंक का भाग कुल तेरह दृश्यों मे, तीसरे दिन चौथे अंक का शेष आधा भाग व पाँचवाँ अंक कुल दृश्य सोलह, चौथे दिन छठवाँ अंक जिसमें कुल नौ दृश्य और पाँचवें और अन्तिम दिन सातवाँ अंक छः दृश्यों में दर्शाया जाता है। मुझे लगता है कि अजमेरी जी की यह अनूठी कृति भी अधूरी ही है। इसका आरम्भ स्वायम्भुव मनु सतरूपा की कथा से होता है और पाँचवें दिन धनुष यज्ञ और परशुराम संवाद पर समाप्त होता है जबकि बुन्देलखण्ड में दशहरे के अवसर पर रामलीलाएँ नारदमोह लीला अथवा मनु सतरूपा से प्रारम्भ होकर रावण-वध के पश्चात् अयोध्या में श्री राम के राज्याभिषेक पर समाप्त होने की महती परम्परा है। यहाँ मैं एक बात और उल्लेख करना चाहूँगा कि बीसवीं सदी के आरम्भ में अजमेरी जी ने जब यह नाट्य रचना की थी, तभी उन्होंने बालकों के लिए हिन्दी खड़ी बोली में अत्यन्त सरल और बोधगम्य भाषा में बाल रामायण की रचना भी साथ में की थी। वह भी अधूरी ही प्राप्त हुई है, बालकाण्ड और आधा अयोध्याकाण्ड ही उपलब्ध हो सका। यह हर्ष की बात है कि बाणभट्ट की कादम्बरी, जो अधूरी थी, उसे उनके वंशज ने जिस प्रकार पूर्ण किया, ठीक उसी परम्परा में अजमेरी जी की अधूरी बाल रामायण के शेष साढ़े पाँच काण्ड उनके सुपौत्र श्री गुणसागर 'सत्यार्थी' ने उसी भाषा-शैली में लिख कर पूर्ण किये हैं। इस बाल रामायण का प्रकाशन—जे.पी. ग्राम विकास संस्थान 180/28 पुराना अल्लापुर, इलाहाबाद से 2007 ई. में हो चुका है। काश, उनके इस लीला नाट्य को भी पूर्णता तक पहुँचा दिया गया होता तो बुन्देलखण्ड की रामकथा परम्परा बहुगुणित आभा प्राप्त कर लेती।

डॉ. राधाबल्लभ त्रिपाठी के अनुसार—"अजमेरी जी का श्री रामचरित नाटक एक लीला नाट्य है। रामलीला के रंगमंच की सारी विशेषताएँ इसमें मिलती हैं। इस नाटक के द्वारा डेढ़-दो सौ वर्ष पूर्व उत्तर भारत और विशेषतः बुन्देलखण्ड के अंचल में रामलीला किस प्रकार खेली जाती थी, यह हम जान सकते हैं। यह सम्पूर्ण नाटक उन्होंने रामलीला की शैली में लिखा है। इसमें उस समय की रामलीलाओं में गाये जाने वाले गीत व विधि-विधानों का समावेश किया है। तुलसी के श्री रामचरित मानस के दोहे और चौपाइयों को इसमें बीच-बीच में जोड़ा गया है।" इस प्रकार यह बुन्देली रामलीलाओं का परिष्कृत रूप प्रस्तुत करता है।

बुन्देलखण्ड की परम्परा को आगे बढ़ाने वाली इस नाट्य कृति की शास्त्रीय समीक्षा करते हुए डॉ. राधाबल्लभ त्रिपाठी ने लिखा—"इस नाटक में भरतमुनि द्वारा स्थापित सभी अंगों जैसे—रस,

भाव, अभिनय, वृत्ति एवं प्रवृत्ति आदि अंगों का कुशलतापूर्वक निर्वाह किया है। उसे भरतमुनि के नाटक के मानक के अनुरूप व्यवस्थित परिकल्पना में ढाला है। इस नाटक में राम और सीता के मिलन के पूर्व राग शृंगार, धनुष यज्ञ में हास्य, रावण आदि के कथन में क्रोध एवं रौद्र आदि रसों का प्रयोग हुआ है। इसी प्रकार भाव एवं संचारी भावों का यथोचित प्रयोग मिलता है। अभिनय की चारों प्रवृत्तियों—आंगिक, वाचिक, सात्त्विक और आहार्य का भरपूर प्रयोग किया गया है।"

शास्त्रोक्त विधि-विधानों के साथ ही बुन्देलखण्ड की लोक नाट्य परम्परा भी इस लीला नाट्य रचना में यत्र-तत्र देखी जा सकती है। चिरगाँव में जब यह नाटक खेला जाता है, तो चरखारी के जितना न सही, फिर भी नाट्य मंच पर जो दृश्य प्रस्तुत किये जाते हैं, उनमें स्वाभाविकता होती है। तीसरे दिन की प्रस्तुति में ताड़का-वध का दृश्य तो अद्भुत होता है, श्री राम-लक्ष्मण जब मंच पर विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षार्थ धनुष-बाण लिये सजग प्रहरी के समान खड़े होते हैं, तभी पार्श्व से भयावह संगीत प्रभाव उभरने के साथ आकाश मार्ग से दर्शकों के ऊपर गर्जना करती हुई ताड़का का मंच पर पहुँचना रोमांचकारी होता है। इसी प्रकार धनुष यज्ञ में यज्ञशाला का दृश्य बहुमंजिला होता है। ऊपर की मंजिलों में बालकनी पर गाती हुई महिलाएँ और नीचे की मंजिल पर पधारे हुए राजाओं का दृश्य देखते ही बनता है। इस नाट्य-रचना का संगीत अजमेरी जी के ज्येष्ठ पुत्र श्री गुलाबराय जी ने तैयार किया था। वह आज भी ज्यों का त्यों गाया-बजाया जाता है।

चरित्र-चित्रण के सम्बन्ध में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने त्रिवेणी में तुलसीदास के चरित्र-चित्रण के सम्बन्ध में लिखा है—"प्रत्येक चरित्र का एक शील होता है। शील उस केन्द्र बिन्दु को कहते हैं कि जिसके चारों ओर पात्र का चरित्र घूमता है। शील अलग-अलग पात्रों का अलग-अलग होता है।"

इस नाट्य-रचना में भी आचार्य शुक्ल जी के कथन का साकार रूप दिखाई देता है—श्री राम का शील, धीर गम्भीर और मर्यादायुक्त शान्त है, तो लक्ष्मण का शील चंचल और क्रोध पर केन्द्रित है। परशुराम संवाद में यह शील स्पष्ट झलकता है। अजमेरी जी ने इसी प्रकार पात्रों का चयन किया है इसलिए वे वास्तविकता के अधिक निकट दिखाई देते हैं। नाटक में संवाद नाटक की आत्मा होते हैं। पात्रों के चरित्र का विकास नाटक के मार्मिक, चुटीले एवं स्वाभाविक संवादों द्वारा सम्पन्न होता है। संवाद की भाषा चरित्र के अनुरूप होना चाहिए। अजमेरी जी ने इस तथ्य को भलीभाँति परखा है और प्रयोग किया है।

अजमेरी जी को शास्त्रीय संगीत का अच्छा ज्ञान था; इस कारण उनकी संगीत नाटिका और भी अधिक रोचक हो गयी है। बुन्देलखण्ड की रामलीलाओं में प्रचलित जिन सुन्दर शब्दों को उन्होंने अपने 'श्री राम चरित' नाटक में जोड़ा है, वे अन्यथा हमारी स्मृति से लुप्त हो चुके होते। बुन्देलखण्ड के साहित्य की इस अमूल्य धरोहर को लोप होने से बचाने के लिए इस नाटक का योगदान अविस्मरणीय है। कुल मिलाकर ओरछा राज्य के अन्तिम राजकवि मुंशी अजमेरी 'प्रेम' ने इस नाट्य रचना में बुन्देलखण्ड की रामभक्ति परम्परा रूपी विरासत को अपने नये और सुधरे हुए अन्दाज में सूत्रधार के रूप में अपूर्व अभिनय कर दिखाया है।

दतिया (म.प्र.) की रामलीला के आधार-ग्रन्थ

–उदय शंकर दुबे

बुन्देलखण्ड की छोटी-बड़ी रियासतों–ओरछा (टीकमगढ़), अजय गढ़, पन्ना, मैहर, छतरपुर, चरखारी, सरीला आदि में क्वार मास में रामलीला का आयोजन होता रहा। केवल दतिया राज्य में चैत्र मास में रामलीला होती थी। साहित्य, संगीत, कला के संरक्षण में इस राज्य का विशेष योगदान रहा है। यह मठों-मन्दिरों की नगरी है। इसी कारण इसे दूसरा वृन्दावन कहते हैं। यहाँ का प्राचीन ग्रन्थागार हस्तलिखित ग्रन्थों के संग्रह की दृष्टि से विद्वानों के आकर्षण का केन्द्र रहा है। इस ग्रन्थागार में राम और कृष्ण की कथा से सम्बन्धित बहुत से संस्कृत और हिन्दी के ग्रन्थ आज भी सुरक्षित हैं। राजा विजय बहादुर[1] ने संवत् 1904 वि. (सन् 1847 ई.) में रामलीला का शुभारम्भ किया था। संवत् 1941 वि. (सन् 1884 ई.) में राजा भवानी सिंह ने रामलीला को प्रभावशाली बनाने के उद्देश्य से व्यवस्थित बनाने एवं स्थायित्व प्रदान करने के लिए राजकोष से एक बड़ी धनराशि की व्यवस्था कर दी।

राजा भवानी सिंह के शासन काल में दतिया की रामलीला अपने चरमोत्कर्ष पर थी। रामलीला में भाग लेने वाले पात्र स्थानीय और वैतनिक होते थे। उन्हें राज्य की ओर से सुविधाएँ प्राप्त थीं। पात्रों की वेशभूषा, आभूषण का प्रबन्ध राज्य की ओर से होता था। वर्ष भर निरन्तर अभ्यास करने के बाद पात्र बहुत सजगतापूर्वक अपना-अपना पार्ट अदा करते थे। पात्रों को अपना उत्तरदायित्व निभाना आवश्यक था, अन्यथा उन्हें अलग कर दिया जाता था। उनका एक मात्र कर्तव्य था–रामलीला को प्रभावपूर्ण ढंग से जनता के समक्ष प्रस्तुत करना।

रामकथा के प्रसंगानुसार लीला के लिए दतिया नगर में स्थान नियत थे। राम-जन्म की लीला स्थानीय अवध बिहारी मन्दिर के प्रांगण में, पुष्प वाटिका प्रसंग प्रतापगढ़ किले में स्थित फूल बाग में और धनुष यज्ञ की लीला तथा राम राज्याभिषेक की लीला किले के अन्दर चौक में होती थी। भरत मिलाप की लीला लाला के ताल पर आयोजित होती, वानरों की विदाई जानकी दुलारे के मन्दिर पर। रावण की सवारी सदावर्त्त मन्दिर से निकलती थी। इस प्रकार लीला के स्थान नियत थे। राम-विवाह के दूसरे दिन लीला स्थगित रहती थी। इस दिन श्री राम-जानकी विवाह के उपलक्ष्य में रानी की ओर से नगर की प्रजा को भोजन कराया जाता तथा ब्राह्मणों को उपहार दिया जाता था। राज्य का संरक्षण होने के कारण रामलीला की व्यवस्था सुचारु ढंग से होती थी और उसमें कोई कमी नहीं आने पाती थी।

दतिया राज्य की रामलीला के संचालक रामकथा वाचक श्री वृन्दावन पाठक थे। उनके सुपुत्र श्री नारायणदास पाठक[2] (दारुगर की पुलिया–दतिया) के संग्रह में तत्कालीन रामलीला से सम्बन्धित पर्याप्त अभिलेख सुरक्षित थे। श्री नारायणदास पाठक जी बड़े उदार और मिलनसार व्यक्ति थे। वे मुझे एक-एक अभिलेख दिखाते और उसके विषय में बताते जाते थे। इन अभिलेखों में संवत् 1941

से लेकर संवत् 1956 वि. तक प्रतिवर्ष खेली जाने वाली रामलीला का तिथिवार विवरण अंकित है।[3] इसके साथ ही प्रत्यक लीला के लिए अलग-अलग हस्तलिखित प्रतियाँ तैयार की गयी थीं जिनमें लीला में भाग लेने वाले पात्रों का नामोल्लेख है। इसी मूल प्रति को पात्रानुसार संवाद लिखकर प्रत्येक पात्र को कण्ठस्थ करने के लिए दे दिया जाता था। दतिया की रामलीला में नब्बे (90) लोग कार्यरत थे।

रामलीला के लिये तैयार की गयी हस्तलिखित प्रतियों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि प्रारम्भ में दतिया राज्य की रामलीला का आधार तुलसीदास कृत रामचरितमानस था। कुछ वर्ष पश्चात् रामलीला को प्रभावोत्पादक बनाने के उद्देश्य से रामचरितमानस की प्रसंगानुसार आवश्यक पंक्तियों के साथ वाल्मीकि रामायण, अध्यात्म रामायण, हनुमन्नाटक, रत्नकलाप जैसे संस्कृत के ग्रन्थों के साथ तुलसीदास कृत राम गीतावली, कवितावली, बरवै रामायण और विनयपत्रिका के पद, केशवदास कृत रामचन्द्रिका के छन्द, रहीम कृत श्वेत कौटुकम् के श्लोक, इसके साथ हिन्दी के कवियों द्वारा रचित रामकथा काव्यों के छन्द संकलित किये गये। इन कवियों में जानकी प्रसाद रसिक विहारी कृत राम रसायन, रामसखे रचित पदावली और नृत्य राघव मिलन, पद्माकर कृत राम रसायन और प्रबोध पचासा, रघुराज सिंह, नरोत्तम (बुन्देलखण्डी) लाल कवि, सूर किशोर, कृपानिवास, प्रेमसखी बैजनाथ आदि कवियों के छन्दों को चुन-चुन कर कथा प्रसंगों के साथ रखा गया। कथा प्रसंग के अनुसार छन्द, पद या श्लोक संकलन की यह विशेषता थी कि छन्द सरल और दर्शक के मानस पर प्रभाव डालने में सक्षम हों। पद्य के साथ बीच-बीच में बुन्देली गद्य में भी पात्रों के संवाद लिखे गये हैं। संवाद लेखन के साथ लीला में भाग लेने वाले स्वरूप का भी नामोल्लेख हुआ है। रामलीला की पाण्डुलिपियों को पढ़कर यह निष्कर्ष निकलता है कि रामलीला के संयोजनकर्ता बहुत कठिन परिश्रम करते थे। प्रतिदिन की रामलीला का चिट्ठा लिखा होता था। यहाँ पर मैं संवत् 1941 वि. की रामलीला के कार्यक्रम विवरण प्रस्तुत कर रहा हूँ–

।।1।।

"पाद रामलीला की प्रकरण की चैत्र सुदी 9 संवत् 1941"
चैत्र सुदि 9 शुक्र कौ जन्मोत्सव आनन्द समाज–1
चैत्र सुदि 10 शनौ कौ विश्वामित्र कौ आवौ जग्य पूर्ण–2
सुदि 11 रबौ कौ सिला उद्धार विदेह भेट नगर देखबौ–3
सुदि 12 सौमे कौ फूल वाटिका होइ–4
सुदि 13 भौमे कौ धनुस जग्य, परसराम वाद-विवाद–5
सुदि 14 बुधे कौ पंगति–6
सुदि 15 गुरौ कौ तिलक की तैयारी, वन जात्रा, शृंगवेर वास–7
वैसाख वदि भृगौ कौ केवट चरित्र, चित्रकूट वास–8
वदि 2 सनौ कौ भरथ कौ चित्रकूट पयान अरु पौचबौ–9
वदि 3 रवौ कौ दरबार, विदेह कौ आवौ, पादुका लै नन्दिग्राम वास–10
वदि 4 सौमे कौ मुनि भैंट पंचवटि वास, सूपनखा कुरूप–11
वदि 5 भौमे कौ खर दूषन त्रिसरा वध, श्री जी छाया वियोग, पम्पासर वास–12
वदि 6 बुधे कौ हनूमान भैंट, बाली वध, सुग्रीव तिलक, प्रवर्षन वास–13
वदि 7 गुरौ कौ श्री जी पास हनूमान कौ जैबौ, लंका बारबौ, खबर दैबौ–14
वदि 8 भृगौ कौ लंका की चढ़ाई, विभीषन कौ आवौ, सेत (बन्धन), सुबेल वास–15
वदि 9 सनौ कौ अंगद वाद फकत–16
वदि 10 रबौ कौ मेघनाद जुद्ध, कुम्भकर्ण वध–17

वदि 11 सौमे कौ मेघनाद वध, सुलोचना सती, रावण-वध–18

वदि 12 भौमे कौ भरत मिलाप-राज्य तिलक–19

वदि 13 बुधे कौ भण्डारौ हरिच्छा कसूर मांफ अगारी हुकुम माफक–20

रामलीला कार्यक्रम के इस अभिलेख से ज्ञात है कि दतिया राज्य की रामलीला अठारह दिन होती थी। श्री जानकी जी के विवाह के दूसरे दिन रानी की ओर से पंगति (न्योता) का आयोजन होता तथा राम राज्याभिषेक के दूसरे दिन भण्डारे का आयोजन होता रहा। इस भण्डारे में बिना पंक्तिभेद के सभी वर्ण के लोग सम्मिलित होकर सुस्वाद प्रसाद को आनन्दपूर्वक ग्रहण करते थे। इसी के साथ मूल रामलीला की प्रतियों से दो-एक प्रसंगों को दे देना उचित होगा–

पुष्प वाटिका का कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत हैं–

जुवती भवन झरोखन लागी। निरखहिं राम रूप अनुरागी
कहहिं परस्पर वचन सप्रीती...

जुवती–री सखी! इनने कोट काम छवि जीत लीन है। सुरन मै, मुनन मै, नागन मै, असुरन मै, मैं अस सोभा नाति सुनी। विष्नु चार भुज, विधि चार मुख, शिव पांच मुख और देव कोऊ है नहीं, ताते-

वय किसोर सुषमा सदन स्याम गौर सुखधाम।
अंग-अंग पर वारिए कोट-कोट सत काम।।
जा रूप देख कै को तनु धारी न मोह जैहै।

द्वितीय सखी–री सखी! जो मैंने सुनी है सो सुनहु।

ऐ दौनो सूर्जवंशी दसरथ के दुलारे हैं। कौशिक मुनि के जज्ञ के रखवारे हैं। अजय निसाचर मारे हैं। स्यामांग जिनकौ नाम राम है, कौसल्या उनकी माता कौ नाम है। जो गौर है इनको नाम लछमन है, इनकी माता कौ नाम सुमित्रा है–

विप्र काजु करि बंधु दोउ मग मुनिवधू उधारि।
आये देखन चाप मख सुन हरषी सब नारि।।

तृतीय सखी–री सखी! जोग तौ जानकी लाइक दूलौ है।

इनकौ भूपति देखैगे तौ प्रन छोडिकै ब्याह कर देइगै।

चतुर्थ सखी–वा राजा नै पहिचानै, मुनि समेत सनमानै प्रनु न छोड़ेंगे–

जुग पलटत पलटत घरी पलटत दिन अरु रात।
पलटत अब लौ ना सुनी सज्जन मुख की बात।।

पंचम सखी–अरी सखी! जौ ब्रह्मा भलौ होइ तौ जानकी कौ एही वर मिलै। जौ यह संयोग होइ तौ कृत्य-कृत्य होइ जांइ। सखी! हमारे तौ ए है जे जा नाते सै फेर दरसन देहै–

नाहि त हम कहँ सुनहु सखि इन्ह कर दरसन दूरि।
यह संघट तब होइ जब पुन्य पुराकृत भूरि।

षष्ठ सखी–री सखी! यामै तौ सबको लाभ है।

सप्तम सखी–री सखी! शंकर कौ चाप बडौ कठोर है, अर ऐ महा कोमल किसोर है।

अष्टम सखी–री सखी! देखत के छोट है, गुनन मैं बहुत मोट है। जिनकै चरन से अहिल्या तरी सो का बिना धनुष तोरै रहैगे, या विश्वास राखौ–

जेहि विरंचि रचि सीय सवाँरी। तेहिं स्यामल वर रचेउ विचारी॥

सब बोली ऐसहि होइ–

हिय हरषहि बरषहि सुमन सुमुखि सुलोचनि वृंद।
जातिं जहाँ जह बँधु दोउ जहँ-जहँ परमानन्द।।

जनकपुर की स्त्रियों का प्रसंग रामचरित मानस पर आधारित है। सखियों का पारस्परिक वार्तालाप अत्यन्त सरल और मधुर है।

दूसरा प्रसंग ग्राम वधूटियों का है। इसका आधार भी रामचरित मानस और कवितावली के छन्द हैं। इसके अतिरिक्त बुन्देलखण्ड के कवियों द्वारा रचित छन्दों को भी अपनाया गया है–

परसि राम पद पदम परागा। मानत भूंमि भूर निज भागा।
छाँह करहिं घन बिबुध गन वरषहिं सुमन सिराहि।
देखत गिर वन विहंग मृग राम चले वन जाहि।।
तहाँ एक ग्राम के निकट भये निकसे तहाँ वार्त्ता।।

ग्रामीन स्त्री।। पं. हीरा लाल

रानी मैं जानी अजानी महा पव पाहन हूँ से कठोर हियौ है।
राजहु काज अकाज न जानौ कहौ तेहि कौ जेहि कान कियौ है
ऐसी मनोहर मूरति से बिछुरे कैसे प्रीतम लोग जियौ है।
आखिन मैं सखि राखबे जोग इनै किमिकै बनवास दियो है।।
ते पितु मातु कहौ सखि कैसे। जिन पठये वन बालक ऐसै।।
इनके री सखी! मातु पिता कठिन हृदय है जोर।
अवनि चलत प्यादे पगन कसकत जियरा मोर।।

।।कवि।।

वनिता बनि स्यामल गोरे की बीच विलोकतु री सखी मोहि सी ह्वै।
मग जोगन कोमल क्यौ चलिहै सकुचात मही पद पंकज-द्वै।
तुलसी मुनि ग्राम वधू विथकी पुलकी तन लोचन यौ चले च्वै।
सब भाँति मनोहर मोहन रूप अनूप है भूप के बालक द्वै।।
धरि धीर कहै चलि देखिए जाइ जहाँ सजनी रजनी रहिहै।
कहिहै जग पोच न सोच कछू फल लोचन आपन तौ लहिहै।
सुख पाइहै कान सुनै बतियाँ कल आवुस मै कछु पै कहिहै।
तुलसी अति प्रेम लगी पलकैं पुलकी लख राम हियै महिहै

।।इस्त्री पं. हीरालाल।।

सुन्दर सुकुमारी या कुमारी काहु भूपति की,
काँतै कर ल्याये तुम साँची कहौ गौनौ है।
नैन मृगनैनी लसै नागिन सी वैनी,
मधुर कोकिल सी वैनी तन लाजत छवि सौनौ है।
छल सै छली है, कर कंज पद तली है,
कै संग लग चली है, कै छोड निज भौनौ है।

ऐहो पथिक प्यारे तव नैन रतनारे,
आजु विलमौ गृह म्हारेहि नवास अति नौनो है।

।।अपरा।।

वीर बटाऊ सुनौ विनती छमिबी अपराध हमै जान गँवारी।
को हौ इतै कितै जैहौ भला इत आये कहाँ जहाँ कानन भारी।
कंज मुखी पद कंज से कुस कण्टक के मग मै चल हारी।
प्रान प्रिया सम राखै तुमैहिन भाँमते भाँमती पौर हमारी।।

।।अपरा।।

आये इतै कितै जैहौ जितै सो रहौ इतही खुले भाग हमारे।
रैहौ नही घरी चारक लौ चलहै इन नैनन नीर पनारे।
रमानाथ कहै तुमै रोके नहीं सुतौ कैसे भये पितु मातु तुमारे।
वीर वटाऊ सुनौ अलि जे लगै प्रीतम तै मोइ प्रान पियारे।।
सोईबौ कहै। वटु के नीचै कुसन के आसन बिछा कै–गवाइय
छनक श्रम, गवनब अबहि कि प्रात...
सामरे वीर सुनौ हो लला हम पूछत है कहू नाम तुमारौ।
साझ भई वन घोर बडौ मग दीखै नहीं बड़ौ कंट करारौ।
सुकुमार त्रिया तुम संग लयेपुन जैबो भला जब होइ सँवारौ।
वीर वटाऊ ह हा विनती सुख सैन करौ निज भौन हमारे।।
सो एक कलस जल लै कर कै कहै हे नाथ जलपान कीजे

।।कवि।।

मुनि प्रिय वचन प्रीति अति देखी। राम कृपाल सुसील विसेषी
जानी श्रमित सीय मन माही। घरिक विलम्बु कीन वर छाही।।

सीय समीप ग्राम तिय जाही। पूछत अति सनेह सकुचाही।।
बार-बार सब लागहि पायें। कहहि वचन मृदु सरल सुभायें।

।।अपरा।।

कौन गढ़, कौन देस, कौन पुर, कौन ग्राम,
कौन धाम, कौन काम काकौ जुम जैहौगे।
रहौ जू, रहौ जू, ना कहौ ना बतायो नाम,
ऐहो घनस्याम वाम लये कहाँ रैहौगे।
कौन ने सताये, कित आये, भग आये,
किधौं नारि हरि ल्याये तुम साची ना कैहौगे।

भ्यानै भये जैयो आज रैयो तुम हमारे वीर,
हा-हा कर अर्ज करौं लौट दरसन देहौगे।।

इस छन्द के बाद ग्राम-बधूटियों से सम्बन्धित रामचरित मानस की पंक्तियाँ उद्धृत हैं। अरण्य काण्ड की कथा को मंच पर प्रस्तुत करने के पूर्व मानस की अर्द्धाली के साथ अन्य प्रसिद्ध कवियों के छन्द पात्रों को याद कराये जाते जो रामलीला की हस्तलिखित प्रतियों में प्रसंगानुसार लिखे रहते थे। उदाहरण के लिए—राम, सीता सहित स्फटिक शिला पर विराजमान हैं—बैठे फटिक शिला परमादर—इसी के साथ प्रसिद्ध कवि राम सखे के छन्द हैं—

घूम घुमारौ गुलाब कौ घाघरौ पीत चमेली की ओढनी छीनी।
कंज की लाल कसी कल कंचुकी नीलर जुही संजाप जु दीनी।
चंपे के हार कनैर की चंद्रका देखि कै चित्त भरी अति भीनी।
फटक सिला पर रामसखे पिया फूल सिंगार सिया छवि कीनी।।
पीत चमेली लसी सिर क्रीट सुगुच्छ है सेत चमेली के भारी।
कुन्द के हार कदम्ब के कुण्डल जार गुलाब के नारौ निवारी।
पंकज नील कछै कछनी कलगी चम्पे की है अत आरी।
राम सखे प्रिय फूल सिंगार विहार कियौ चित्रकूट विहारी।।

पत्र—30 (ख)

इसी क्रम में इन्द्र के पुत्र जयन्त का प्रसंग अवलोकनीय है—

काहू बैठन कहा न ओहू—रामचरितमानस

इसी पंक्ति के साथ अज्ञात कवि द्वारा रचित छन्द है—

वारिध तात हते विध से सुत सूरज सोम सहोदर दोऊ।
रम्भा रमा जिनकी बहिनी मद्यवा मधुसूदन से बैनेऊ।
तुच्छ तुसार इतौ पर वार भयौ सर मध्य सहाइ न कोऊ।
सूख सरोज गयौ छन मै सुख सम्पति मै सबकौ सब कोऊ।।

हस्तलिखित प्रति, पत्र—3 (क)

इसी प्रकार रामलीला के सभी प्रसंगों की हस्तलिखित प्रतियाँ तैयार की गयी थीं। इन प्रतियों को तैयार करने में दतिया राज दरबार श्रेष्ठ कवि-पण्डितों का भी योगदान था। दतिया राज्य में चैत्र में रामलीला के आयोजन का कारण था—मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम का जन्मदिन-रामनवमी तथा इसी शुभ पर्व पर रानी गणेश कुँवरि ने ओरछा में रामलला की मूर्ति की प्राणप्रतिष्ठा की थी। समूचे बुन्देलखण्ड में दतिया ही एक ऐसा राज्य था, जहाँ कार्तिक मास में कृष्णलीला और चैत मास में रामलीला का आयोजन होता रहा।

सन्दर्भ

1. दतिया दर्शन—सम्पादक—हरि मोहन लाल श्रीवास्तव, पृष्ठ—14, प्रकाशक—राधाचरण गोस्वामी, स्वागत मन्त्री, दतिया अधिवेशन, विन्ध्य प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन, फरवरी-1956 ई.।
2. वही, पृष्ठ—14-15।
3. श्री नारायण दास पाठक बड़े धार्मिक विचार के थे। लेखक उनके प्रति हृदय से आभारी है। श्री पाठक जी ने अपने घर पर मुझे पढ़ने की पूरी सुविधा प्रदान की थी। मैंने उनकी अनुमति से कुछ पृष्ठों की फोटोग्राफी भी की थी। आज उनके पुत्र द्वय—श्री मनीराम पाठक और श्री सुरेश चन्द्र पाठक दारुगर की पुलिया—दतिया म.प्र.) वर्तमान हैं। —उदय शंकर दुबे

साहित्य, लोक-साहित्य व लोक-जीवन में श्री राम

–डॉ. कैलाश बिहारी द्विवेदी

कबीरदास की भूमिका सन्त और कवि के साथ समाज-सुधारक की भी थी। किन्तु वे अपनी खरी-खरी वाणी के कारण लोक को अधिक प्रभावित नहीं कर सके। उनके पश्चात् तुलसीदास को समाज के लोक एवं परलोक सुधारने की सन्त परम्परा में अभूतपूर्व सफलता मिली। इसका एक कारण यह था कि उन्होंने जन्म से कष्ट भोगे व जन्म लेते ही माता-पिता द्वारा त्यागे जाने के कारण उनके लाड़-प्यार से वंचित रहे। घर की जो सेविका करुणा कर उन्हें चोरी-छिपे पालती रही, वह भी उन्हें पाँच वर्ष की अवस्था में निरालम्ब बिल्कुल अनाथ छोड़कर चल बसी। जो तुलसी 'नीच निरादर भाजन कादर' कुत्ते के मुख अर्थात् कुत्ते के जूठे रोटी के टुकड़े को ललाता (ललचाता) रहा हो। जिस बालक तुलसी को 'बारेतें ललात-बिललात द्वार-द्वार दीन' होकर फिरते हुए यदि चार चने (थोड़े से चने) पेट की आग बुझाने को मिल गये तो उसे चार फल (अर्थ, काम, धर्म, मोक्ष) जैसे लगे।

गुरु नरहरि दास जी की कृपा से न केवल आश्रय मिला बल्कि शिक्षा और संस्कार मिला, तो पत्नी द्वारा तिरस्कृत और अपमानित होने पर तुलसी के जीवन की धारा बदल गयी। वे आत्मोन्मुख हो गये थे।

वे वैष्णव थे। वैष्णव भक्ति आत्मोन्मुखी और लोकोन्मुखी भक्ति का संशलिष्ट रूप है, क्योंकि वह 'सियाराम मय सब जग' को जानता है। वह उसकी सेवा बिना कैसे रह सकता है। तुलसी से पहले नरसी मेहता कह गये थे 'वैष्णव जन तो तेणे कहिये, जे पीर पराई जाणे रे।' जिस तुलसी ने बाल्यावस्था से हर प्रकार की पीड़ा को भोगा था, उनसे अधिक गम्भीरता से जन की पीर (पीड़ा) का अनुभव कौन कर सकता था? फिर प्रत्यक्ष भी तो देख रहे थे कि–

खेती न किसान को, भिखारी को भीख, बलि,
बनिक को बनिज, न चाकर को चाकरी।
जीविका विहीन लोग सीद्यमान सोच बस,
कहें एक एकन सौ कहाँ जाई का करी।
बेदहु पुरान कहि, लोकहु बिलोकियत,
साँकरे सबै पै राम! रावरे कृपा करी।
दारिद दशानन दबाई दुनी, दीन बन्धु,
दुरित-दहन देख तुलसी हहा करी।

इस प्रकार देश और संस्कृति की दुर्दशा देखकर तुलसीदास जी का मन व्याकुल रहता। उनकी 'कवितावली' में लोक-चिन्ता सर्वाधिक उजागर होती है। इतिहास से यह बात स्पष्ट है कि विदेशी विधर्मियों के पक्षपातपूर्ण कुशासन से देश की अर्थ-व्यवस्था नष्ट हो रही थी।

किसबी (श्रमिक) किसान-कुल, बनिक, भिखारी, भाट
चाकर, चपल, नट, चोर चार चेटकी।

सब लोग पेट के लिए ही ऊँच-नीच कर्म तथा धर्म-अधर्म करते हैं। यहाँ तक कि बेटा-बेटी भी बेच देते हैं। यह सब तुलसी की समकालीन परिस्थितियाँ थीं। इनको तुलसी ने पूरी संवेदना के साथ खुली आँखों देखा और विवाद से बचते हुए इसके लिए कलिकाल को दोषी ठहराया, लेकिन वे कुराज (खराब शासन) को बताये बिना भी नहीं रह सके। कहीं रावण के राज्य, कहीं कंस के राज्य के बहाने अपने मन का भाव प्रकट करते ही रहे। एक जगह तो 'दुराज' (कुराज-कुशासन) शब्द तो उनकी कलम से निकल ही गया।

तुलसीदास जी ने समाज, धर्म, संस्कृति और देश को इस पतनशील, दमित-कुचलित स्थिति से उबारने के लिए अपने इष्ट श्रीराम की मर्यादा पुरुषोत्तम रूप में ऐसी स्थापना की जो जाति-पाँति का भेदभाव छोड़कर जन-जन के हृदय में आदर्श और एक सम्बल के रूप में बस सके और विपरीत परिस्थितियों से जूझने का साहस पैदा कर सके।

यह इसलिए सम्भव हुआ कि तुलसीदास जी ने आदर्श के लिए अपने 'रामचरित मानस' में श्रीराम के मर्यादा पुरुषोत्तम रूप को प्रकट किया, वहीं उसमें ईश्वरत्व की आभा भर के जन-जन के हृदय में सम्बल के रूप में स्थापित कर दिया। दूसरी बात यह भी सम्भव है कि कबीरदास जी ने लोक-चेतना जगाने के लिए जिस भाषा एवं शैली को अपनाया था, उसकी असफलता को तुलसीदास जी ने अनुभव किया हो। इसलिए उन्होंने अपने सम्पूर्ण साहित्य में कान्तासम्मित शैली और भाषा को अपनाया है। वह भी, उसके जनमानस में शीघ्र बैठ जाने का कारण हो सकता है।

तुलसी के पूर्व अधिकांश भक्तों, सन्तों ने राम शब्द को ईश्वर पर्यायवाची के रूप में प्रयुक्त किया, लेकिन निराकार होने के कारण वह मात्र उपदेश के लिए रहा। सामान्य जन उसे अपने हृदय में स्थापित नहीं कर सका।

तुलसी के पूर्व भी अनेक कवि श्रीराम के सगुण रूप का वर्णन कर चुके थे। विष्णुदास की 'रामायण' और 'दशावतारों की कथा के अन्तर्गत सूरदास के पदों में राम का साकार रूप पर्याप्त लोकप्रिय हो चुका था, लेकिन तुलसी ने समाज की नब्ज को समझते हुए 'रामचरित मानस' में राम के ऐसे समन्वयकारी स्वरूप की उद्‌भावना की कि वह शीघ्र ही लोकप्रिय से भी आगे लोकमन में अन्तर्विष्ट होकर उनके दैनिक जीवन के कार्यकलापों में झलकने लगा।

श्रीराम का लोक संग्राहक रूप तो 'मानस' में वनवासियों से आत्मीय व्यवहार, केवट संवाद, भीलनी का आतिथ्य, वानरों से मेल-मिलाप आदि के उदाहरण के रूप में उपस्थित है। अनाचारी, अत्याचारियों के दमनकर्ता के रूप में उनका लोक-रक्षक स्वरूप भी उपस्थित है। आत्मबल और पौरुष का प्रतीक उनका स्वयं का व्यक्तित्व है।

जनता की नब्ज के अनुसार राम रसायन तो तुलसी ने उपलब्ध करा दिया, परन्तु उसका हर पीड़ित तक पहुँचना अभी शेष था। इसकी व्यवस्था उन्होंने अपने बुद्धि कौशल से की।

रामकथा के प्रचार के एकमात्र साधन थे कथावाचक। कथा भी प्रायः मन्दिरों या ऐसे स्थानों पर कही जाती थी, जहाँ समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग प्रवेश ही नहीं कर सकता था। ऐसी दलित, शोषित, गरीब और अशिक्षित जनता (जो लगभग आज भी उसी अवस्था में है) उस तुलसी की दृष्टि से ओझल नहीं थी। हो भी कैसे सकती थी? जिस तुलसी ने 'ललात बिललात' दीन होकर 'चारि ही चनन को चारिफल' के समान मानने की विवशता मान ली थी और गरीबों का एक ही अंग बनकर

उन्हें भोगा था, भला वह कैसे भूल सकता था उन्हें? ऐसी जनता को दृष्टि में रखकर उन्होंने भी कृष्णलीला (रहस) की तर्ज पर रामलीला का प्रचलन किया था।

रामलीला 'रामचरित मानस' का प्रायोगिक रूप है और दृश्य काव्य होने के कारण अधिक प्रभावशाली है। इसे भूमि पर दूर बैठ कर देखने के लिए किसी अस्पृश्य, गरीब, अनपढ़ को नहीं रोका जा सकता।

रामलीला की लोकप्रियता का सबसे प्रबल प्रमाण यह है कि यह दिल्ली जैसे कौस्मोपौलिटन महानगरों में आज भी अपार जन-समूह को आकर्षित करती है। भारत के अतिरिक्त मॉरीशस, फिजी, सूरीनाम, टुबैगो, ट्रिनिडाड आदि सुदूर देशों में गिरमिटिया मजदूर (सन् 1834 में) अपने साथ गंगाजल और 'रामचरित मानस' की प्रतियाँ भी ले गये, वहीं रामलीला की परम्परा भी ले गये, लेकिन उन देशों में रावण, कुम्भकरण और मेघनाद के पुतले जलाये जाने की परम्परा नहीं है। इससे ऐसा विदित होता है कि सन् 1834 के पूर्व भारत में भी यह प्रथा नहीं रही होगी। इसकी सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि वे आज भी हिन्दू बने हुए हैं; जो भारत तथा उन देशों के बीच सांस्कृतिक सेतु का काम करते हैं।

इस सम्बन्ध में एक और बात उल्लेखनीय है। फिजी में वहाँ के मूल निवासी रामलीला देखकर 'रामचरित मानस' से इतने प्रभावित हुए कि 'कॉईवीती' (फिजी की भाषा) के विद्वान् सेमुअल ऐस बारविक ने रामायण के कुछ अंशों का कॉईवीती में अनुवाद कर वहाँ की स्थानीय जनता को रामायण से और भी निकट से परिचित करा दिया है, जो उनके और भारतवंशियों के बीच आपसी समझ बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुआ।

पूर्वी द्वीप समूह में भी रामलीला का प्रचलन है। वहाँ तो मुसलमान भी किसी कार्य के लिए रामलीला कराने की बोलना बोलते हैं (मनौती करते हैं)।

रामलीला निरक्षर तथा अस्पृश्य सब तरह के लोगों के हृदय में इस तरह रच-बस गयी है कि उनके दैनिक कार्यकलापों में उसकी झलक मिलने लगी। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं–

जन्म से लेकर सभी संस्कार गीतों में, परिवार में बालक का जन्म होने पर गाये जाने वाले सोहरों में बालक राम या कृष्ण, माता कौसल्या या जशोदा, स्थान होता है अवध या ब्रज। शादी के गीतों में दूल्हा होते राम, कन्या दुल्हन होती है–सीता। वैवाहिक कार्यक्रम में अनेक रस्में और ज्योनारें होती हैं। उन सबके अलग-अलग लोकगीत होते हैं। जन्म के समय सोहर होते हैं। उदाहरण–

1. जन्में राम अवध में, चलौ सजनी, राजा दशरथ ने हतिया लुटाये, बचौ एक ऐरावत बन में।
2. अवध में जन्में राम सलौना। माता कौशिल्या की कूँख जुड़ानी, दशरथ के नैना।
3. जन्में राम रमइया, अवध में बाजत आज बधैया।

लगुन चाहे गरीब की कन्या की लिखी जा रही हो चाहे अमीर की। उस समय कन्या लोकगीतों में सीता होती है। यथा–

1. आज मोरे अँगना में रंग बरसत है, अबीर उड़त है आज सिया जू की लगुन लिखत है।

ऊबनी (टीका-द्वारचार) के समय कन्या का पिता राजा जनक और वर का पिता राजा दशरथ होता है। उदाहरण–

1. राजा जनक जी के द्वारें ऊबें, सोभा बरनी न जाय मोरे लाल।

चढ़ाव चाहे किसी की भी कन्या का चढ़ाया जा रहा हो, उस समय लोक कन्या को सीता जी की गरिमा प्रदान करता है। जैसे–

1. इन गलियन हो कें लइयो री रघुनाथ बना कों।

2. सिया जू को चड़त चड़ाव, सोभा अजब बनी, मोरी भँवर कली।

विवाह में उपर्युक्त मंगल गीतों के बाद कन्या पक्ष के यहाँ बरात आने पर तो मानो गारियों की बौछार हो जाती है। गारियों की विशेषताएँ हैं—व्यंग्य, विनोद, अश्लीलता। ऐसे गीतों का नाम ही गारी है। गारी यद्यपि शुद्ध रूप से गाली अर्थात् अपशब्द है, परन्तु न जाने इस 'रलयोर भेदा' सूत्र ने क्या जादू कर दिया कि गाली से जहाँ क्रोध उमड़ता है, प्रतिहिंसा जागती है, वहीं गारी से मन में मिसरी घुलती है, जबकि अर्थ-तत्त्व दोनों में समान है। गारियों की बहुत-सी शैलियाँ होती हैं। रामचरित के लोक पर प्रभाव विषयक कुछ और उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

हमने सुनी अवध की नारी, दूर रहत पुरसन सें।
लाला, खीर खाय सुत जनतीं, रहती बड़े जतन सें।

गारियाँ गाने में तरह-तरह के कटाक्ष करने की परम्परा बहुत ही पुरानी है। लगभग साढ़े चार सौ वर्षो का साक्ष्य तो 'रामचरित मानस' में ही उपलब्ध है। देखिए—

सखियाँ फूली नहीं समावें, दशरथ जू खों गारी गावें। दशरथ खड़े-खड़े मुस्क्यावें।

क्यों नहीं मुस्काएँगे? दशरथ जी राजा थे, त्यागी मुनि तो थे नहीं, कि न मुस्काते। जब नव सप्त साजें सुन्दरी, सब मत कुंजर गामिनी के कल गान सुनि मुनि ध्यान त्याग देते थे, कामदेव और कोकिला लजा जाती थीं तो राजा दशरथ तो गृहस्थ संसारी राजा थे। जब छरस रुचिर बिंजन बहु भाँती। एक एक रस अन-गिन भाँती। जेबत देहिं मधुर धुनि गारी, लै लै नाम पुरुष अरु नारी। समय सुहावन गारि विराजा, हँसत राउ सुनि सहित समाजा।

इसके अतिरिक्त भी लोक-जीवन पर 'रामचरित' के अनेक प्रभाव हैं। पग-पग पर वे लक्षित होते हैं। कतिपय उदाहरण प्रस्तुत हैं—राम राम (करुणा बोधक मुहावरा), अरे राम (पीड़ा बोधक), राम-राम, सीता राम (अभिवादन), राम जाने (अनभिज्ञता बोधक), राम करै सो होय (अनिश्चित भविष्य बोधक), काहे राम करैंयाँ (राम संसार का कर्ता और चालक), अपने राम (अपने अन्तर्यामी), राम जी (कुछ साधुओं का सम्बोधन), रामरस (नमक), राम रसु दओ (गुदना, अंकन का एक डिजायन), सीताफल (शरीफा), रामफल (सीताफल की जाति का ही एक फल, किन्तु इसका वृक्ष बड़ा होता है), गिलहरी (इसके विषय में मान्यता है कि इसने लंका के लिए सेतु बाँधते समय अपने मुँह में रेत भर-भर कर समुद्र को पूरने का प्रयत्न किया था। श्री राम ने उसकी भावना का आदर करते हुए उसके ऊपर स्नेह का हाथ फेरा था, जिसके कारण उसके शरीर पर धारियाँ बन गयी हैं)।

राम नाम का सबसे अधिक और बहुविध प्रयोग तो नामकरण में पाया जाता है। रामदास, राम प्रसाद, राम कृपाल तो ठीक लेकिन राम गरीब, राम सिंहासन, राम सिरोही, राम सिवाई न जाने कितने-कितने नाम के पूर्व पद में राम का प्रयोग किया जाता है। उत्तर पद में भी—ननकू राम, नाथू राम, बाबू राम जैसे अनेक शब्दों के साथ में राम शब्द का प्रयोग होता है! इसके पीछे की मूल धारणा तो यह है कि इस बहाने भगवान का नाम मुँह से निकलता रहेगा। अब यह परम्परा बन गयी है। उसके पीछे की भावना अधिकांश समाप्त हो गयी है।

अन्त में अन्त की बात

मृत्योन्मुखी व्यक्ति का अगला जन्म सुधारने और इस जन्म में किये गये पापों के शमन के हेतु उसके मुँह में गंगाजल और तुलसी दल डाला जाता है और राम नाम का उच्चारण करवाया जाता है। न

बोल पाने की स्थिति में उसके कान में राम नाम का उच्च स्वर में उच्चारण करके उसकी डूबती हुई चेतना को राममय करने का प्रयास किया जाता है।

बाबा तुलसी! तुम्हें प्रणाम। जो कार्य बड़े-बड़े सम्राट अपनी राजशक्ति से नहीं कर सके वह तुमने अपनी भक्ति की शक्ति से कर दिखाया।

अब कुछ मुसलमान कवियों का सलाम भी लेते जाइए—

श्री राम को सलाम—

गहि सरनागति राम की, भवसागर की नाव।
रहिमन जतन उधार कर, और न कछू उपाव।। रहीम

रामचरितमानस को सलाम—

रामचरित मानस विमल, सन्तन जीवन प्रान।
हिन्दुआन को वेद सम, जवनहि प्रकट कुरान।। रहीम

तुलसीदास जी को सलाम—

संसार को सँवारा राम ने लेकिन,
संसार के राम को सँवारा तुमने।
जिस राम को बनवास दिया दशरथ ने,
उस राम को पहुँचा दिया घर-घर में तुमने।

—नजीर बनारसी

बुन्देलखण्ड के दो अज्ञात राम कथाकार

–डॉ॰ गंगाप्रसाद बरसैंया

बुन्देलखंड की धरती शौर्य, शास्त्र और साधना की अति पुरातन भूमि है। जिसके सन्दर्भ साहित्य के प्राचीनतम ग्रन्थों वेदों-पुराणों में भी ससम्मान अंकित हैं। जहाँ त्याग और बलिदान की अनेक प्रेरणाप्रद घटनाएँ हैं, वहीं धार्मिक और आध्याात्मिक दृष्टि से भी इसका इतिहास अत्यन्त गौरवशाली है। भक्ति की विमल धारा इसके उद्‌भव से जुड़ी है। भक्ति का समन्वित रूप यहाँ प्रारम्भ से पल्लवित और प्रतिष्ठित रहा है। शैव, वैष्णव, शाक्त की परम्परा को मानने वाले और आराधना करने वाले हर युग में रहे हैं। आज भी वह धारा अविच्छिन्न प्रवाहित है। राम, कृष्ण, शिव, दुर्गा, हनुमान आदि देवी-देवताओं के साथ ही इतर धर्मों के भी पूजा-स्थल स्थान-स्थान पर मिलेंगे। राम, कृष्ण, शिव और हनुमान तथा दुर्गा यहाँ की प्रतिष्ठित देव-प्रतिमाएँ हैं। राम, कृष्ण और हनुमान सम्बन्धी साहित्य यहाँ प्रभूत मात्रा में मिलता है।

भगवान राम यहाँ के सर्वाधिक लोकप्रिय देवता हैं। चित्रकूट और ओरछा के स्थल इनके साक्षी है। भगवान राम वनवास के समय बुन्देलखण्ड में 12 वर्षों तक निवास करते रहे। इसीलिए राम यहाँ जन-जन के मनों में व्याप्त हैं। इसी का प्रभाव है कि यहाँ के रचनाकारों ने राम तथा राम से जुड़े प्रसंगों पर सर्वाधिक ग्रन्थों की रचना की। वाल्मीकि, तुलसीदास, केशवदास, मैथिलीशरण आदि रामकथा गायक विभूतियाँ इसी भूमि की देन हैं। इनके ग्रन्थ आज भी प्रेरणा-स्रोत बने हुए हैं। राम-लीलाओं का मंचन, रामायण-पाठ और पूजन यहाँ के नियमित कार्य हैं।

राम-कथा सम्बन्धी साहित्यिक परम्परा भी अति प्राचीन है तथा रचनाकारों की संख्या भी सैकड़ों में है। वाल्मीकि, तुलसीदास, केशवदास, विष्णुदास, छत्रसाल, पद्माकर, मान, मैथिलीशरण, भैयालाल व्यास आदि अनेक नाम गिनाये जा सकते हैं। यहाँ मैं ऐसे रचनाकारों की संक्षिप्त चर्चा करूँगा जिनका साहित्य न तो प्रकाशित हो सका और न ही उन्हें हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रन्थों में स्थान ही मिल सका। वे आज भी प्रायः अज्ञात स्थिति में हैं। मैंने ही उनकी यत्र-तत्र अपने लेखों एवं कृतियों में चर्चा की है, जबकि वे समर्थ लेखनी के धनी रहे हैं। उन्होंने अनेक ग्रन्थों की रचना की है, जिनमें कुछ महाकाव्य श्रेणी के हैं।

1. चैनदास–ये रीतिकाल के समर्थ कवि थे। इनके लिखे अभी तक दो ग्रन्थ प्राप्त हुए हैं–1. रामचन्द्र नखशिख 2. रस विलास। कवि ने अपना विशेष परिचय नहीं दिया किन्तु इन ग्रन्थों से जो संकेत मिलता है, उससे पता चलता है कि वे कटेरा गाँव के रहनेवाले थे और ओरछा राज्य में चौकीनवीस के पद पर पदस्थ थे। इन तथ्यों की चर्चा कवि ने अपने दोनों ग्रन्थों में इस प्रकार की है=

नखशिख सोभा सोभिजै वारौ कोटि सकाम।

सदा भक्ति प्रभु दीजिए, जै जै जै जै राम।
प्रगटि अवनि में औडछो, वासी नगर मझार।
चौकीनवीस है चैनरा, सरस कटेरा वार।

—रामचन्द्र जू कौ नखशिख, छन्द संख्या—55-56

प्रगटि अवनि में औडछो वासी नगर मझार।
चौकीनवीस है चैनरा प्रधान कटेरा वार।
रस विलास बरनन करो, चैनराउ करि ध्यान।
अष्ट सिद्धि नव निद्धि है, कृष्ण चन्द के ध्यान।

—रस विलास, छन्द संख्या—265-66

कवि चैनदास संवत् 1839 वि. (सन् 1782 ई.) में विद्यमान थे क्योंकि उन्होंने उसी वर्ष 'रसविलास' की रचना की थी। इसके बारह वर्ष पूर्व संवत् 1827 वि. (सन् 1770 ई.) में उन्होंने 'रामचन्द्र जू को नख-शिख' लिखा था। रचनाकाल का निर्देश करते हुए वे लिखते हैं—

सीता पति रघुनाथ जू वरदाइक फल चारि।
नख-शिख हौ बरनन करौं, दीजौ आप सुधारि।
नख से शिख लौं बरनिऔ देवनि चैन मनाउ।
सिख से नख लौं मानुसी ग्रन्थनि कही बताइ।
अठारह सै संवत सही, ऊपर सत्ताईस।
कातिक बदि तिथि पंचुमी बारु बरनि रजनीश।

कार्तिक बदी पंचमी, सोमवार संवत् 1827 को इस ग्रन्थ की रचना प्रारम्भ हुई और इसकी समाप्ति हुई बैसाख बदी तीज सोमवार संवत् 1828 ई. को। इसका उल्लेख कवि ने अन्त में किया है।

कवि का असली नाम क्या था, यह ठीक से नहीं कहा जा सकता क्योंकि 'रस विलास'' के अधिकतर छन्दों में 'चैन' नाम का प्रयोग है। इसके साथ ही चैनदास का प्रयोग छन्द संख्या 186, 223, 230, 249, 261, 276, 331, 386, 399, 410, 462, 501, 504 व 507 में तथा चैनराय का प्रयोग छन्द संख्या 16, 45, 51, 221, 234, 247, 342 और 365 में किया गया है। छन्द संख्या 54, 152, 192, 247, 266, 288, 334, 408 तथा 497 में चैनराइ नाम मिलता है। यही स्थिति रामचन्द्र जू की 'नख-शिख' में भी है। मुझे लगता है कि उनका नाम चैनदास था। एक-दो स्थानों पर 'चैनरा' (छन्द संख्या—56) का भी प्रयोग है।

ऐसा लगता है कि चैनदास रसिक सम्प्रदाय के कवि थे क्योंकि इस सम्प्रदाय के अनेक कवियों ने इसी प्रकार नख-शिख लिखा है। कवि ने इस ग्रन्थ में भगवान श्री राम के रूप, स्वभाव, शक्ति एवं महत्ता का चित्रण किया है। प्रारम्भ में गणेश, सरस्वती, शंकर जी की वन्दना की गयी है। बाद में सविता तथा अन्य देवताओं के साथ गुरु जी के चरणों में नमन किया गया है।

'रामचन्द्र जू को नख-शिख' में भगवान श्री राम के तलुये, चरन, नख, अँगुली, अँड़ी, गुलफैं, पिण्डुरी, जान्हु, करि, नाभि, रोमावली, उदर, हृदय, छाती, पीठ, भुजा, कर, हाथ की अँगुली, अँगुली के नख, ग्रीवा, मुख, चिबुक, अधर, दसन, रसना, मुसकानि, वाणी, कपोल, श्रवण, नेत्र, भौंह, भाल, केश, मुकुट, सर्वांग यशकीर्ति का क्रमशः कवित्त छन्दों में वर्णन किया गया है। इसके बाद श्री राम सीता के साथ लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न हनुमान, कौसल्या और दशरथ का भी स्मरण किया गया है।

अन्तिम पंक्तियों में रचना की महत्ता का प्रतिपादन है। रसिक सम्प्रदाय के कवि प्रेमसखी, परताप साहि आदि की रचनाएँ भी इसी प्रकार की हैं। यहाँ हम प्रेमसखी के दो छन्दों से चैनदास के दो छन्दों की तुलना करने हेतु उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं—

अधर वर्णन

राते-राते अधर सुधा से बरसत नैन, चकित विलोकै जाति फूल धनुधारी है।
बन्धुक सुमन की ललाई यो सिमटि आयी, जामै फँस रही दीठि टरत न टारी है।
देखे बने आवै कहि आवै कैसे प्रेम सखी, जानत रसिक जो परम अधिकारी है।
चन्द्रमामयूखहूँ ते मधुर पियूषहूँ ते, प्यारे को अधर मधु पियत पियारी है।

दसन वर्णन

प्यारे को दसन देखि देह दसा भूलि जात, कुन्द पखुरीन ते अधिक छवि बाढ़ी है।
रंचक कढत कोर दामिनी सी दौर-दौर, दाड़िम दसनवारी ठौर ठौर ढारी है।
पलकैं न लागै, रोम-रोम अनुरागै, मानो चित्र की पूतरी चितेर लिख काढ़ी है।
लोकलाज छूटी प्रेमसखी कुल कानि टूटी, गरे परी राम मृदु हाँस फाँस गाढी है।

—छन्द संख्या—48-49

इसी क्रम में चैनदास के छन्द देखिए—

अथ अधर वर्णन

बिम्ब से लसत सविसेष परिवेष देख, सूछम सुवेष लेष पेषिजै अमर कौ।
पल्लव नवीन छीन छीलर कौ जीव जैसे, जीव बैध जीव कहा पावै गन्ध कर कौ।
कोमल अमल वेस बेसक मलेस रचौ, सील सम सुन्दर है सुधा तै सुधर कौ।
चैन गुन गाहि ताहि तेज सुख साजत है, लाजत प्रवाल लाल राम के अधर कौ।

दसन वर्णन

कैधौ सोम मण्डल में अवली सुरिक्षन की, सूर की सभा में सूर वीर सेलसन हैं।
कुन्द की कली-सी कै थली-सी है भली-सी, रम्य मोनिक मयूष जोति तालक रसन है।
चैन गुनवन्त सन्त प्रीति अनुरागै कैधौं, दीह तम सोष अध बोध कौ नसन है।
तामरस कोस तामै सोहत पदमराग, लक्षन बत्तीस ऐसे राम के दसन है।

—छन्द—34-35

चैनदास रीति परम्परा के एक ऐसे प्रौढ़ प्रतिभा सम्पन्न कवि हैं, जिनकी रचना शास्त्र और काव्य दोनों दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। हिन्दी के मनीषियों ने उनका उचित मूल्यांकन इसलिए सम्भवतः नहीं किया कि वे बुन्देलखण्ड के एक अंचल में सीमित रहे। यद्यपि उनकी रचना-प्रौढ़ता से प्रभावित होकर विद्वन्मोद तरंगिणी जैसे अनेक संग्रहों में उनके छन्द सम्मिलित हैं। वस्तुतः चैनदास का प्रमुख प्रतिपाद्य विषय श्रृंगार ही है, परन्तु उन्होंने सौन्दर्यशास्त्र, मनोविश्लेषण शास्त्र और काव्यशास्त्र के उच्च स्तरीय विवेचन के द्वारा रचनात्मक दृष्टि और भक्ति भावना का पर्याप्त निर्वाह किया है। यह कम महत्त्वपूर्ण नहीं है कि कवि श्रृंगार और भक्ति दोनों का सम्यक् प्रतिपादन कर सका है चैनराय की रागात्मक दृष्टि का स्वारस्य और संवेदनशीलता का स्फुरण लोकतात्त्विक रूपों में व्यक्त हुआ है। भाव के साथ ही रमणीय कल्पना के विधान में कवि कुशलता और उसकी पैनी दृष्टि श्लाघ्य है। चैनदास ने पारम्परिक उपमानों का प्रयोग करके भी सौन्दर्य बोध के उदात्त स्वरूपों को प्रस्तुत किया है।

चैनदास की रचना में ब्रजभाषा की प्रधानता है, फिर भी बुन्देली और फारसी की चाशनी से

ब्रजी रंजित यह भाषा माधुर्यपूर्ण है। कवित्त और सवैया दोनों ही संगीत की कसौटी पर पूरे खरे उतरते हैं। उनमें लय, गति और सहज प्रवाह है। स्पष्ट है कि चैनदास अपने समय के कुशल और समर्थ कवि थे।

2. परमानन्द प्रधान

परमानन्द प्रधान असाधारण प्रतिभा के धनी, समर्थ रचनाकार और समर्पित साधक भक्त थे। इनकी वंश परम्परा में अनेक प्रतिभाशाली विद्वान् और रचनाकार हुए। इनके पूर्व सातवीं पीढ़ी तक यह शृंखला बराबर मिलती है। इनके पिता श्री जानकीदास (उपनाम हरिदास हरिजन) अच्छे भक्त और कवि थे। वे ओरछा के तत्कालीन नरेश महाराज हम्मीर सिंह (सन् 1845-74) के दरबार में थे। इन्होंने 'तुलसी चिन्तामणि' और 'हनुमान पचीसी' आदि ग्रन्थों की रचना की थी। दोनों ग्रन्थ उनके वंशधरों के पास हैं। उन्होंने केशवदास की 'कविप्रिया' की टीका भी लिखी थी किन्तु वह उपलब्ध नहीं है। 'हरिदास' नाम इनके आश्रयदाता ने दिया था।

जीवन-परिचय—लाला परमानन्द प्रधान हिन्दी-जगत् के लिए सर्वथा अज्ञात रचनाकार थे। पहली बार मैंने उन पर एक परिचयात्मक आलेख 23 मई सन् 1974 में टीकमगढ़ के दैनिक 'ओरछा टाइम्स' में प्रकाशित कराया था।[1] उनके पूर्वज बनीपारा के श्रीवास्तव कायस्थ थे। इनके पूर्वज रामदास के चार पुत्रों में से दो लक्ष्मीदास तथा भगवानदास ओरछा में, तीसरे द्वारका प्रसाद महरौनी में और चौथे परसुराम धामोरी में बस गये। भगवानदास के दो पुत्र सुख जू व केशव राय हुए। केशव राय के दो पुत्र दूलह और अरजुन हुए। लछमी दास, सुख जू, केशव दास और दूलह सभी कवि थे। लाला परमानन्द प्रधान ने अपने ग्रन्थ 'ब्रह्म कायस्थ कौमुदी' 'प्रताप नीति दर्पण', 'सामन्त रत्न' और 'प्रमोद रामायण' में अपनी वंश-परम्परा का उल्लेख किया है। 'प्रताप नीति दर्पण' में दिया गया विवरण इस प्रकार है—

चित्रगुप्त वंशी प्रवर कायथ शुभ श्रीवास।
विदित बनीपारह सुग्रह पूरित परम प्रकाश।
निवसि ओरछे मधिलसे, सप्त पुस्त परमान।
तदनु चलि टेहरी[2] बसे, दुलहराय प्रधान।
अनुज तासु द्विज पद निरत अर्जुन सिंह सुजान।
तीन पुत्र तिनके दुरग सिंह अभिधान।
तिय सुत परम प्रसंस मत, भयव जवाहर सिंह।
धर्मवलि नृप फौज कर काम करिन जुत रिन्ध।
तिहि द्वै सुवन प्रवीन इक रामदयाल सुनाम।
अनुज जानकीदास तिहि मति भूषित गुन ग्राम।
हरि पद रत पावन सुमति लखि हमीर नृपतास।
कृपा कोर कर कीन्ह दिय, नाम विदित हरिदास।
तिहि सुत निपट मलीन मति हौं विहीन वर माल।
दीपक तै कज्जल जथा तिमि करतूत कराल।
तदपि सुहित अनुमान हिय श्रीमत नृपति हमीर।
परमानन्द अभिधान करि दिय वर सुमति गम्भीर।
प्रभु हमीर लालिय सविधि पालिव नृपति प्रताप।
तिहि प्रभाव सत्संग बल मति अंकुर हिय थाप।[3]

परमानन्द द्वारा प्रस्तुत वंशावली के पूर्व के वंशजों का उल्लेख हमें दूलह कवि द्वारा दिये गये विवरण में मिलता है, जिससे पूरी कड़ी जुड़ती है। दूलह ने बताया है कि उनके पूर्वज काशी के निवासी थे। गंगा-जमुना के मध्य बनीपारा गाँव के रहनेवाले थे। बाद में वे ओरछा आकर रहने लगे। विवरण इस प्रकार है–

चले वहाँ से धर प्रस्थानय। आये ओरछा नग्र स्थानय।
बरनौ कँह, जगि बड़ौ प्रभाइम। सात पुस्त बरनौ रचि काइम।
रामदास से कहा प्रमानय। चारि पुत्र उनके जु बखानय।
द्वै सुत लक्ष्मी भगवतदासय। बसे ओरछे धर्म प्रवासय।
तृतीय द्वारकादास बखानय। महरौनी तिनको अस्थानय।
परसुराम चौथे जु आइय। धामौनी तिनको जु प्रमानय।
जौ बरनौ परिवार सब बाढ़हिं बहु विस्तार।
बरनौ भगवतदास तौ विष्णु भक्ति उरधार।
विष्णु भक्ति उरधार सेवक दूलह राय इमि।
भगवतदास प्रमान द्वै सुत प्रति बरनन करब।
द्वै सुत प्रति तिनके भये वेद अरु धर्म प्रभाय।
जेठे सुत सुख जू कहैं, लहुई केशवराय।
केशवराय के द्वै सुत जानय। नाम कर्म तिनको जु बखानय।
जेठे दूलहराय कहाइय। लहुरे अरजुन जु आइय।[4]

अर्जुन सिंह से आगे की जानकारी परमानन्द के विवरण में मिलती है। इस प्रकार यह कड़ी रामदास से लेकर परमानन्द तक जुड़ती है। इनके रचनात्मक प्रदेय का विवरण मैंने अपने दूलह सम्बन्धी लेख में किया है जो बुन्देलखण्ड के अज्ञात रचनाकार में संकलित है।

परमानन्द का पोषण और पल्लवन महाराज हमीर सिंह और महाराज प्रताप सिंह की छत्रछाया में हुआ। इनका जन्म ओरछा राज्य की तत्कालीन राजधानी टीकमगढ़ (टेहरी) में फागुन मास की कृष्ण पक्ष की दसमी संवत् (90) में हुआ था। इनके वंशज अभी भी टीकमगढ़ में निवास कर रहे हैं। परमानन्द के गुरु का नाम गंगा प्रसाद था। वे पारम्परिक मर्यादावश गुरु का सीधा नाम न लेकर उन्हें सुरसरित प्रसाद लिखते थे।

'मिश्र बन्धु विनोद' में परमानन्द सम्बन्धी विवरण में उन्हें ललितपुर (झाँसी) निवासी तथा ओरछा नरेश महाराज महेन्द्र प्रताप के आश्रित कहा गया और आश्रयदाता का समय संवत् 1927 से 1930 दर्शाया गया। यह विवरण त्रुटिपूर्ण है। इस अवधि में ओरछा राज्य के राजा महाराज प्रताप सिंह थे। महेन्द्र प्रताप नहीं। लाला परमानन्द का जन्म टीकमगढ़ (टेहरी) में हुआ था। ललितपुर में नहीं। मैंने 'मंगल प्रभात' के 'टीकमगढ़ दर्शन' विशेषांक में उनके बारे में विस्तृत और प्रामाणिक जानकारी प्रस्तुत की थी।[7]

परमानन्द प्रधान की कृतियों का विवरणः–

लाला परमानन्द प्रधान के ग्रन्थों को हम चार वर्गों में विभाजित कर सकते हैं–1. भक्तिपरक ग्रन्थ, 2. नीतिपरक ग्रन्थ, 3. शृंगारपरक ग्रन्थ, 4. विविध ग्रन्थ।

1. भक्तिपरक ग्रन्थ–1. प्रमोद रामायण (महाकाव्य, संवत् 1942), 2. रामायण मानस दर्पण (प्रबन्धकाव्य, संवत् 1950), 3. मंजु रामायण (प्रबन्धकाव्य, संवत् 1949), 4. रामायण मानस तरंगिणी,

5. मानस चन्द्रिका, (संवत् 1958), 6. रामरत्न, 7. जानकी विलास, 8. जानकी मंगल (संवत् 1948), 9. रामचन्द्र पचासा, 10. हनुमत विरुदावली (संवत् 1950), 11. भाषा हनुमन्नाटक, 12. हनुमत पचीसी, 13. हनुमत जस तरंगिणी, 14. गणेश अष्टक।

2. नीतिपरक ग्रन्थ–1. नीति मन्दाकिनी (संवत् 1948), 2. प्रताप नीति दर्पण (संवत् 1961), नीति सारावली (संवत् 1962), 4. नीति मुक्तावली (संवत् 1964), 5. नीति मंजरी (संवत् 1964)।

3. शृंगारपरक ग्रन्थ–1. रंभा-शुक संवाद।

4. विविध ग्रन्थ–1. सामन्त रत्न (संवत् 1961), 2. महेन्द्र धर्म प्रकाश (संवत् 1961), 3. राजभृत्य संग्रह (संवत् 1961), 4. महेन्द्र मृगया विलास, 5. वर्ण चौंतीसी (संवत् 1960), 6. ब्रह्म कायस्थ कौमुदी (संवत् 1963), 7. अपराध भंजिनी चालीस, 8. अनन्य प्रकाश, 9. अलंकार दर्पण, 10. प्रताप चन्द्रोदय, 11. व्यवहार खण्ड, 12. गम्भीर छन्द पिंगल, 13. स्फुट सार।

यहाँ मैं लाला परमानन्द प्रधान के भक्तिपरक ग्रन्थों की संक्षेप में चर्चा करूँगा। प्रमोद रामायण की विस्तार से चर्चा उचित होगी।

1. प्रमोद रामायण कहाकाव्य–यह लाला जी का प्रमुख ग्रन्थ है, जिसे महाकाव्य की कोटि में रखा जा सकता है। 455 पन्नों के इस ग्रन्थ में रामकथा को विस्तार से प्रस्तुत किया गया है। इस ग्रन्थ में कुल 62 विलास (अध्याय) हैं, जो इसके बृहद् रूप के साक्षी हैं। इस ग्रन्थ की रचना संवत् 1942 में पूर्ण हुई थी। इसमें भगवान राम के चरित्र को आदि से अन्त तक प्रमुखतः दोहा चौपाई छन्दों में प्रस्तुत किया गया है। प्रमोद रामायण के राम रसिक शिरोमणि हैं जो भोगानन्द लोक में निवास करते हैं।

ग्रन्थ के पढ़ने से प्रतीत होता है कि उन पर सन्त कवि तुलसीदास और उनकी रामचरित मानस का गहरा और व्यापक प्रभाव है। कई अंश और पंक्तियाँ एक जैसी प्रतीत होती हैं। रामचरित मानस के अलावा परमानन्द ने अन्य रामायणों का भी आधार लिया है। उन्होंने 'अमर रामायण' का बार-बार उल्लेख किया है। यह ग्रन्थ प्रमुखतः उसी पर आधारित प्रतीत होता है। कई स्थानों पर उनके द्वारा प्रस्तुत तथ्य नवीन और चौंकाने वाले लगते हैं। हो सकता है कि उन्होंने किसी रामकथा सम्बन्धी अन्य ग्रन्थ के आधार पर लिखा हो। उदाहरण के लिए राम और सीता के पिता व माता पक्ष का जो विवरण दिया है, उसके कतिपय तथ्य इस प्रकार हैं–

राजा दशरथ की बहन देवकला का विवाह वैदिक रीति से सालनीक के पुत्र सन्धिराज से हुआ था। उर्मिला को सुवन गुणा की पुत्री, माण्डवी को कुशध्वज (पिता) और विद्या (माता) की पुत्री, श्रुतिकीर्ति को सुविता (माता) की पुत्री बताया गया है राम की माता कौसल्या की माता का नाम प्रमादिक और पिता कौसल नरेश नृपति देव हैं। सुमित्रा की माता सुभावती हैं। पिता सुमित्र सातदेव के भाई हैं। प्रमोद रामायण के आठवें विलास का यह अंश देखिए–

श्री नृप दसरथ की भगिनी दिव्य रूपनी पर्म।
देवकला नामा ललित वलित सकल शुभ धर्म।[8]
सन्धिराज नरनाथ, सालनीक सुत तास वर।
किय विवाह तिहि साथ वेद विहित सम्मान करि।[9]
नृपति देव कौसिल्य की कन्या सुकत निवास।
कौसिल्या नामा भई गनत वेद जस तास।[10]
विद्या नाम कुशध्वज वामा। सुता माण्डवी तेहि अभिरामा।

भई सु विद्या तैं सुकुमारी। श्रुति कीरति गुन गगन सम्हारी।[11]

सभी भाइयों के निवास, क्रीड़ा, हास-परिहास आदि का भी कवि ने वर्णन किया है। शत्रुघ्न के महल की दो पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

करहिं परस्पर हास अनेका। क्रीड़हिं कन्दुकादि मिलि एका।
करनि परस्पर गेंद उछालत। भूषन तैं सिंजित सुभ चालत।[12]

तुलसीदास ने शत्रुघ्न और श्रुतिकीर्ति को कहीं भी सामने लाकर प्रमुखता नहीं दी। ऐसी अनेक नवीनताएँ स्थान-स्थान पर देखी जा सकती हैं।

प्रमोद रामायण में कुल 62 विलास हैं जिसमें क्रमशः पार्वती संस्कार, सीता-रामचन्द्र प्रादुर्भाव, सीता-राम नित्य धाम, रामचन्द्र का भोगानन्द लोक, वानावती स्वर विष्णु कन्या विवाह, दशरथ पत्नी-पुत्र नामों की चर्चा, दशरथ अमात्यादि वर्णन, राम के पितृ-मातृ पक्ष के सम्बन्धी जनों के नाम, ध्वनि, मिथलापति वैभव, अयोध्या वैभव, अयोध्या का पंच दुर्गान्तर वैभव, पृष्ठ दुर्गान्तर, सप्तम दुर्गान्तर, पृष्ठ कच्छात्र विधान वर्णन, राजमन्दिर, राजसभा, प्रकृति चित्रण, पूर्व तथा दक्षिण दिशा वर्णन, वन्य जीवों का वर्णन, पूर्वोत्तर विभाग में श्रृंगार नामक वन में श्री राम मन्दिर, चारुशीला सखी आदि का वर्णन, रामचन्द्र का निज मन्दिर, सीता राम शयन मन्दिर, मंगल आरती, दम्पती स्नानान्तक उपभोजन मन्दिर, श्रृंगार मन्दिर गमन, श्रृंगार एवं सभा मन्दिर गमन, मध्याह्न भोजनागार गमन, मध्याह्न शयनागार शयन, शयनान्तर जागरण एवं शिविर वाटिका गमन, शिविर वाटिका में दम्पती विहार, सन्ध्याकाल में शयनागार गमन, राम मन्दिर आगमन, रास क्रीड़ा, कुंज विहार एवं मान लीला, जल क्रीड़ा, अयोध्या नगर के बहिर् भाग का वर्णन, सैन्य विन्यास, नट-नटी-कौतुक, रामचन्द्र जी का कनक भवन में प्रवेश, योगमुद्रा गमन, योगधीर-राज्ञी संवाद, वसिष्ठ-दशरथ संवाद, योगधीरो पुरोहित गमन, जोगधीर की कन्या से राम का विवाह, सुकान्ति का कनक भवन आगमन, सैकल देशाधिपति तथा कुंजल देशाधिपति की कन्याओं का विवाह, देवोजस की पुत्रियों से विवाह, श्री अज के पूर्वजों के धामों का वर्णन, बरात के कानन मार्ग का वर्णन, दशरथ सभा, राम की बरात तथा विवाह, पुरवासियों एवं सीता के मन की आनन्द, चन्द्र तनुजा द्वारा सीता जी का यशोगान, पार्वती-शंकर द्वारा सुरोज कन्याओं के विवाह का रहस्योद्घाटन, राम के अनेक विवाह, राम की छवि, कवि-कुल वर्णन आदि हैं।

इस कृति में राम का रसिक-रूप अंकित है और उनके लोक नाम भोगानन्द बताया गया है। राम रसिक शिरोमणि हैं। तुलसी के रामचरित मानस से अनेक पात्र-प्रसंग अलग हैं। परमानन्द स्वयं राजमहलों से जुड़े रहे हैं अतः राजमहल, राजदरबार एवं दिनचर्या आदि का विस्तृत वर्णन है। राम के जिस रूप का वर्णन किया गया है वह विवादास्पद भी हो सकता है क्योंकि परम्परावादी विद्वान् इसे कतई स्वीकार नहीं कर सकते। राम का तो आदर्श मर्यादावादी स्वरूप जन-जन में प्रतिष्ठित है। रसिक शिरोमणि में मर्यादाओं का निर्वाह सम्भव नहीं है। इसे कवि का दुस्साहस या दरबारी प्रभाव कहा जा सकता है। यद्यपि प्रमोद रामायण में राम को भगवान, ब्रह्म, परमात्मा आदि कहा गया है किन्तु उनका स्वरूप व आचरण राजकुमार की तरह दिखाई पड़ता है। परमानन्द की यह कृति चौंकानेवाली है। इस पर गम्भीर विचार-विमर्श अपेक्षित है। रसिक सम्प्रदाय से जुड़े होने के कारण ही सम्भवतः कवि ने ऐसा चित्रण किया है—

रसिक सिरोमणि राम-श्याम तनु काम अमित छवि छाई।
सिय समेत सुखधाम काम पद मगन मोद सरसाई।

परमानन्द राम और तुलसीदास दोनों के भक्त हैं। रामचरित मानस को वे अपना इष्ट ग्रन्थ

मानते हैं। अपनी कृति 'मानस चन्द्रिका' में वे लिखते हैं—

बन्दहुँ तुलसीदास कृत रामायन सुख धाम।
अति अनूप मम इष्ट नित करन सिद्ध शुभ काम।
तास अनुक्रम करि रचन करि समास यह ग्रन्थ।
हरिजन मानस चन्द्रिका रामरसिक सुख पन्थ।[13]

भक्त कवि होने के नाते परमानन्द ने राम-सीता के साथ ही अन्य देवी-देवताओं का भी स्तवन गायन किया है उन्होंने शृंगार, वीर सहित सभी रसों का यथास्थान निर्वाह किया है। शान्त, करुणा और शोक का भाव है तो वीर, ओज, शौर्य आदि के चित्रण हैं। हास्य, रौद्र, भयानक बीभत्स के भी चित्रण मिलते हैं। परमानन्द बहुभाषाविद् थे। उन्हें हिन्दी, उर्दू, फारसी और संस्कृत का भी ज्ञान था। भक्ति के नीतिपरक ग्रन्थ उनकी बहुज्ञता के प्रमाण हैं। ये पंक्तियाँ उनकी बहुज्ञता की द्योतक हैं—

भार्गव कृत अभिराम अति ग्रन्थ नीति अति धर्म।
कहिव सरल भाषा करन समुझि अद्य युग धर्म।

—प्रतापनीति दर्पण[14]

चाणक्यादि मनुस वर नीति प्रकासन सूर।
तिन कविता संस्कृत सुनत होत महामद पूर।
समुझ सकत नहिं भाव तिहि, संस्कृत बोध न जाहि।
भाषा रच तिन हित कियव, भावादर्श उमाहि।

—नीति सारावली[15]

उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट है कि साधारण जनता की सुविधा के लिए उन्होंने अनेक संस्कृत ग्रन्थों की बातें हिन्दी भाषा में प्रस्तुत कीं। चूँकि वे बुन्देलखंड के थे, अतः बुन्देली शब्द भी पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं।

प्रमोद रामायण के अतिरिक्त परमानन्द के अन्य भक्तिपरक ग्रन्थों का परिचय देना आवश्यक है, जिनमें मुख्यतः रामकथा के प्रसंग निहित हैं—

2. जानकी मंगल—लघु प्रबन्धकाव्य है जिसमें 316 छन्द हैं। जानकी विवाह का वर्णन तुलसीदास के ग्रन्थों पर आधारित है। पूर्ण कृति 10 विलासों में विभाजित है। इसका रचनाकाल संवत् 1948 है।

3. मंजु रामायण—सात काण्डों में विभाजित 890 छन्दों में रचित इस ग्रन्थ का मूलाधार रामकथा है। रामकथा के साथ इसमें सती सुलोचना, अहिरावण कथा का भी वर्णन है। रचनाकाल संवत् 1949 है। काण्डों का नामकरण मानस की तरह है। मुख्य भाव भक्ति है। मूल कथा का निर्देश वे इस प्रकार करते हैं—

पुनि-पुनि सबनि वन्दि महि सिर धरि वर प्रसाद मैं पाई।
प्रथम राम अवतार कहत जुत कारन विधि समुझाई।
बाल चरित, सिय ब्याह गमन वन निसचर कीस लराई।
राम राज अभिषेक धर्म जुत नीति दरसाई।[16]

4. रामायण मानस दर्पण—रामकथा को सहज भाषा में जनभाषा में प्रस्तुत करना ही इस रचना का उद्देश्य है। पूरी कथा 1278 छन्दों में अंकित है। रचनाकाल संवत् 1950 है। मानस की तरह सात काण्ड हैं।

5. रामायण मानस चन्द्रिका—यह कृति भी तुलसी के मानस पर आधारित है। लघु आकार के

इस प्रबन्धकाव्य की रचना महाराजा हमीर सिंह की द्वितीय रानी कमल कुँवर के लिए की गयी थी।

6. रामायण मानस तरंगिणी–इसमें 387 छन्दों में सात काण्डों में रामकथा को प्रस्तुत किया गया है। यह परमानन्द की प्रकाशित कृति है।

7. रामचन्द्र पचासा–51 सवैया छन्दों में राम महिमा अंकित है। इसमें दीनदयाल, कृपानिधान, दुष्टदलन श्री राम की महत्ता बतायी गयी है। इसका रचनाकाल संवत् 1951 है।

8. श्री रामचन्द्र चालीस–अपराध भंजन करनेवाले श्री राम की वन्दना 48 छन्दों में की गयी है। इसमें 41 सवैया 7 दोहा हैं। रचनाकाल संवत् 1944 है।

9. विश्वम्भर सुमिरनी–18 ललित पदों में जगदीश्वर के प्रति भक्ति भावना व्यक्त की गयी है। हर छन्द की अन्तिम पंक्ति है–'विश्वम्भर जगदीश विरद कृत मेरी बार विसारत।'

10. वर्ण चौंतीसी–38 दोहों में प्रभु राम का यशगान किया गया है। कई दोहे बहुत विशिष्ट हैं जैसे 'प' वर्ण से जुड़े हर शब्द का यह दोहा–

पावन परम प्रभाव प्रिय प्रेम पियूष प्रवीन।
पद पंकज पूरन प्रमुद परमानन्द पन पीन।[17]

इनके अतिरिक्त 'जानकी श्रृंगाराष्टक' में।। छन्दों में जानकी जी के सौन्दर्य का चित्रण है। 'गणेशाष्टक' में 8 छप्पय छन्दों में गणेश जी के प्रति भक्ति-भाव है। 'हनुमत विरुदावली शतक' में 115 श्रेष्ठ कवित्तों में हनुमान जी की महिमा व प्रभाव के चित्रण के साथ विनय करते हुए दुखों को दूर करने, बाधाएँ हटाने, दुष्टों को नष्ट करने की प्रार्थना की गयी है। इसी प्रकार 'हनुमत पैंतीसा' में 23 छन्द यथावत लिये गये हैं। 12 सवैया और 4 दोहा नये हैं। हनुमान वन्दना के ये छन्द संवत् 1963 के हैं। इन चारों को मिलाकर भक्ति सम्बन्धी कुल 14 ग्रन्थ होते हैं।

सन्दर्भ

1. ओरछा टाइम्स, 23 मई, 1974 आलेख–लाला परमानन्द प्रधान, डॉ. बरसैंया
2. टेहरी–टीकमगढ़ (अब इसे पुरानी टेहरी कहा जाता है)
3. प्रतापनीति दर्पण, लाला परमानन्द प्रधान, दोहा संख्या–208 से 210
4. बुन्देल-वैभव, गौरी शंकर द्विवेदी
5. बुन्देलखण्ड के अज्ञात रचनाकार–डॉ. गंगा प्रसाद बरसैंया, पृ.–268-72
6. मिश्रबन्धु विनोद, भाग–3-4
7. टीकमगढ़ दर्शन (मंगल प्रभात)

8-9. प्रमोद रामायण, लाला परमानन्द प्रधान, आठवाँ विलास, छन्द–8-9

10. प्रमोद रामायण, लाला परमानन्द प्रधान, आठवाँ विलास, छन्द–23
11. प्रमोद रामायण, लाला परमानन्द प्रधान, आठवाँ विलास, छन्द–26
12. प्रमोद रामायण, लाला परमानन्द प्रधान, आठवाँ विलास, छन्द–31
13. मानस चन्द्रिका–लाला परमानन्द प्रधान
14. प्रतापनीति दर्पण–लाला परमानन्द प्रधान, छन्द–218
15. नीति सारावली–लाला परमानन्द प्रधान, छन्द–394
16. मंजु रामायण–लाला परमानन्द प्रधान
17. वर्ण चौंतीसी–लाला परमानन्द प्रधान

रामकथा के बुन्देलखण्डी दो महाकवियों की रचनाएँ

–डॉ॰ रामेश्वर प्रसाद गुप्त

"सदाचरण से सिञ्चित जिनका जीवन है अभिराम,
जिनके शुभ स्मरण मात्र से मिलता है विश्राम,
सर्वव्याप्त जो सर्वहितैषी सदा रहे निष्काम,
इसीलिए जन-जन के मन में रमा 'राम' का नाम।"

जन-जन मन-रञ्जन श्री राम आज भी सभी प्राणियों के अन्तः में अभिराम स्वरूप से अविराम रमे हुए हैं। निष्काम होने से वे परमानन्द प्रदायी हैं। वे अजन्मा, शाश्वत, चिरन्तन, व्यापक, अनादि एवं अनन्त हैं। महाकवि तुलसीदास ने श्रीराम के स्वरूप के विषय में उचित ही उल्लेख किया है कि–

'तात राम नहिं नर भूपाला, भुवनेश्वर कालहु कर काला।
ब्रह्म अनामय अज भगवन्ता, व्यापक अजित अनादि अनन्ता।।'

जिनके नाम मात्र से मन-रञ्जन हो, वे हैं श्रीराम। इसीलिए त्रेता (जन्म) से लेकर आजतक श्रीराम का नाम एवं चरित्र घट-घट में व्याप्त है। भारत की प्रायः सभी भाषाओं में एवं बोलियों में श्रीराम का चरित्र सुचारु रूप से वर्णित है। काव्य-प्रतिभा के धनी महाकवियों ने अपनी-अपनी क्षमता के अनुसार श्रीराम और उनके अनुयायिजनों के चरित्र को बड़े ही सुन्दर और मार्मिक रूप से प्रस्तुत कर अपने को धन्य माना है। कतिपय कवियों ने तो यहाँ तक कह दिया कि राम के चरित्र की महिमा ने ही उन्हें 'कवि' बना दिया। श्री मैथिलीशरण गुप्त जी स्पष्ट कहते हैं कि–

'राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है।
कोई कवि बन जाए स्वयं सम्भाव्य है।।'

रामकथा को केन्द्रित कर सहस्त्रों महाकाव्य, खण्डकाव्य, नाटक, गीतकाव्य, गद्यकाव्य आदि लिखे गये। बुन्देलखण्ड के महाकवियों ने भी रामकथा से सम्बद्ध अपनी काव्य कृतियों को जनमानस के समक्ष प्रस्तुत कर श्रेय और सुकीर्ति प्राप्त की। ओरछा निवासी महाकवि आचार्य केशव ने 'रामचन्द्रिका' की रचना कर बुन्देलखण्ड का नाम सुकीर्तित किया। उनके पश्चात् रामकथा-सर्जना की काव्य-परम्परा अनवरत रूप से प्रचलित रही। 'रामकाव्य' रचना के बुन्देलखण्ड के आधुनिक कवियों में 'साकेत' महाकाव्य के रचयिता राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण गुप्त (चिरगाँव), 'रामयश-चरितामृत' के प्रणेता श्री रमानाथ खैरा (ललितपुर), 'बुन्देली रामायण' के रचनाकार कविवर श्री शशिधर पटैरिया (झाँसी), 'शवरी' महाकाव्य के निर्माता महाकवि श्री अवधेश (झाँसी), 'श्रीराम-रसामृत' महाकाव्य के सर्जक पं. श्री नाथूराम बूटौलिया 'उपेन्द्र' (झाँसी), मैथिली मानस-महाकाव्य के प्रणयनकर्ता पं. श्री सूर्य प्रकाश गोस्वामी (अजयगढ़, पन्ना) आदि विश्रुत एवं प्रगण्य हैं।

प्रस्तुत लेख महाकवि पं. श्री सूर्य प्रकाश गोस्वामी और उनके 'मैथिलीमानस' महाकाव्य तथा महाकवि पं. श्री नाथूराम बूटौलिया और उनके 'श्रीराम-रसामृत' महाकाव्य से सम्बद्ध है।

पं. श्री सूर्य प्रकाश गोस्वामी जी ने अपने 'मैथिलीमानस' महाकाव्य की रचना 16 जनवरी 1983 ई. में पूर्ण की। (मैथिलीमानस महाकाव्य, पृ. 262) इस महाकाव्य का प्रकाशन आषाढ़ गुरुपूर्णिमा दिनांक 18-7-89 ई. को हुआ। प्रकाशिका—श्रीमती चन्द्रकान्ता गोस्वामी हैं तथा पुस्तक प्राप्ति-स्थान लेखक के नाम से अजयगढ़ (पन्ना) (म.प्र.) है। पुस्तक में लेखक का विशेष परिचय अप्राप्त है।

पं. श्री सूर्य प्रकाश गोस्वामी जी द्वारा रचित 'मैथिलीमानस' महाकाव्य दो सौ बासठ पृष्ठीय है, जो द्वादश सन्ध्या या द्वादश सर्ग में विभक्त है। इस महाकाव्य में महाकवि ने भगवती सीता की पावनगाथा को पद्यबद्ध किया है। यह अत्यन्त सुललित भाषा में गुम्फित है। यह काव्य भगवती पराम्बा के मुख से लवकुश के प्रति सुचिन्तनाभिव्यक्ति है। महाकवि रचित यह कृति वस्तुतः एक अद्वितीय तन्त्रकाव्य है। इसमें आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक स्वरूप को रसमय साहित्यिक रूप में प्रस्तुत करना एवं आगमों के रहस्यों को स्पष्ट कर शक्तितत्त्व का स्वरूप वैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत करना काव्यकार का उद्देश्य रहा है। महाकवि के भावों से स्पष्ट है कि माँ पीताम्बा और पूज्यपाद स्वामी जी, पीताम्बरापीठ, दतिया के सहज शक्तिपात से इस महाकाव्य का यह साकार रूप प्राप्त हुआ है।

काव्य के पाँच समीक्षण तत्त्व—कथावस्तु, भाषा शैली, चरित्र-चित्रण, रस (अलंकार, रीति, गुण) एवं उद्देश्य विश्रुत ही हैं। 'मैथलीमानस' महाकाव्य कथावस्तु की दृष्टि से मर्मस्पर्शी एवं हृदयाकर्षक है। कथा के केन्द्र में सुकोमला 'मैथिली' हैं, लेकिन उनके गुणगान से मूलागम को सुस्पष्ट करने का महाकवि ने अनर्घ उपक्रम किया है। यथोल्लेख है कि—

'उस वात्सल्य-देह ने उस दिन कहा, 'मैथिली-तत्त्व' गहन है,
यह वल्गा-अवतार आगमों के रहस्यमय कई वचन हैं।'
किन्तु 'मैथिलीमानस' लेखन का अन्तःप्रेरण, प्रिय तुमको,
किया गया था पुनः प्रकाशन को तन्नामी 'मूलागम' को।

मैथिलीमानस-महाकाव्य, पृ. 4 (भूमिका)

'मैथिलीमानस' महाकाव्य मौलिक, आगमिक और वैज्ञानिक है। इस महाकाव्य के कथानक में कवि की कल्पना सत्यपरक है। इसमें जिज्ञासाएँ, उनके समाधान, गुरुकृपा, सूक्ष्म जगत्, प्रलय, सृष्टि एवं जीवों की मंगलकामना का आह्लादन गेय भाषा शैली में विद्यमान है। यथोक्त है कि—

"देशकाल की जटिल जवनिका, लेखन क्षण में लुप्त रहेगी।
ऋषि-आश्रम में दिव्यागम वह पुत्रों से माँ स्वयं कहेगी।।"

—मैथिलीमानस-महाकाव्य

महाकवि सूर्य प्रकाश जी ने इस महाकाव्य के वक्ता को पराशक्ति मान्य किया है। इसीलिए इसकी कथावस्तु में अलौकिक तत्त्वों का दिग्दर्शन है। यथार्थ रूप में महाकाव्य की कथावस्तु भारतीय संस्कृति, समाज, राजनीति, सभ्यता, धर्म, दर्शन, अध्यात्म, इतिहास आदि का साक्षात्कार कराती है। यथोल्लेख है कि—

"यह असीम भावों की भाषा, रेखाओं का यह इतिहास।
अमित भ्रान्तियों की परिभाषा, यह इच्छा का भृकुटि-विलास।"

—मैथिलीमानस-महाकाव्य

महाकाव्य की भाषा-शैली प्रौढ़, प्राञ्जल, पुनीत, प्रखर एवं प्रेषणीयता से उपेत है। उत्कृष्ट पदावलियों के गुम्फन के साथ-साथ इसमें सहज, सुरम्य एवं प्रासादिक प्रवाह भी परिलक्षित होता है। यथा–

'महकती चम्पक की मधु गन्ध, सरसती रसमयि सुर सरि तीर।
निशामुख तरुशिखरों पर विहँस छोड़ता शीतल मन्द समीर।।'

महाकाव्य में चरित्रों का चित्रण प्राणवन्त है। समस्त चरित्र मूर्तिमान होकर पाठक के समक्ष अपना अन्तः बाह्य स्वरूप प्रकट करने से मानो साक्षात् प्रदर्शित होते हैं। प्रस्तुत छन्द लव, कुश, उनकी माँ सीता और गुरुदेव का एकसाथ सान्निध्य कराते हुए अनुभूत है। यथा–

'उछलते आये दोनों बन्धु, सुसंयत किया चरण प्रणिपात।
अम्ब ने स्नेह सहित कर फेर, निहारा कर सनेह दृगपात।।
भरे मन में उमंग आवेश, प्रकाशित नव उत्साह अशेष।
कहा कुश ने 'माँ', श्रीगुरुदेव, दिया है हमको यह आदेश।।'

मैथिली-मा.-महाकाव्य, पृ. 11

प्रस्तुत महाकाव्य में 'रस' पद-पद में निस्यूत है। इसमें भावों की भंगिमा भी अनवरत भाव-विभोर करती है। कल्याणकारी शृंगार कवि को अपेक्षित रहा है। यथा–

'चरण मुख कुच नितम्ब षड्कोण मध्य अति गुप्त त्रिकोण ललाम।
नवल आभा आवृत ज्यों कृत्य अष्ट निजसखि आवृत सुखधाम।।

मैथिली मा.-महाकाव्य पृ. 58 (भूमिका)

इस महाकाव्य में अलंकार, गुण और रीति का मनोरम सन्निवेश है। अनुप्रास की छटा तो प्रायः सर्वत्र ही दृष्टिगोचर होती है। यथा–

'विहँस-विहँस, रस-रस, रस-सरिते। सरस-सरस रस धारा।'

मैथिलीमानस महा. पृ. 01

इस महाकाव्य में उत्प्रेक्षा, उपमा एवं प्रकृति का मानवीकरण अनुपमेय एवं आनन्दप्रद है, यथा–

'तरु शिखरों पर होत्रधूम ज्यों शुभाशीष कर छाया।
पूर्व व्योम में नर्तित आभा नव तारक प्रकटाया।
सहज सकुचती नवल नवोढा शयन कक्ष में जैसे,
मन्थर गति से बढ़ विभावरी झाँकी नभ में जैसे।।

मै. मा. महाकाव्य-द्वितीय सन्ध्या

'मैथिलीमानस' महाकाव्य का उद्देश्य 'प्राणि कल्याण' है। 'महाकवि' भौतिकता की चकाचौंध भरी असारता को स्पष्ट कर निःस्पृह भाव से कर्तव्य पालन के प्रति निष्ठा को लक्ष्य बनाये हुए है एवं वह अध्यात्म या आत्मज्ञान का प्रेरक चिन्तन प्रस्तुत करता हुआ शान्तिपूर्ण, समृद्ध, सम्मुन्नत एवं श्रेयप्रद समाज के सुस्थापन की सुदृष्टि से उपेत है। सुख और दुःख से परे होकर आनन्द मग्न होकर जीवन जीना ही महाकवि का पावन लक्ष्य परिलक्षित है। महाकाव्य की अन्तिम पद्यावली इसी ओर इंगित करती है। यथा–

"कल्पना करते उसकी लाल आज सोओ आनन्द विभोर।
गयी कितनी निशि, देखो, आज, शीघ्र सो जाओ, मधुर किशोर।।"

पं. श्री सूर्य प्रकाश गोस्वामी जी द्वारा विरचित 'मैथिलीमानस' महाकाव्य मानवमात्र के कल्याण

का सौजन्यपूर्ण साधन है। इसका महत्त्व इसके अध्ययन, चिन्तन, मनन एवं इसमें निहित सुभाषितों के आचरण से सहज सिद्ध होगा। यह महाकाव्य संग्रहणीय एवं अश्वयमेव पठनीय है।

प्रस्तुत लेख में बुन्देलखण्ड के महाकवि पण्डित श्री नाथूराम बूटौलिया 'उपेन्द्र' (निवासी—झाँसी) और उनके द्वारा प्रणीत 'श्रीराम-रसामृत' महाकाव्य का संक्षिप्त परिचय भी करणीय है।

पं. श्री बूटौलिया जी का जन्म 16 जून सन् 1925 ई. को हुआ था। आप रेलवे विभाग में सेवारत थे। सेवानिवृत्ति के उपरान्त आप साहित्य सेवा में अनुरत हुए, पुनश्च अनेक साहित्यिक कृतियों का प्रणयन कर अनेक पुरस्कारों से सम्मानित भी हुए। आपने 'श्रीराम-रसामृत' और 'श्री कृष्ण चरितामृत' इन दो महाकाव्यों की संरचना की। पं. श्री बूटौलिया जी ने 'श्रीराम-रसामृत' महाकाव्य का प्रणयन सात सोपानों में किया है। यह महाकाव्य दो सौ बयालीस पृष्ठों में निबद्ध है। इसका प्रथम संस्करण सन् 2001 ई. में प्रकाशित हुआ। पुस्तक प्राप्ति का पता—पं. श्री नाथूराम बूटौलिया, 456, चमनगंज, सीताराम कम्पाउण्ड, सीपरी बाजार, झाँसी (उ.प्र.) इसी महाकाव्य में उल्लिखित है।

'श्रीराम-रसामृत' महाकाव्य के नाम से ही स्पष्ट है कि यह महाकाव्य लोक प्रसिद्ध श्री राम के चरित्र-वर्णन से सम्बद्ध है। सहस्रों कवियों एवं महाकवियों ने अपनी-अपनी मति और श्रद्धा के अनुसार राम के चरित्र का गुणगान किया है। 'हरि अनन्त हरिकथा अनन्ता' के अनुसार कवि प्रतिभाओं ने श्री राम का यशगान किया और करते आ रहे हैं, लेकिन राम व्यापक ब्रह्म और परमानन्द हैं। उनके यशगान का अन्त ही नहीं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा भी है कि—

'राम ब्रह्म व्यापक जग जाना, परमानन्द परेस पुराना।
राम ब्रह्म चिन्मय अबिनासी, सर्व रहित सब उर पुर वासी।। रा.च.मा. 1

अनन्त कीर्तिमान श्रीराम के चरित्र को 'पं. श्री नाथूराम बूटौलिया जी ने भी अपनी परम प्रज्ञानुसार—'श्रीराम-रसामृत' महाकाव्य के माध्यम से काव्यमय शैली में प्रस्तुत कर हिन्दी साहित्य को एक काव्यरत्न प्रदान करने का श्रेय प्राप्त किया है। सरल सुबोध भाषा शैली और अनेक छन्दों की वर वाटिका से सजाकर महाकवि ने यह महाकाव्य सुरम्य, सुन्दर एवं लालित्यपूर्ण बनाया है। 'श्रीराम रसामृत' सुकृति शान्त, भक्ति एवं प्रेम रस से सराबोर है। सद्भावों की भीनी-भीनी सुगन्ध से महाकाव्य की रोचकता और भी समृद्ध हो गयी है। इसमें हृदय के भावों के सम्मुख बुद्धि विवेक भी खोये हुए से प्रदर्शित हैं। यथा—

रानी जो माँगौ सोई इच्छा मैं पूरन करौं,
माँगो नहीं, कहो, जामें चूक का हमारी है।
है कौन वस्तु ऐसी तुम्हें दे न सकेंगे हम,
जो चाहो वस्तु माँग लो इच्छा जो तुम्हारी है।
खाय कें शपथ राम कहैं महाराज आप,
नहीं विचलित होंय बात हिय धारी है।
निज पुण्य के प्रभाव रामशपथ खाऊँ मैं,
चाहौ वर माँगो रानी मन में विचारी है।

'श्रीराम-रसामृत' (अयोध्या सोपान), पृ. 52

भक्ति रस और भावपक्ष की सबलता के साथ ही सुकवि का कला पक्ष भी सशक्त है। कृति में माधुर्य और प्रसाद गुण के साथ ही अनुप्रास अलंकार का सौन्दर्य भी आह्लादक है। यथा—

'माता जन्मदाता जन-जीवन को भार सार,
करै उपकार वंश बेल को बढाउती।'

—श्रीराम-रसामृत महा.

महाकवि ने अपनी इस कृति में चरित्रों को भी मानो मूर्तिमान रूप प्रदान कर पाठकों से उनका साक्षात्कार कराने का सहज उपक्रम किया है एवं अपने पात्रों का पाठकों से सान्निध्य कराने में साफल्य प्राप्त किया है। राजा दशरथ, राजा जनक, राम, लक्ष्मण, कौसल्या, सीता, रावण आदि सभी पात्र सचेतन से प्रदृष्ट हैं।

इस महाकाव्य की रचना का उद्देश्य महाकवि 'रामराज्य' को लाना ही निरूपति करते हैं। यह लोकहितैषी भावना महाकवि ने इस प्रकार प्रकट की है, कि—

राम राज्य में सबइ को, मिलो विपुल आनन्द।
वैर-विरोध न रहा कउँ, लोग रहें निर्द्वन्द्व।।

—श्रीराम रसामृत, पृ. 232

श्री राम के निष्काम अभिराम कार्य और उनका लोक कल्याणकारी नाम दोनों विश्वमानव-समाज के लिए परमोपकारी सिद्ध हैं। मनीषी महाकवि समय-समय पर श्री राम के चरित्र गान कर मानव समाज का सुपथ प्रशस्थ करते हैं। ऐसे श्रेष्ठ कवियों का सन्तत्व मानव समाज के लिए अविस्मरणीय रहेगा एवं इन कविवरेण्यों की कृतियाँ सदा अमर रहेंगी।

पं. श्री सूर्य प्रकाश गोस्वामी एवं पं. श्री नाथूराम बूटौलिया ने क्रमशः श्री मैथिलीमानस महाकाव्य एवं श्रीरामरसामृत महाकाव्य की संरचना कर लोक को जो आलोक दिया है, उससे मानव समाज उनका ऋणी और कृतज्ञ रहेगा। परमेश्वर इन महाकवियों को अजरामर सुकीर्ति प्रदान करे, यही कामना है। अन्त में—

जयन्ति ते सुकृतिनः रससिद्धाः कवीश्वराः।
नास्ति येषां यशः काये जरामरणजं भयम्।।

—नीतिशतकम्

बुन्देलखण्ड में रामकथा के आधुनिक कवि

–डॉ॰ राम नारायण शर्मा

रामकथा की परम्परा आदिकाल से चली आ रही है। श्री राम का चरित्र जन-वाणी की अभिव्यक्ति ही नहीं, अपितु भक्ति की शक्ति का प्रतीक है। बुन्देल-भूमि रामरसामृत के लिए अविहित है। यहाँ के जन-जन के श्वास-प्रश्वास से राम नाम निरन्तर निःसृत होता रहता है। लोक-मंगल, लोकाभिरंजन एवं आस्था-विश्वास की प्रतिमान रामकथा ही है। इसमें गंगा की पवित्रता, जमुना की श्यामलता तथा सरस्वती का स्वच्छ-धवल रूप विद्यमान है। इसीलिए रामकथा का सृजन यहाँ के अनेक कवि रत्नों ने अपने युग-काल व परिस्थितियों के अनुरूप कर जन-मन को अभिसिंचित किया है। रामकथा हमारे माथे का चन्दन और अक्षय संकल्प का प्रतिमान है। जिसके सृजन से कवि-लेखनी पवित्र हुई है।

राम कथाकारों में आदि महाकवि वाल्मीकि (रामायण), भवभूति (उत्तर रामचरित नाटक), गोस्वामी तुलसीदास (रामचरित मानस), केशव दास (राम चन्द्रिका 16वीं सदी), विष्णुदास (रामकथा, सं. 1500 वि.), कवि गोप (राम चन्द्राभरण सं. 1800 वि.), बुन्देलखण्डी तुलसीदास (16वीं सदी) की पदावलि रामायण, कवि गम्भीर सिंह (श्री राम यश मोदक, सं. 1986 वि.), वृन्दावन दास (राम चरितावली 3000 दोहों में), बृषभान कुँवरि (श्री रामचन्द्र माधुर्य लीलामृतसार, सं. 1930-40 वि.), मैथिलीशरण गुप्त (साकेत), रामचन्द्र भार्गव (रामायण, 19वीं सदी उत्तरार्द्ध) तथा कविवर फलक एवं पं. नाथूराम बूटौलिया (राम रसामृत महाकाव्य) प्रभृति कथाकार प्रमुख हैं। किन्तु बुन्देलखण्ड में रामकथा के जिन आधुनिक कवियों की रामकथा पर सम्यक् विवेचन करना है, वे हैं–

(1) श्री निवास शुक्ल, छतरपुर म.प्र., कृति–कुछ बोलो राम, तुलसी-तरंग।

(2) पं. गोविन्द दास विनीत तालबेहट, ललितपुर, उ.प्र., कृति–प्रिया या प्रजा प्रकाशन 1939-40 ई.।

(3) रघुवर दयाल खरे, तालबेहट, ललितपुर, उ.प्र., कृति–मर्यादा पुरुषोत्तम।

(4) विन्ध्य कोकिल भैया लाल व्यास, छतरपुर, म.प्र., कृति–रघुवंशम्, प्रकाशन–2009।

उपरिलिखित रामकथा के काव्यकारों के काव्याधारों पर रामकथा की सार-संक्षेप विषय विवेचन प्रस्तुति हेतु इसे चार भागों में विभक्त किया जाता है–

(1) रामकथा की भावभूमि
(2) रामकथा में लोकमंगल
(3) मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम
(4) लोक नायक श्री राम

प्रारम्भ से ही मानवता और दनुजता का संघर्ष रहा। जिसमें सत्य-असत्य, धर्म-अधर्म, नारी-उत्पीड़न

और भय-भूख से समाज में उपजी निराशा ने एक ऐसी अदम्य शक्ति सम्बल को जन्म दिया जिसने पाशविकता के बन्धनों को काट समाज को नयी दिशा दी है। काल तथा परिस्थितियों के अनुरूप दुष्प्रवृत्तियों के रूप परिवर्तित होते रहे और उनका नाश करने हेतु सत्प्रवृत्तियों का उद्‌भव भी हुआ जिससे समाज में समरसता की स्थापना से सत्-चित् और आनन्द की अनुभूति को बल मिला। दमनकारी शक्तियों के शमन हेतु ईश्वरीय शक्तियों का उदय होता है। यह कालगति की नियति रही है। रावणत्व की पराजय में रामत्व का अवतरण ही है। किन्तु हर काल के अपने रावणत्व रूप होते रहे हैं। तुलसी के समय तुरक-मुगल तो आधुनिक काल में गौरांग महाप्रभुओं की उत्पीड़न का इतिहास विनिर्दिष्ट है। रामकथा की भाषा-भूमि के यही आधार बने। वाल्मीकि-तुलसी-मैथिलीशरण की रामकथा के नायक श्री राम का उदात्त चरित्र इसके प्रतिमान हैं जो हिमाद्रि से सागर तक में असुरों का विनाश कर एक राष्ट्र निर्माण का संकल्प लेते हैं। जो 'भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया' में साकेत के राम का प्रण है।

रामकथा की भाव-भूमि के आधार का कारण बताते श्रीनिवास शुक्ल अपनी कृति 'तुलसी तरंग' में लिखते हैं—

खण्डन का ताण्डव अखण्ड चलता था जब
खण्ड खण्ड हो चली थी नैष्ठिक परम्परा।
मुद्रित त्रिपुण्ड मूढ़-मारतण्ड मुण्ड-मुण्ड
रिक्त ज्ञान-कुण्ड, अन्ध-कूप सा अहं भरा

कवि आगे कहते हैं—

म्लेच्छ ने यथेच्छ विपदाएँ बरसायीं यहाँ
गौरव अतीत पूर्ण ग्रस लिया अनायास

ऐसा पारिस्थितिक दृश्य कविवर रघुवर दयाल खरे व्यक्त करते हैं—

जन-मन सत्ता के आगे बस रहता अपना हाथ पसारे।
जीवन के सब सूत्र जगत् में रहती सत्ता स्वयं सँवारे।

इससे जन-जीवन की असह्य वेदना का दिग्दर्शन होता है। यही कवि रामत्व के आविर्भाव का उद्‌घाटन भी यहाँ करता है—

राम स्वयं बन गये विश्वमन, या कि विश्वमन स्वयं राम है।

(मर्यादा पुरुषोत्तम)

कविवर भैया लाल व्यास अपनी कृति 'रघुवंशम्' में रामकथा भावभूमि को उत्थान व सम्मान की प्रदाता बताते हैं—

देन-देश की यह इतिहासी
कथनी सभी पुराण की।
अवतारों का दर्श कराती,
कथा दृष्टि-उत्थान की।

कवि महिमा की मृत्यु और हीनता के उदय को रामकथा की भाव-भूमि मानता है, जिससे सांस्कृतिक ऐश्वर्य का ह्रास होता है। इन्हीं भावनाओं का प्रतिपादन पं. गोविन्द दास 'विनीत' इस प्रकार करते हैं—

घुण कीटवत् चिन्ता जहाँ फैला रही हो क्षीणता।
सहयोगिनी सी डोलती है जिन गृहों में दीनता। (प्रिया या प्रजा)

कवि-मन अंग्रेजी दासता से त्रस्त भारतीय समाज की दशा का वर्णन करते हैं जिससे रामराज्य की परिकल्पना कर अपने विचार 'प्रिया या प्रजा' में प्रस्तुत कर समाज को विनिर्दिष्ट करते हैं।

देश-समाज की आर्तनाद सुन स्वयं इसका ईश्वर धरती पर अवतरित हो उनके लोक-मंगल की स्थापना की कामना से उनके जीवन में आशा-विश्वास की अनुभूति कराता है। श्री राम का यही लोक-मंगलकारी रूप आगे की रामकथा का प्रदेय बनता है, जो अतीत से वर्तमान को जोड़ता है। रामावतार इस युग का अभिराम प्रसंग है। जिसने मानव कल्याण की परिकल्पना को साकार रूप देकर सार्थक किया। रघुवंशम् में कविवर भैया लाल व्यास के विचार इसके प्रमाण हैं—

अत्याचार मिटाने भू के,
दुख हरने सारे समाज के।

श्री निवास शुक्ल ने रामकथा के नायक श्री राम के विचार भी समाज पोषक बताये हैं। यथा—

मैं नैष्ठिक कर्तव्य उपासक, नहीं लक्ष्य मात्र अधिकार।
व्यक्ति नहीं मैं तो समाज हूँ, पृथक् नहीं मेरी पहचान।

(यों बोले राम)

श्री राम का लोकोपकारी चरित्र दर्शन में उनके द्वारा शापित 'अहल्या' का दर्शन व्यास जी का अनुपमेय है, जो रामकथा का नवीन, नवयुग प्रस्तुत करता है। कवि ने पाषाण-मूर्ति की जगह अहल्या को एक 'परती', 'ऊसर' भूमि बताया जो श्री राम के 'त्रमण यन्त्र' से हरी-भरी जीवन्त हो जाती है।

अधिक समय से मुनि से शापित
पड़ी अहिल्या ऊसर, परती।
सिद्ध मन्त्र से त्रमण यन्त्र से
हरी-भरी जीवित हुई धरती।

(रघुवंशम्)

इस प्रकार रामकथा काव्य में बुन्देली व बुन्देलखण्ड की महिमा को कवि ने महिमामण्डित किया है। इसी कारण से कवि अपने आराध्य को नमन करता कहता है—

दशरथ-नन्दन राम नमामी।
यज्ञोपज अभिराम नमामी।

(रघुवंशम्)

'श्री' और 'राम' के मिलन को रामकथा में अपूर्णता को पूर्णता प्रदान करने का माध्यम माना जाता है, जो आगत के सोच का विचार बनता है। इस प्रकरण से राम और कथा को वैशिष्ट्य प्राप्त होता है श्रीराम के इसी मर्यादा पुरुषोत्तम रूप को आधुनिक 'रामकथा' के कवियों ने बड़े ही मार्मिक तथा तार्किक ढंग से अपनी कृतियों द्वारा निरूपित किया है।

ऋषि-मुनियों के यक्षों की रक्षा, धर्म की स्थापना एवं एक राष्ट्र निर्माण की शपथ से बँधे हुए हैं श्री राम ऐसी परिस्थिति में 'प्रान जाहिं पर वचन न जाहीं' से वचनबद्ध राम मर्यादा बनाये रखते हुए राजतिलक की मौन सम्मति तो देते हैं किन्तु वह नियति से सुपरिचित हो कुछ नहीं कहते। भरत को राजतिलक के अवसर पर न बुलाने से इसी नियति स्वरूपा भरत-जननी के द्वारा श्री राम को निशाचर

विहीन इस भूमि को करने की शपथ की पूर्ति के बाद अयोध्यापति बनने की मन्त्रणा दी जाती है। आधुनिक रामकथा के कवियों ने पूर्ववर्ती कथाकारों से विलग एक मातृ-मन्त्र दिया है जो राम-यश कीर्ति में वृद्धि करने की कला है। श्री भैया लाल व्यास इसी विचार को इस प्रकार रखते हैं जो माता कैकेयी का कथन है–

राम वन जाएँ, करें विश्व उद्धार
राक्षसों का नाश और दानवों का संहार।
स्वीकार, मुझे गालियाँ,
अपशब्द,
और शिरोधार्य हैं व्यंग्य,
मुझे तो चढ़ा देना है,
भारत पर भारत का रंग,
बस एक व्रत, एक साध, एक उमंग।

(रघुवंशम्)

रामकथा की यह नवीन पटकथा कवि ने सहज ही प्रगट कर राम को द्विविधा से उबार दिया। वह वन-गमन के मार्ग पर सहर्ष प्रेरित हो चलते हैं। राम का यह मर्यादा पुरुषोत्तम रूप अप्रतिम है। आगे इसे ही मर्यादित अनुशासन कवि निरूपित करता है–

मर्यादा के अनुशासन के,
सम्मानित निष्कर्ष के।

(रघुवंशम)

रामकथा का एक अनूठा प्रकरण है, इस कथा से जुड़ा चला आ रहा था। चूँकि राम को वन गमन का आदेश मिला वह माता-पिता के आदेश से सही माना गया। किन्तु सीता, लक्ष्मण के संग वन-गमन पर विद्वानों व पूर्ववर्ती कथाकारों ने प्रश्न-चिह्न उठाये हैं। सीता तो सहधर्मिणी हैं इसलिए उनका साथ जाना स्वत्वधर्मी माना गया और लक्ष्मण मातृ-धर्म से बँधे हैं। अतः उनका वन-प्रस्थान में आगत की नियति पर आधारित है। किन्तु 'उर्मिला' के साथ यह सोच प्रति-उत्तर माँगता है। राम के निर्वासन से सीता-स्वत्व अयोध्या से समाप्त हो जाता है किन्तु लक्ष्मण वन-गमन के आदेश से बँधे नहीं हैं। अतएव उर्मिला का स्वत्व दशरथ पुत्रवधू होने से अयोध्या से जुड़ा रहता है। इसी विचार के आधार पर उर्मिला पति आज्ञा शिरोधार्प कर 'मर्यादा पुरुषोत्तम' की उर्मिला सादा जीवन बिताती है। कविवर रघुवर प्रसाद खरे की इस नवीन अवधारणा से सारे प्रश्नों का निराकरण हो जाता है।

मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम शक्ति-सामर्थ्य जुटाते लोक-कल्याण के पथ पर, लोक-मर्यादा की संस्थापना हेतु जन-मानस को आश्वस्त कर उत्पीड़न और भय-भूख का उद्गाता रावणत्व पर विजय पाने का विजय अभियान चला कर आसुरी शक्तियों का विनाश कर राष्ट्र-निर्माण के अपने प्रण को पूर्ण करते हैं। इसमें उन्हें सीता-हरण की दारुण व्यथा और प्रिय अनुज लक्ष्मण के 'शक्ति-प्रहार' जैसी दुखद स्थितियों का सामना करना पड़ता है। इससे एक 'मर्यादा पुरुषोत्तम' चरित्र को स्थापित कर जन-मन के विश्वास के सुपात्र बन जाते हैं।

रामकथा के महानायक श्री राम के वीरोचित भावों के साथ कतिपय लोकोपवादों की चर्चा जुड़ती गयी। जिसके विचार मन्थन आधुनिक बुन्देलखण्डी कवियों ने अपने लोक-मत के अनुसार कर समाधान भी दिये हैं।

(1) राम के वन-गमन को विधि के विधान के अनुसार सभी कथाकार मानते रहे। किन्तु क्या यह स्वेच्छा से सत्ता का मोह त्याग कर सके? इस यक्ष-प्रश्न के समाधान विवेच्य कवियों ने स्पष्ट रूप से दिये हैं। श्री निवासजी स्वयं श्री राम के श्री मुख से कहलवाते हैं—

अपने औरों के वचनों का, मैंने किया सदा निर्वाह।
राज तिलक तज खुद स्वीकारा, निर्जन वन काँटों की राह।

(यों बोले राम)

चित्रकूट में भरत के अवध लौटने के अनुरोध को अस्वीकार कर श्री राम ने पुनः सत्ता से विमोह की पुष्टि की है।

सच्चे मन से लौटाने का, लाया भरत विनय अनुरोध।
पर स्वधर्म पर अटल रहा मैं, दिया भरत को नीति प्रबोध ॥

(यों बोले राम)

इससे राम और सत्ता के प्रश्न का समाधान स्वयं राम से करा कर कवि ने नयी दिशा का बोध कराया है।

(2) दूसरा प्रश्न सती सीता का 'अग्नि परीक्षण' के दोष के लिए कवि ने इस पर मत देते कहा कि सीता ने स्वयमेव इसे स्वीकार कर श्री राम की इस लोकापवाद से रक्षा की थी।

(3) पूर्ववर्ती राम कथाकारों ने रावणत्व को अपने युगानुरूप निरूपित किया है। जो विद्वान् और महारथी होने पर अहंकारी था। किन्तु आधुनिक रामकथा में इसका बखान आज के राम कथाकारों ने आज की दशा को दृष्टिगत रखते हुए यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है। रघुवर दयाल खरे ने रावण ात्व को आज के भय-भूख से त्रसित जन-मानस पर प्रभुत्व प्राप्त करते, नारी-स्वत्वायाहरण तथा दूसरों पर प्रहार तथा संहार से समृद्धि की अनन्त कामना का नाम रावणत्व का पर्याय है। यहाँ कवि ने स्वयं रावण से कहलाया है—

जग में सत्ता के प्रभुत्व की स्वीकृति है अस्तित्व हमारा।
असुरवृत्ति का भाव इसी से जग में होता रहा पसारा।
भूखा जग ही राज्य हमारा, भय उस पर शासन है।
इस स्थिति में ही बस सम्भव जन मत वृत्ति दमन है।

यह स्थिति आज की सत्ता की भी परिचायक बनी हुई है, जहाँ येन-केन-प्रकारेण सत्ता पर काबिज रहने की प्रवृत्ति से जन को तन-मन-धन के अभावों से उन्हें परामुखापेक्षी बनाने में अपना कर्त्तव्य समझते हैं। हत्या, लूट-पाट, अपहरण, बाहुबली लोग निरीह जन की जीवन की राह कठिन कर भोगी-लोभी, अत्याचारी, दम्भी, अहंकारी, सत्ताधारी अपने रावणत्व से सत्ता-सुख का उपभोग कर रहे हैं।

किन्तु इस स्थिति के विपरीत आधुनिक राम कथाकार सत्ता और जनमत की अवधारणा में रामकथा में काल की अवस्था को प्रगट कर कहता है कि—

राम न केवल व्यक्ति भामिनी,
वे हैं, तत्त्व अनूप।
रावण भूख और भय केवल,
चिर अतृप्ति का रूप।

(मर्यादा पुरुषोत्तम)

इसी नव-जागरण की रामकथा का प्रभाव, यह जन-शक्ति के रूप में आज उद्वेलित होती दिख रही है।

रामकथा में लोक-नायक श्री राम के राजाराम के सत्ता-परीक्षण[8] की चरम परिणति हुई है। राजतिलक के बाद ही उन्हें एक प्रजाजन के कटु बोलों से आहत होना पड़ा। जिसे आधुनिक राम कथाकार पं. गोविन्द दास 'विनीत' ने अपनी कृति 'प्रजा या प्रिया' में लिखा है–

अरी पांशुला! तू अनाज्ञा गयी क्यों?
स्वयं सिद्ध आचार है वृत्तियों से,
चली जा यहाँ से वहीं दुश्चरित्रा
न रक्खू कभी पुँश्चली प्रेयसी को
न मैं राम हूँ–जो पुनग्राह्य मानें,
परावाससेवी प्रिया मैथिली को।

इससे राजाराम के समक्ष अपने ही एक प्रजाजन के 'सीता-राम' के प्रति व्यक्त वचनों से उत्पन्न प्रश्न का सत्वर समाधान करना था। यह एक अकिंचन का प्रश्न नहीं था, जिसे राम टाल जाते। यह तो राम राज्य की प्रतिष्ठा का प्रश्न था, इनके गौरव से जुड़ा था। श्रीनिवास शुक्ल इसे इस प्रकार सोचते हैं–

एक अकिंचन मत के आगे, कोई तन्त्र नहीं स्वच्छन्द।
ऐसा सोच जहाँ हो निश्चय, धन्य-धन्य वह राज्यानन्द।

(कुछ बोलो राम)

श्रीराम ने अग्नि-परीक्षा करा कर सीता को लोकापवाद से मुक्त कराने की सोच से ही इस कलंक से छुटकारा पाने का प्रयास किया था। किन्तु श्रीराम के समक्ष एक लोकनायक होने के लिए एक साधारण जन के खड़े इस प्रश्न का निराकरण तो करना ही था। इसी कारण आधुनिक रामकथा के पोषक श्री श्रीनिवास शुक्ल अपनी कृति 'कुछ बोलो राम' के द्वितीय भाग 'यों बोले राम' में कहलाते हैं–

दोषी या निर्दोषी माने, मुझको जनमत है स्वीकार।
लोकाराधन करने आया, मेरे मन में नहीं विकार।
मैं नैष्ठिक कर्तव्य उपासक, नहीं लक्ष्य मात्र अधिकार।
व्यक्ति नहीं मैं तो समाज हूँ, पृथक् नहीं मेरी पहिचान।

श्रीराम के ऐसे उद्‌गार उन्हें लोकनायकत्व के पद की प्रतिष्ठा प्रदान करते हैं। किन्तु सीता को निर्दोष मानते सभी रामकथाकारों ने लिखा है–

सीता की निर्मल छवि पर था अपवादों का अनुचित लेप।
उसे हटाने का उपाय था, इस प्रसंग का यह संक्षेप।

(यों बोले राम)

श्री राम पर सत्ता-सुख को प्रमुखता देने और सीता निर्वासन पर कटु प्रहार किये गये हैं किन्तु आधुनिक कवि पं. गोविन्द दास 'विनीत' अपनी कृति 'प्रिया या प्रजा' में स्पष्ट करते हुए इसका सरल-सटीक निराकरण प्रस्तुत करते हैं। पिताश्री दशरथ की असमय मृत्यु से शेष राज्यावधि का अधिभार श्री राम को उपभोग कर अवध की अवनी को त्यागना नियति का प्रभार है। अतः वह कहते हैं–

पूज्य पिता की शेष अवधि को,
यथा रूप भोग प्रमाण।

आ पहुँचूँगा–हाँ, हाँ कान्ते,
करो शान्ति गति से प्रस्थान।

श्री राम को आदर्श महापुरुष मानते हुए गोस्वामी तुलसीदास ने इस प्रकरण को अपने 'रामचरित मानस' में तो नहीं उठाया किन्तु गीतावली में 'सीता वनवास' के आठ छन्द लिख कर इसकी पूर्ति की है। जबकि अयोध्या सिंह उपाध्याय ने 'वैदेही वनवास' में यह सब उद्धृत किया है। वाल्मीकि के पूर्वर्ती भवभूति ने 'उत्तर राम चरित' नाटक में इसे समग्र रूप से लिखा है।

सीता वनवास के संकल्प का दोष पति परायण होते हुए पति श्रीराम पर मढ़ा जाता है। सत्पति राघव इसे भी नकारते हैं। लोकमत के आगे राघवेन्द्र श्रीराम का सीता निर्वासन कुल सम्मत बताते हुए कविवर गोविन्द दास 'विनीत' भरत की सम्मति से इसकी पुष्टि करते हैं–

सहस्र वर्ष और भावी योग्य पितृ राज्य है।
सलोक भाव लोक में न लोकनीति त्याज्य है।
महीश क्या त्रिलोक का अधीश ईश ही सही।
प्रजा 'नहीं' कहे-नहीं, सही कहे वही सही।

(प्रजा या प्रिया)

श्री व श्रीराम कथा का समाहार सभी कथाकारों ने बाल्मीकि जी की कथा के अनुसार सम्पन्न किया है। श्रीनिवास शुक्ल का अभिमत है जो आधुनिक जन-जन का मत है–

गिरा अर्थ जैसे समरस हो,
चन्द्र चन्द्रिका एकाकार।
सियाराम संयुक्त रूप में,
गूँजेगा घर-घर में गान।

(यों बोले राम)

आधुनिक रामकथा का यह मौलिक व नवीन चिन्तन है, जो अनुकरणीय है।

सन्दर्भ

1. आदि कवि बाल्मीकि कृत – रामायण
2. भवभूति – उत्तर रामचरित नाटक
3. गोस्वामी तुलसीदास – रामचरित मानस
4. वही – गीतावली
5. वही – राम लला नहछू
6. कवीन्द्र केशव दास – राम चन्द्रिका
7. विष्णु दास – रामकथा
8. मैथिलीशरण गुप्त – साकेत
9. श्रीनिवास शुक्ल – कुछ बोलो राम
10. वही – तुलसी तरंग
11. भैया लाल व्यास – रघुवंशम्
12. वही – सीता सत्यम्
13. रघुवर दयाल खरे – मर्यादा पुरुषोत्तम
14. पं. गोविन्द दास 'विनीत' – प्रिया या प्रजा

पं. गोकुल चतुर्वेदी कृत 'रामचरित्र कथानक गीतमाला' रामकाव्य

–अजित श्रीवास्तव

बुन्देलखण्ड की भूमि पर ही तुलसीदास जी ने जन्म लिया। जिससे 'राम' शब्द विश्वव्यापी रूप लेकर आज भी सुलभ, सरल, सहज होकर सत्य सनातन सभ्यता, शान्ति, सात्विकता का परचम लहराये हुए है। इस मान्त्रिक शब्द ने लोगों का जीवन परिवर्तित किया। यूँ तो आदिकवि वाल्मीकि जी ने संस्कृत में 'रामायण' रची थी। लेकिन जन-जन तक 'रामकथा' चाहे कोई अनपढ़ हो, असाक्षर हो तक 'तुलसी' ने पहुँचायी। यह गायी गयी, सुनी गयी सुनायी गयी और सुनवाई गयी। विश्व में एक ग्रन्थ पर आधारित, टीकाएँ, लघुग्रन्थ या डॉक्टरेट उपाधि संख्या की दृष्टि से देखें तो वह सिर्फ और सिर्फ 'मानस' ही है। इतने अनुवाद, इतनी शतकरोड़ रामायणों का जन्म हुआ कि आज भी अनवरत इस पर कुछ न कुछ लिखा जा रहा है।

ऐसे ही एक कवि थे स्व. पं. गोकुल प्रसाद चतुर्वेदी जो 1 जनवरी 1910 को तालबेहट में जन्मे एवं प्रधानाध्यापक पद से सेवानिवृत्त हुए। वह हिन्दी, अंग्रेजी, उर्दू का ज्ञान रखते थे, बी.टी.सी. ट्रेनिंग किये थे। 1970 में सेवानिवृत्त होने के बाद टीकमगढ़, म.प्र. में अन्त तक रहे। वह कर्मठ स्वाभिमानी, शान्त स्वभाव के कर्म और रचना धर्म का पालन करते रहे। उन्होंने भजन वाटिका, बच्चों की गणित, चन्द्रप्रभा देवाश्रम देव वन्दना, श्री रामकथा पाठमाला, श्री हनुमान महिमा एवं रामचरित कथानक गीतमाला जैसे कई लघु ग्रन्थ रचे, प्रकाशित कराये एवं हजारों की संख्या में वितरित किये। उनका चरित्र उनकी कृति श्री हनुमान महिमा में 'विनय' से सामने आती है–

हो गुणी, ज्ञानी कला-निधि, बुद्धि सद् मोहि दीजिए।
व्याधि, बाधा, आपदा हर, शान्ति सुखमय कीजिए।।

उनकी कृति रामचरित्र कथानक गीतमाला में सम्पूर्ण कथा 47 शीर्षकों में बँटी है। प्रारम्भिक शीर्षक–(1) मनवाणी, (2) रामावतार का हेतु, (3) देवविनय और अन्तिम पदों का शीर्षक है (46) रामतन त्यागन विचार (47), राम का अन्तर्ध्यान होना। कवि, उपासक एवं भक्तिमय होते हुए भी वे फवित्व पर ध्यान देते रहे। उन्होंने दोहा, छन्द, पद का लेखकीय उपयोग कर अपनी ही सर्वधर्म समभाव, सार्वभौमिक रूपवाली, सार्वकालिक रचना रची, वह चाहते भी यही रहे–

"रिद्धि सिद्धि साधक पावत है, चरित्र पढ़े श्रीराम।
आधि-व्याधि संकट जग नाशत, अन्त मिलत सुरधाम।
गोकुल लिखी राम की गाथा, सूक्ष्म रूप तमाम।
पढ़ो सुनाओ परिजन पुरजन, रामकथा सुख धाम।"[2]

डॉ॰ विश्वनाथ प्रसाद तिवारी के अनुसार, "साहित्य वर्तमान को अतीत से जोड़ता है। हम अज्ञेय को समझकर तुलसीदास को और अच्छे से समझ सकते है"[3] शायद इसी कारण कवि ने रामकथा के और सरलीकृति, सुलभ लघुकाव्य गढ़े हों। कवि ने कथा रावण के जुल्म से जब आर्य भूमिवासी त्रस्त हो गये तो देवताओं की विनय पर राम जन्म हुआ। तव स्वयं शिव पधारे–

"आज प्रात एक बाबा योगी, द्वारे आय पुकारो री।
लायी थाल साज कौसिल्या, योगी वचन उचारो री।
इतना कह शिव रूप दिखायो, मैं शंकर सिर नायो री।
धाय गयी लालन ले आयी, सुख निध दर्शन पायो री।[4]

कवि ने कविता पर गेय, संगीत एवं गायन की विभिन्न पद्धतियों का सहारा लिया है। उसने प्रकृति प्रवृत्ति, प्रेरणा का प्रस्फुटन अपने काव्य में दिया। राम का चलना और खेलना के बाद विश्वामित्र माँग कर राम को ले गये, अपने आश्रम में–

"विहरत मुनि आश्रम, दोऊ भाई।
श्याम गौर भ्रातन की जोड़ी देखत मुनि हरषाई।
प्रातकाल मुनि यज्ञ रचायो, नारि ताड़का छाई।
मारयो बाण कराल राम ने, तुरतइ मार गिराई।"[5]

फिर जनकपुर जाकर पुष्प वाटिका भ्रमण कर धनुष यज्ञ के दौरान ही परशुराम संवाद की भाषा पठनीय है–

"परशुधर गड़वड़ि आय मचाई।।टेक।।
भई घोर ध्वनि धनु भंजन की, भृगुपति परी सुनाई।
कर कुठार धनुसाज विप्रवर, धनुष यज्ञथल जाई।"6

उक्त पंक्तियाँ में शब्द चयन कठोरता लिये हुए हैं यानि जैसा प्रसंग वैसी भाषा। यह कवि की काव्य साधना प्रदर्शित करता है। राम-विवाह की पंक्तियाँ देखें–

"श्याम वर्ण हय पर असवारी, चारहु दूल्हा परम सुहाये।
राछ फिरी शोभित पुर वीथन, नगर नारि मिल मंगल गाये।"7

कथा कवि की बढ़ती है। अगले शीर्षक राम वनवास एवं वन-गमन, दशरथ जी का विलाप जो कारुणिक बन पड़ा है, प्रयाग होकर बाल्मीकि आश्रम से चित्रकूट जाना, वहाँ भरत मिलाप होना जैसा घटनाक्रम बढ़ता है। कवि प्रकृति से परिचित है, कवि ने काव्य में जीव-जन्तु, वृक्ष वितान, पुष्प, पशु-पक्षी, कंकर, पत्थर, नदी पहाड़ सब चित्र उकेरे हैं–

"पुष्प खिलत बहुरंगी सुरभित, तरुवर पुष्प लता के।
दादुर मोर पपीहा बोलत, कोकिल बोल मजाके।।"[8]

चित्रकूट के बाद ही पंचवटी की घटना हुई। जटायु दुखी हुए, पम्पासर पर राम-लखन ने जो शोभा निरखी, पंक्तियाँ बोल उठीं–

"नीर अगाध कमल दल फूले, फल तरुवर चहुँ ओर सुहाये।
घाट मनोरम चहुँ दिशि निर्मित, लहर-लहर जल सरसाये।।
नाचत मोर भृंग गुंनजारत, ऋतु-वसन्त पिक कूक सुनाये।
हिरन हिरनियाँ मिल संग शावक, पीवत नीर अभय सर आये।।"[9]

कवि का हृदय भावुक भक्तिमय नहीं है। वह तो प्रकृति की अनन्यता पर अपना आत्मसमर्पण

कर बिम्ब रचता है, कवि जानता है कि साहित्य का मूल 'आनन्द' ही है। सुग्रीव वाले प्रसंग के साथ हनुमान गमन, लंका दहन विभीषण को त्यागा जाना और अंगद-रावण संवाद में कवि ने विशिष्ट शैली अपनायी है। मन्दोदरी का सुझाव न मान युद्ध हुआ। लक्ष्मण को शक्ति लगी। कवि ने संक्षेप में सब कुछ कह काव्य का धर्म पालन किया। गद्य फैलाकर लिखा जाता है पर कविता तो लघु रूप में बड़ी-बड़ी बातों का गुम्फन ही होती है।

"भयो घोर संग्राम विरथ भयो, कोपित हो शिव शक्ति चलाई।
लागत शक्ति लखन भये मूर्छित, लाये पवनसुत जहँ रघुराई।।
किया विलाप देख लघु भ्राता, बारबार लियो कंठ लगाई।
वैद्य सुमन्त लाये हनुमन्ता, देख दशा मन धीर धराई।।"[10]

मेघनाद, कुम्भकरण, रावणवध के बाद विभीषण का तिलक कर राम ने लंका से विदा ली। फिर अयोध्या आकर राम राज पद्य आया है। कवि ने संक्षिप्त में समग्र भर कर रचना की है। रामराज की दुखद घटना। सीता-त्याग एवं उत्तर-रामायण प्रसंग, लवकुश लीला के साथ राम तन त्यागन विचार कर उनका अन्तर्धान होना तक वर्णित है—

"अन्तर्धान भये प्रभु क्षण में, चकित सभा भई सारी।
ली समाधि जल भरत विकल हो, सरिता धार मझारी।।
रिपुहन वास कियो नन्दन वन, राम भजन व्रतधारी।
गोकुल भई समापन लीला, दुष्ट दलन भयहारी।।"[11]

इस प्रकार कवि ने सामान्य पुस्तक के आकार के मात्र 22 पृष्ठों में सम्पूर्ण राम-कथा को पद्यमय रूप में प्रस्तुत कर जन-सामान्य को रामचरित से परिचित कराने का स्तुत्य प्रयास किया है।

—अजीत श्रीवास्तव एडवोकेट

सन्दर्भ

1. पं. गोकुल प्रसाद चतुर्वेदी 'हनुमान-महिमा', प्रकाशक—गोकुल प्रसाद चतुर्वेदी, टीकमगढ़ म.प्र., पृष्ठ 10
2. पं. गोकुल प्रसाद चतुर्वेदी 'राम चरित्र कथानक गीतमाला', प्रकाशक—गोकुल प्रसाद, टीकमगढ़, पृष्ठ 1
3. 'स्मृति पुञ्ज' लेखक मदनलाल श्रीवास्तव 'योगेन्द्र' (लेख संग्रह), प्रकाशक—वसन्त प्रकाशन, आगर (मालवा), जिला शाजापुर, म.प्र., की भूमिका, पृष्ठ 7
4. पं. गोकुल प्रसाद 'रामचरित्र कथानक गीतमाला', पृष्ठ 2
5. पं. गोकुल प्रसाद 'रामचरित्र कथानक गीतमाला', पृष्ठ 3
6. पं. गोकुल प्रसाद 'रामचरित्र कथानक गीतमाला', पृष्ठ 5
7. पं. गोकुल प्रसाद 'रामचरित्र कथानक गीतमाला', पृष्ठ 7
8. पं. गोकुल प्रसाद 'रामचरित्र कथानक गीतमाला', पृष्ठ 9
9. पं. गोकुल प्रसाद 'रामचरित्र कथानक गीतमाला', पृष्ठ 12
10. पं. गोकुल प्रसाद 'रामचरित्र कथानक गीतमाला', पृष्ठ 17
11. पं. गोकुल प्रसाद 'रामचरित्र कथानक गीतमाला', पृष्ठ 22

बुन्देलखण्ड के कुछ अज्ञात और अल्पज्ञात रामकथा गायक

रामचन्द्रिका के रचयिता केशवदास के पश्चात् बुन्देलखण्ड के ऐसे कई अज्ञात और अल्पज्ञात रामकथा गायक कवि हुए हैं जिनकी कृतियाँ प्रकाशन के अभाव में बेठनों में बँधी पड़ी हुई हैं। ऐसे कवियों की संख्या अत्यधिक है। उनके द्वारा रचित ग्रन्थों की सूची बनाना श्रमसाध्य और दुष्कर कार्य है। कुछ ऐसे भी कवि हो गये हैं जिनके फुटकर छन्द संग्रह ग्रन्थों में प्राप्त होते हैं किन्तु उनकी रचनाएँ अप्राप्त हैं। सुधाकर कवीन्द्र रचित कवित्त रामायण में नन्द (दयानन्द), भगवन्त, और भैरव नामक कवियों के रामकथा से सम्बन्धित छन्द मिलते हैं किन्तु इनकी कृतियाँ और जीवनवृत्त अप्राप्त है। सुधाकर कवीन्द्र ने संवत् 1950 वि. कवित्त रामायण की रचना की थी। इससे ज्ञात होता है कि नन्द, भगवन्त और भैरव ने संवत् 1950 वि. के पूर्व रामकथा से सम्बन्धित ग्रन्थ की रचना की होगी। यहाँ हम बुन्देलखण्ड के कुछ अज्ञात, अल्पज्ञात और फुटकर छन्दों के रचनाकारों को उद्धृत कर रहे हैं। इनके प्राप्त छन्द बड़े सशक्त और प्रभावशाली हैं, तभी सुधाकर कवीनद्र ने अपने ग्रन्थ में उनको स्थान दिया है।

कवि बुद्धिराज

बुन्देलखण्ड के कवि बुद्धिराज की एकमात्र रचना कथार्णव की एक अपूर्ण हस्तलिखित प्रति प्राप्त है। हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रन्थों और नागरी प्रचारिणी सभा की खोज विवरणिकाओं में इनका विवरण नहीं मिलता है। बुद्धिराज कृत कथार्णव ग्रन्थ की हस्तलिखित प्रति आदि-अन्त से अपूर्ण होने के कारण ग्रन्थ का रचनाकाल भी अज्ञात है। इस ग्रन्थ की हस्तलिखित प्रति लेखक को श्री कामता प्रसाद सड़ैया, ग्राम इंदरगढ़, जिला—दतिया (म.प्र.) के संग्रह से प्राप्त हुई थी। यह पण्डित घराना रहा है। श्री सड़ैया जी के कथनानुसार बुद्धिराज इन्दरगढ़ के रहनेवाले थे। उनका समय अठारहवीं शती का अन्त माना जा सकता है। अतः कवि बुद्धिराज के विषय में प्रामाणिक रूप से कुछ कहना उचित प्रतीत नहीं होता।

बुद्धिराज कृत कथार्णव ग्रन्थ में राम-वन-गमन से लेकर रामाश्वमेध तक की कथा का संक्षेप में वर्णन हुआ है। कथा प्रसंगानुसार ग्रन्थ अध्यायों में विभक्त है। प्रत्येक अध्याय में कवि नामोल्लेख मिलता है—"इति कथार्णव बुद्धिराज विरचिते हनुमान लंका प्रवेशनो नाम एकादशोऽध्याय।।11।।" इस ग्रन्थ के कुल छब्बीस अध्याय ही उपलब्ध हैं। कवि ने विविध छन्दों में रामकथा का वर्णन किया है और अपने से पूर्व कवियों द्वारा रचित रामकथा काव्य-ग्रन्थों से कथाओं का चयन कर उसे अपने ढंग से प्रस्तुत किया है। जैनी रामकथा ग्रन्थों का भी इस पर प्रभाव पड़ा है। कवि द्वारा वर्णित कुछ नवीन कथा प्रसंगों का वर्णन यहाँ प्रस्तुत है—

सोमेश्वर ऋषि से राम की भेंट—कबन्ध का उद्धार कर राम लक्ष्मण सहित सोमेश्वर ऋषि के आश्रम पर पहुँचते हैं। राम-लक्ष्मण को आशीर्वाद देने के बाद ऋषि ने उनको चिन्तित देखकर उनसे चिन्ता का कारण पूछा। राम, ऋषि से अपनी दारुण व्यथा कहते हैं—

रघुनाथ कही सिय रूप बिना।
कल मोहि घरी न परै छिन ना।
सिय सोधु नहीं दृग देखि परै।
दिनहू दिन अंगनि सोकु भरै।।

राम की व्यथा सुनकर ऋषि ने उन्हें सुग्रीव का पता बताया। ऋषि की आज्ञा शिरोधार्य कर राम ऋष्यमूक पर्वत की ओर प्रस्थान करते हैं। पर्वत के निकट पहुँचने पर राम, लक्ष्मण को सुग्रीव के पास भेजते हैं। लक्ष्मण को अपनी ओर आता हुआ देखकर सुग्रीव डर के मारे भाग जाता है—

सुनि रामचन्द्र प्रयान करि ऋषि मूक ऊपर को गये।
जहँ पंच वानर देखि लछिमन सामुहे ठाढ़े भये।।
धनुबान धर दृग देखिके सुग्रीव भाग गये तहीं।
दस कोस पर्वत ओट लै अति भीषम वेगि गुफा गती।।
रघुनाथ संकित जानिकै लछिमन तहाँ पठवाइयो।
कछु सन्धि सी उर जानि हनुमत कष्ट सों ढिग आइयो।।
कहतौ किहि काज पैठे इहाँ तुम कह कामु है।
बालि बैरु वृथा गमावत डाग डौगर थामु है।।
रघुनाथ मोहि पठाइयो सुग्रीम को इत जानिकै।
तजि संक वीर निसंक आवहुँ बात लीजै मानिकै।।
रघुनाथ को, दसरथ के सुत, केहि कार्य सिधाइयौ।
तिय हरन तिनको भयो सो तुम मित्र कारन आइयौ।।

कवि ने शबरी की कथा को छोड़ दिया है। सुन्दरकाण्ड में कवि ने कुछ रोचक कथाएँ दी हैं। उदाहरणार्थ—हनुमान द्वारा लंकिनी का दाह संस्कार करना, मेघनाद के प्रहार से बचने के लिए हनुमान का लघु रूप धारण कर कुएँ में कूद पड़ना, मेघनाद का ब्रह्मफाँस से उन्हें कुएँ से निकालना, हनुमान का रावण को अपने मरने का उपाय बताना, राम का बामदेव मुनि के पास जाकर उनसे सेतुबन्धन का उपाय पूछना, आदि ऐसे प्रसंग हैं, जो रामकथा को रोचकता प्रदान करते हैं।

मेघनाद, हनुमान को पकड़ने का प्रयास करता है तो वे लघु रूप धारण कर कुएँ में कूद पड़ते हैं। मेघनाद ब्रह्मफाँस के द्वारा कुएँ से निकालता है—

पढ़ौ ताहि जानै सुविद्या मती कौ।
परौ कूप में रूप कीन्हों रती कौ।
नहीं हाथ आवै कितौ जतन कीनौ।
तबै ब्रह्म की फाँस सौ बाँधि लीनौ।।

इसी प्रकार रावण ने हनुमान को मारने के लिए नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग किया किन्तु वह निराश हो गया। तब हनुमान ने स्वयं रावण को अपने मरने की विधि बता दी—

तीखै कढ़ि कुठार लै काटौ कटै न गात।
अपने मरन उपाय की कहो तनू हँसि बात।।

रावण ने हनुमान की बात पर विश्वास कर उनकी पूँछ में आग लगवा दी। परिणाम हुआ—लंका प्रज्वलित हो उठी। कवि बुद्धिराज कहते हैं—

ज्वाल की झार सम्हार सकै को प्रहार के पूछ पलाक लई।
नृप भौन भभकि उठे भहराइ बलाहक भीर बुलाइ लई।
बरसै, सरसै, झरसै जलधार झुलाइ लंगूर लपेट छई।
कपि देह कहूँ तनको न जरी पै धराधर लंक जू जार दई।।

राम ने समुद्र पर सेतु बनाने के लिए जामवन्त से मन्त्रणा की। जामवन्त ने पटु बन्दरों को बुलाकर सेतु बनाने की आज्ञा दी किन्तु समुद्र में पत्थर डालते ही वे डूब जाते थे। राम निराश होकर तपस्या के लिए बैठ जाते हैं—

बिछाई दर्भ भूमि गर्भ रामचन्द्र सोइयौ।
स्वरूप चित्र चिन्तनीय सिन्ध स्वप्न जोइयौ।।

राम ने समुद्र से बहुत विनती कि किन्तु उसने उनकी विनती की ओर ध्यान नहीं दिया। उल्टे उन्हें घर लौट जाने के लिए कहा—

हाथ जोर रघुराय यह विनती कही सुनाइ।
मारग मोकौ दीजिए सेन पार होइ जाइ।।
जाहु आपने धाम, दल बाँदर तन रीछ लै।
राम कहत बे काम, मारग सिन्धु सुनौ कहूँ।।

समुद्र का वचन सुनकर राम प्रातःकाल उठते हैं और निराश मना होकर बामदेव ऋषि के पास जाते हैं। बामदेव ऋषि ने राम को धैर्य धारण करने को कहा और समुद्र के साथ कठोर बर्ताव करने का आदेश दिया। फलतः राम ने समुद्र पर बाण सन्धान किया। समुद्र ने नतमस्तक होकर उन्हें सेतु बन्धन का उपाय बताया।

मार्मिक प्रसंगों के वर्णन में बुद्धिराज ने अपनी पूरी भावना को व्यक्त किया है। रावण की मृत्यु के बाद जब हनुमान के साथ लक्ष्मण, सीता के समक्ष उपस्थित होते हैं, उस समय सीता का सारा दुःख आँसुओं के माध्यम से निकल पड़ता है—

लखि राम सहोदर कौ जबहीं मुख तैं कछु बात गयी न कही।
विलखी निरखी कपि देह जबै निकसी हती पालन पीर सही।
सकुची सी सिया समुहाति सकै न तौ मिस यौ सिर नाइ कही।
सिय के तन की दुख पंक सबै अश्रुपात दुहून के बीच बही।।

कथार्णव ग्रन्थ में सीता परित्याग और रामाश्वमेध की कथा भी है। लवकुश की वीरता का बखान करने में कवि का मन अधिक रमा है। लव और लक्ष्मण के भयंकर युद्ध से दिग्गज काँपने लगे, देवता सशंकित हो उठे। रघुवंश में पारस्परिक विरोध के कारण पृथ्वी विनष्ट के कगार पर आ गयी। इस विषम स्थिति को देख तपसी लव, लक्ष्मण से कहता है—

लव बोलि कही सुनि राम सहोदर रावन के सुत सागि हमे जू।
जीवन हो जग में कछु और सदागति सून बचाइ दये जू।
हूँ न मरे दुःख ओघ परे, जब सापनि अंग लपेटि लये जू।
आइ मरे लव के सर सौ अबतो हठि कै जम लोक गये जू।

बुद्धिराज ने कथार्णव ग्रन्थ को रोचक बनाने के उद्देश्य से अपनी प्रतिभा का उपयोग किया है। उन्होंने अत्यन्त सरल ब्रज भाषा में रामकथा लिखी है। इसमें बुन्देली शब्दों का बाहुल्य है। कथार्णव

ग्रन्थ में प्रमुख रूप से दोहा, सोरठा, चौपाई, गीतिका, हरि गीतिका, अरिल्ल, नाराच, तोटक, रूपमाला, पद्धरी, भुजंगप्रयात, द्रुमिला, तोमर, भुजंगी, सवैया, कवित्त, घनाक्षरी, मधुभार आदि छन्दों का प्रयोग हुआ है। बुद्धिराज ने कथार्णव ग्रन्थ लिखकर रामकथा में श्री वृद्धि की है।

सुकवि मिही लाल भट्ट

मिहीलाल भट्ट प्रसिद्ध कवि पद्माकर भट्ट के पुत्र थे। ये दतिया (म.प्र.) स्थित कुंजनपुरा मुहल्ले में बनी पैतृक हवेली में रहते थे। दतिया में यह हवेली छवि जू की हवेली के नाम से प्रसिद्ध है। इनके पुत्र गदाधर भट्ट थे जिन्होंने कई ग्रन्थों की रचना की थी। मिहीलाल भट्ट का जन्म समय निश्चित नहीं है किन्तु इतना ज्ञात होता है ये संवत् 1880 के पूर्व वर्तमान थे। ये सुकवि नाम से कविता करते थे। गदाधर भट्ट ने स्वरचित कैसर सभा विनोद में (जिसका रचनाकाल संवत् 1939 वि. है) यह लिखा है कि महीलाल (मिहीलाल) को जयपुर राजघराने से सुकार्य की खिताब, ग्राम और धन प्राप्त हुआ था–

महीलाल कवि जय नगर रावल सभा सिताब।
पूरी समस्या ग्राम धन पायहु सुकवि खिताब।।

–हस्तलिखित प्रति-छन्द संख्या–9

मिहीलाल 'सुकवि' की एकमात्र रचना राम औतार 'रामावतार' की हस्तलिखित प्रति दतिया राजकीय पुस्तकालय में सुरक्षित है। इसमें दोहा, सवैया, कवित्त कुल मिलाकर पंचानवे छन्द हैं। अत्यन्त सरल भाषा में छन्द लिखे गये हैं। सुकवि ने ग्रन्थ का शुभारम्भ इस प्रकार किया है–

दोहा– **सुर सन्तन कौ अन्त लखि, बढ़्यौ असुर भुव भार।**
हरन सीस दस करन बस, लयौ राम अवतार।।8।।

कवित्त– **रावन के जोर भोर राषस निवास लये,**
अवनि अकास ताके त्रास तरसतु है।
माचौ अन्धकाल, प्रलैकाल की मिसाल जामै,
पुन्य बन्यौ लुंज पाप पुंज परसतु है।
सुकवि जसुन्त, सुर सन्त की पुकार आयौ,
लछूछ भर ताकर करतार सरसतु है।
अैसै लयौ राम अवतार अवधेस धाम,
पूरब के जाम ज्यौं अनन्द बरसतु है।।2।।

रामऔतार ग्रन्थ अप्रकाशित है। इस ग्रन्थ का मात्र विवरणपत्र नागरी प्रचारिणी सभा में सुरक्षित है और वह भी अभी तक अप्रकाशित है।

मोहन लाल समाधिया

मोहन लाल समाधिया बुन्देलखण्ड स्थित कुल पहार ग्राम के निवासी थे। इनकी एकमात्र रचना 'रामायण की घटनाओं का तिथि पत्र' नाम से मिलती है, जिसकी हस्तलिखित प्रति नागरी प्रचारिणी सभा काशी के संग्रह में सुरक्षित है यह प्रति पूर्ण है। ग्रन्थ दोहा, छन्द में लिखा गया है। ग्रन्थारम्भ

में कवि ने गणेश, शम्भु, वेद एवं कवि-कोविदों की वन्दना के बाद अपना परिचय दिया है–

संवत् विगत उनीस सै पुनि तेरह की साल।
भादों वदि की द्वादसी पुष्य नखत ससि वाल।।

समाधिया तुलसीकृत रामचरित का अध्ययन करते थे। मानस का उन पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वे रामभक्त हो गये और रामकथा की घटनाओं का तिथिपत्र लिख डाला–

मोहन लाल समाधिया कुल पहार कौ वास।
तुलसी कृत की कृपा तैं भयो राम कौ दास।।

उन्होंने अग्निवेश रामायण, रामाश्वमेध और पुराणों के आधार पर रामायण की रचना की, जिसे रामायण की घटनाओं का तिथि पत्र कहा जाता है। यह मानस के अनुकरण पर सप्त सोपानों में विभक्त है–"इति श्री राम चरित मानसे सकल कलु कलुष विध्वंसने अविरल हर भक्त सम्पादनो नाम सप्त सोपान समाप्त।" कुछ घटनाओं की तिथियों के छन्द यहाँ प्रस्तुत हैं–

अग्निवेस हय मेध पुन पक्ष पुरान विचार।
मिश्रि वार रामाइनै मोहन विरच सुचार।।
सुकल पक्ष मधुमास तिथ नौमी मोहन लाल।
जन्म लियौ रघुवंस मनि दसरथ भये निहाल।।
भाद्र कृष्ण की पंचमी मुनि माँगे रघुनाथ।
सकुच सहित सौंपे नृपत कह वसिष्ठ श्रुति गाथ।।
रघुबर पन्द्रह वरष के भये गये मुनि साथ।
सरन करन लीन्हें धनुष कट तट कस बर भाथ।।
कृष्ण पक्ष भादौं दसैं धाई वाँम अजान।
प्रबल ताड़का देख कैं हरैं प्रान हरि बान।।

माघ सुक्ल पूनौ दिवस छोड़िउ राम तुरंग।
लखन, सत्रुघन, पवनसुत लगे वीर सब संग।।
जेठ सुक्ल पूनौ दिवस सीय अवधपुर आइ।
चरन कमल रघुनाथ के हर्ष सहित सिर नाइ।।
सुदि अषाढु की पंचमी प्रभु मष पूरन कीन।
सकल मुनिन सन मान कै दान विविध विधि दीन।।
यह चरित्र जो जन सुनैं करैं लाय मन पाठ।
रघुपति पद रति होय उर खोलन कपट कपाट।।

मोहनलाल समाधिया ने राम-जन्म से लेकर रामाश्वमेध तक की घटनाओं की तिथियों का कथा प्रसंग क्रम से वर्णन किया है। इस ग्रन्थ में कुल 98 दोहे हैं। ग्रन्थ का रचना काल संवत् 1913 वि. (सन् 1856 ई.) है।

हनुमत प्रसाद

हनुमत प्रसाद चरखारी के आचार्य कवि मोहनलाल के पुत्र थे। इनके पिता का नाम लक्ष्मी प्रसाद

(लक्ष्मी निधि) था। हनुमत प्रसाद के वंशज अब तक चरखारी में वर्तमान हैं, जो चरखारी स्थित गोबर्द्धन नाथ मन्दिर के अधिकारी और पुजारी हैं। हनुमत प्रसाद के पुत्र पं. बालभद्र प्रसाद गुरुदेव के कथनानुसार उनके पिता ने सन् 1945 ई. में हनुमान अष्टक की रचना की थी। उनके पितामह श्री लक्ष्मी निधि मिश्र ने श्री रामाष्टक, श्री हनुमान अष्टक आदि कई ग्रन्थ लिखे थे। मुझे हनुमत प्रसाद द्वारा रचित हनुमान अष्टक की हस्तलिखित प्रति ही देखने को मिली जो मिल के बने कागज पर लिखी हुई है।

कवि हनुमत प्रसाद ने काग-मैथुन-दर्शन के प्रायश्चित निवारणार्थ हनुमान अष्टक की रचना की थी। इसमें शुरू और अन्त में एक-एक दोहे और मध्य में आठ कवित्त छन्द हैं। उदाहरणार्थ दो छन्द यहाँ प्रस्तुत हैं—

कवित्त— **कीनौ राम काम राम दासन के काम,**
फैलौ सुयश सनाय धाम चौदहू मझारी जू।
अंजनी के लाल सदा जन प्रतपाल,
कृपा कीजे हो कृपाल करौ बहुत बहारी जू।
हनुमत्प्रसाद कौं सुजान निज दास,
सदा तेरी करैं आस सुनौ विनय हमारी जू।
कीजे पर तोष पोष पूरी पैज चोष,
यह मैटौ काग मैथुन कौ दृष्ट दोष भारी जू।।

छन्द—2

राम सौं मिलाय कैं सुकण्ठ शोक दूर कियौ,
सीता शोक मैटौ मार अक्ष मनुजाद कौं।
लखन जिवाय राम राम कौ बहाय शोक,
मिले धाम आप कविराय अंगदाद कौं।।
पूजौ आश सुयश प्रकाश रामदास एक,
तेरौ बल खास दास हनुमत्प्रसाद कौं।
होय जो अरिष्ट काग मैथुन के दर्शन तैं,
ताकौं वेग मैटौ, मैटौ मन के विषाद कौं।।

—छन्द—4

दोहा— **यह अस्टक हनुमन्त कौ पढ़ै सुनै नर कोय।**
ताहि काग मैथुन जनित दोष कछू नहि होय।।

—छन्द—10

सुधाकर कवीन्द्र

सुधाकर कवीन्द्र पद्माकर भट्ट के वंशज थे। इनका नाम गौरी शंकर था। सुधाकर उपनाम से कविता करते थे। संवत् 1920 वि. के लगभग इनका जन्म हुआ था। इनके पिता का नाम लक्ष्मीधर था जो दतिया राज दरबार के कवि थे। सुधाकर के पितामह महीलाल (मिहीलाल) भी अच्छे कवि थे और सुकवि नाम से कविता करते थे। सुकवि द्वारा रचित राम औतार ग्रन्थ की एक हस्तलिखित प्रति

दतिया राजकीय पुस्तकालय में सुरक्षित है। सुधाकर कवीन्द्र का रचनाकाल संवत् 1950 से 1980 वि. तक माना जाता है।

उनके द्वारा रचित पाँच ग्रन्थों के नाम मिलते हैं—प्रताप पचीसी, कीर्ति पचासा, कवित्त रामायण, विश्व विलास नाटक और नीतिदर्पण। दतिया के राजा गोविन्द सिंह जू देव ने इनके द्वारा रचित विश्व विलास नाटक पर प्रसन्न होकर कवीन्द्र की उपाधि तथा राजकवि का सम्मान दिया था। सुधाकर द्वारा रचित ग्रन्थों की प्रतियाँ अब प्राप्त नहीं होतीं। सौभाग्य से मेरे मित्र श्री गिरिराज शरण शुक्ल, अधिवक्ता (कुंजन पुरा-दतिया, म.प्र.) के संग्रह से सुधाकर रचित कवित्त रामायण की एक अपूर्ण प्रति प्राप्त हुई है। इसी काव्य ग्रन्थ के आधार पर हम उन्हें रामकथा के गायक कवियों की श्रेणी में रखते हैं।

गोस्वामी तुलसीदास कृत कवितावली (कवित्त रामायण) के अनुकरण पर सुधाकर ने कवित्त रामायण लिखा है। शैली भी तुलसी की है। इसमें दोहा, सोरठा, छप्पय, कवित्त और सवैया छन्द प्रयुक्त हैं। अन्तर केवल इतना है कि सुधाकर यत्र-तत्र तुलसी, केशवदास, अपने पूर्वजों—पद्माकर और गदाधर भट्ट के अतिरिक्त रसिक बिहारी, भैरव, भगवन्त चन्द, दयानन्द (नन्द कवि) द्वारा रामकथा विषयक छन्दों को स्थान दिया है।

प्राप्त पाण्डुलिपि के प्रारम्भिक चार पत्र (8 पृष्ठ) अप्राप्त हैं। पत्र—5 से 37 पत्र, कुल 33 पत्र उपलब्ध हैं। अन्तिम 37वें पत्र में भरत-मिलाप का वर्णन है।

सुधाकर ने अवधपुरी की महिमा का वर्णन करते हुए कहा है कि चौदह भुवन और तीन लोक में चारों पदारथों से यह राजधानी भरी हुई है—

अवधपुरी के सम दूसरी न देखी पुरी,
अलिका कुबेर की न विदित बखानी है।
सुधाकर कहे नाग, किन्नर, सुजच्छन की,
लच्छन प्रतच्छ अमरावत न आनी है।
राम पद पंकज के भक्त अनुरक्त युक्त
परम पुनीत नीत अकह कहानी है।
चौदह भुवन लोक में विचार चारु,
चारहू पदारथ की ऐसी रजधानी है।।

—बालकाण्ड, छन्द—49

कवि सूर्य वंश की गाथा का वर्णन करने जा रहा है इसलिये वह अयोध्या का वर्णन भगवान सूर्य की प्रशंसा में चार छन्द लिखकर तब सूर्यवंश के रथु, अज, दशरथ का नामोल्लेख कर राम-जन्म की कथा को प्रारम्भ किया है। राम जन्म के अवसर पर सुधाकर ने स्वरचित छन्दों के साथ अपने पूर्वज गदाधर भट्ट के दो कवित्त छन्द, तुलसीदास की कवितावली का एक सवैया छन्द, किसी भगवन्त कवि का एक कवित्त छन्द तथा रसिक बिहारी का एक कवित्त छन्द रखा है। यहाँ पर हम कवि के पूर्वज गदाधर भट्ट कृत 'राम नवमी' से सम्बन्धित छन्द देना उचित समझते हैं—

लीनो अवतार अज अच्युत अनादि प्रभु,
भार के उतारबे को जान जग जोयी है।
गदाधर कहे नित धरम धुरीन ध्रुव,
धीरता अद्यार पारावार भुवि भूमी है।

देव दुज रच्छन को लच्छन बतीस जुत,
जूहन में व्यापी सदा लोम प्रति लोमी है।
औध पुर राजा गृह दुन्धिभ अवाज,
आज देखो राम नोमी श्री राम नोमी है।।

—बालकाण्ड, छन्द—58

सुधाकर कवीन्द्र ने बाल-लीला का एक रोचक प्रसंग लिखा है—राम लला को नजर लग गयी है, वे न दूध पीते हैं, न किलकते हैं, न पलना पर झूलते हैं। माता कौसल्या अत्यन्त चिन्तित हैं। सुधाकर कवीन्द्र कहते हैं—

भूत लागौ याको के पिसाच डाकनी हू लगी,
राक्षसी विनायक के रेवती दबायो है।
सुधाकर कहत कैधों बाल ग्रह कूस्माण्ड,
कोटरा अलक्ष्मी की झंझा दरसायो है।
मात्रका प्रभ्रती अपस्मार के उनमाद भयो,
लख के विषाद मेरो मन घबरायो है।
पूतना विधान को निदान पूछो जाके अरी,
कोऊ तो बतावो याके कौन ने सतायो है।।

—बालकाण्ड—छन्द—66

सरयू नदी का वर्णन, सरयू तट पर सखाओं के साथ राम का खेलना, श्री जानकी जी का जन्म, विश्वामित्र का अयोध्या आगमन, यज्ञ रक्षार्थ राम-लक्ष्मण को साथ लिवा जाना, ताड़का वध, जनकपुर प्रस्थान, जनकपुर की शोभा का वर्णन, गिरिजा पूजन, फूल वाटिका, धनुष यज्ञ में सुधाकर कवि ने देश-विदेश के राजाओं के सम्मिलित होने के साथ मुगल, पठान, शेख, सैयद, किरानी, फारस, हिरात, जर्मनी आदि देशों के बादशाहों के आने का वर्णन किया है। परशुराम का आगमन और राम-सीता का विवाह, बरात का अयोध्या लौटना। बालकाण्ड में कुल 211 छन्द हैं।

अयोध्या काण्ड में 31 छन्द हैं। दशरथ द्वारा राम के राज्याभिषेक का निर्णय, कैकेयी का वर माँगना, राम का बनवास, भरत का अयोध्या आगमन, चित्रकूट प्रस्थान, राम की पादुका लेकर अयोध्या लौटना। कैकेयी को वर प्रदान करने के बाद राजा दशरथ के मुँह से उसके प्रति कटु वचन कहना—छन्द इस प्रकार हैं।

अरण्यकाण्ड में दस छन्द हैं। शूर्पणखा विरूपण, सीता हरण और राम की जटायु से भेंट की कथा का संक्षिप्त वर्णन है। राम अपनी जटाओं से जटायु की धूल पोंछ रहे हैं—

गोद लिये अखिया जु भरी प्रभु छाह करे तिह ओर निहारे।
पोछत पच्छ मुलच्छ भये गह वाह की चंगुल चोच सम्हारे
सोचत राम समोचत आँसू सहोदर मो हित गीध विचारे।
श्री रघुराज जू आपने हात जटायु की धूर जटान सो झारे।।

किष्किन्धाकाण्ड की कथा को 13 छन्दों में और सुन्दरकाण्ड की कथा को कवि सुधाकर ने 17 छन्दों में पूरा कर लंकाकाण्ड और उत्तरकाण्ड की कथा को थोड़ा अधिक विस्तार दिया है। सुधाकर कवीन्द्र ने तुलसीदास की कवितावली को आधार बनाया है। उन्होंने स्वरचित कवित्त रामायण में तुलसी, केशव, पद्माकर, रसिक बिहारी, भगवन्त गदाधर भट्ट, भैरव, चन्द, नन्द (दया नन्द) जैसे

कवियों द्वारा रचित छन्दों को रखा है। इनमें से भगवन्त, भैरव, चन्द और नन्द कवि के विषय में कोई जानकारी उपलब्ध नहीं होती और न उनके द्वारा रचित ग्रन्थों का पता चलता है।

मथुरा प्रसाद निगम 'लंकेश'

कायस्थ वंशीय मथुरा प्रसाद का जन्म संवत् 1895 वि. (सन् 1838 ई.) में कालपी में हुआ था। ये पेशे से वकील थे और अपने को रावण का अवतार मानते थे। कालपी में होनेवाली रामलीला में रावण का अभिनय करते थे। इनका स्वर्गवास संवत् 1966 वि. (सन् 1909 ई.) में हुआ था। मथुरा प्रसाद निगम ने अपना नाम 'लंकेश' रखा था। इसी नाम से ये कविता करने थे। उन्होंने लंकेश दिग्विजय, लंकेश वृन्दावन यात्रा, लंकेश शिव स्वरोदय आदि ग्रन्थों की रचना की थी और स्वयं लंकेशी संवत् का प्रवर्तन किया था। उनकी सबसे बड़ी अद्‌भुत देन है–कालपी में लंका और लंका मीनार का निर्माण करना जिसका संक्षिप्त इतिहास यहाँ प्रस्तुत है–

कालपी स्थित रामगंज मुहल्ले में होने वाली रामलीला में श्री मथुरा प्रसाद रावण की भूमिका निभाते थे। रावण उनके जीवन में रच-पच गया था। उनकी सूझ-बूझ अद्‌भुत थी और उनका कार्य भी विचित्र था। रामलीला के लिए उन्होंने खुले रंगमंच का निर्माण कराया। इतना ही नहीं, उन्होंने अपनी अपार सम्पत्ति को लंका बनवाने में व्यय कर दिया। संवत् 1932 वि. (सन् 1875 ई.) में कालपी लंका और लंका मीनार बनवाने का श्री गणेश किया। पूरी लंका बीस वर्ष में संवत् 1952 वि. (सन् 1895 ई.) में बनकर तैयार हुई थी–

गुण सर नौ विधु विक्रमी लंकेशी शशि साल।
पुन्य हाट करि हस्त निज पत्र रचो दश भाल।।

रामकथा ग्रन्थों में लंका का जो वर्णन मिलता है उसी तरह मथुरा प्रसाद ने अपनी लंका को बनवाया था। पूरी लंका चारों ओर प्राचीरों से घिरी थी। भगवान शिव का मन्दिर, रावण का दरबार, हाट-वाट पुष्प वाटिका, अशोक वाटिका के साथ लंका मीनार को देखकर लंकेश निगम की बुद्धि की सराहना करनी पड़ती है।

लंका और लंका मीनार को बनाने वाले बुन्देलखण्ड के ही कारीगर थे। लंका मीनार तीन सौ फीट ऊँची है, जो दूर से ही दिखाई देती है। इस पर ऊपर तक चढ़ने के लिए एक सौ तिहत्तर सीढ़ियाँ बनी हैं जिनसे आसानी से ऊपर तक जाया जा सकता है। मीनार के बाह्य भाग पर चारों ओर चूना और सुर्खी से रावण के अतिरिक्त राक्षसों की मूर्तियाँ बनी हैं। मीनार के दक्षिण तरफ थोड़ी दूर पर भगवान शंकर का मन्दिर बना है। मीनार के बाह्य भाग पर बनी रावण की प्रतिमा पचास फीट लम्बी है, उसकी दृष्टि सीधे मन्दिर में प्रतिष्ठापित शिवलिंग पर पड़ती है। इस मीनार पर रावण के अतिरिक्त राक्षसों और बन्दरों की मूर्तियाँ बनी हैं। इसके प्रवेश द्वार पर नाग-नागिन के जोड़े बने हैं। एक ओर चिर निद्रा में कुम्भकर्ण की साठ फीट लम्बी प्रतिभा है। प्राचीर के बाह्य भाग पर मल्ल युद्ध करते राक्षसों और विभिन्न मुद्राओं में राक्षसिनियों की प्रतिमाएँ बनी हैं। एक प्रकार से लंका मीनार के अन्दर और बाहर मूर्तियों के सहारे लंका काण्ड का पूरा दृश्य दिखाया गया है।

मीनार के उत्तर की ओर पुष्प वाटिका बनी हुई है जिसे कालपी के लोग पाताल लंका या पलंका कहते हैं। यह भी प्राचीर से घिरी है। लंका मीनार और पुष्प वाटिका एक ही क्षेत्र में अवस्थित है। प्रमुख द्वार उत्तर की ओर है। द्वार के ऊपरी भाग पर शिलालेख लगे हैं। मुख्य प्रवेश द्वार अत्यन्त

कलात्मक ढंग से बना हुआ है। द्वार के दोनों ओर की दीवार पर द्वारपालों की मूर्तियाँ हैं। पूर्व प्राचीर पर रामकथा के महत्त्वपूर्ण प्रसंगों से सम्बन्धित मूर्तियाँ देखने को मिलती हैं। यथा—ऋषि-मुनियों की तपस्या, केवट प्रसंग, शूर्पणखा विरूपण, मायामृग, बालि-सुग्रीव युद्ध, जटायु को गोद में लिये राम का विलाप आदि। पश्चिम प्राचीर पर कृष्ण कथा प्रसंग की मूर्तियाँ बनी हैं। इसी प्राचीर पर दशावतार की मूर्तियों का दर्शन होता है। सबसे विशेष, इस प्राचीर पर बनी रावण की और उसके बायीं ओर बगल में विराजमान मथुरा प्रसाद निगम 'लंकेश' की विराजमान प्रतिमा है। उनकी छाती में एक शिलालेख जड़ा हुआ है जो नीचे से पूरा नहीं पढ़ा जा सकता किन्तु इतना पढ़ा जा सका कि सन्त लंकेश ने संवत् 1952 में इसका निर्माण कराया। सभी प्रतिमाएँ पत्थर की बनी न होकर उस समय प्रचलित मसाले (कंक्रीट) से बनी हैं।

प्रवेश द्वार के अन्दर की पश्चिमी दीवार पर लगभग पन्द्रह फीट की ऊँचाई पर दो शिलालेख लगे हुए थे जिनमें से अब एक ही बचा है। यह शिलालेख हिन्दी में है। इसी प्रकार पूर्वी दीवार पर दो शिलालेख, एक फारसी में और एक उर्दू में लगे हुए हैं। हिन्दी में उत्कीर्ण शिलालेख की पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

1. ....विचित्र यह रची हेतु गुण...।।
2. ....पुष्प लीला हरि सभा सुजन...।।
3. निगम बंस कायस्थ हौं तनै बिहारी लाल।।
4. कृति मथुरा परस्पर यह विदित भयो दश भाल।।
5. रहा निकट लंकापुरी ताको मुद्रा पाँच।
6. सनि लीला मन्दिर सभा मल्लन बाँटो साँच।।
7. गुण सर नौ विधु विक्रमी लंकेशी शशि साल।।
8. पुन्य हाट करि हस्त निज पत्र रचो दश भाल।।

उत्तर प्रदेश की कालपी जैसी प्रसिद्ध नगरी में स्थित लंका और लंकामीनार रामकथा का अद्भुत स्थल है और अपने निर्माणकर्ता श्री मथुरा प्रसाद निगम 'लंकेश' की स्मृति को सँजोये हुए हैं। भले ही उनके द्वारा रचित ग्रन्थों का प्रकाशन अब तक नहीं हुआ किन्तु लंकामीनार आधुनिक लंकेश का स्मरण कराने को पर्याप्त है।

श्री सुन्नू लाल पटैरिया 'मदन'

श्री सुन्नू लाल पटैरिया 'मदन' उपनाम से कविता करते थे। ये दतिया के निवासी थे। इनका जन्म सन् 1915 ई. में हुआ था। ये खड़ी बोली में कविता लिखने के पक्षधर थे। मदन कवि ने सर्वप्रथम नयन शतक ग्रन्थ की रचना की। इसके पश्चात् उन्होंने रावण महाकाव्य खड़ी बोली में लिखना शुरू किया था किन्तु असमय निधन हो जाने से यह ग्रन्थ अपूर्ण रह गया। उनके द्वारा रचित दोनों ग्रन्थों की प्रतियाँ अनुपलब्ध हैं। दतिया आधुनिक प्रेस के संचालक श्री ब्रजेश श्रीवास्तव को रावण महाकाव्य के कई छन्द याद थे। श्री घनश्याम दुबे भी मदन कवि के छन्द सुनाते थे। सन् 1944 ई. में मदन कवि अल्पायु में ही स्वर्गवासी हो गये। रावण महाकाव्य का एक प्रचलित छन्द इस प्रकार है—

उद्भट हुआ पण्डित जगत् में वेदभाषी शास्त्र का ।
जगमान्य था वह वीर था वह विज्ञ अति शास्त्रास्त्र का।।

था जानता प्रति अंग परम पुनीत शासन नीति का।
सबसे प्रथम आचार्य सा था जगत् में रणरीति का।।

दरयाउदास

ये चरखारी के रहने वाले थे। इनकी एकमात्र छोटी-सी रचना भरत की वारामासी मिलती है, जो अप्रकाशित है। इस ग्रन्थ का रचनाकाल अज्ञात है। कवि ने ग्रन्थ के अन्तिम छन्द में अपने निवास स्थान का उल्लेख किया है–

देस उगाई चरखारी महाराज नग्र वासी।
गुर चरनन पै ध्यान धरत है सिव केर उपासी।
नाम दास दरयाउ भरथ की कहि वारामासी।
जौ कोउ गावै सुनै कटै चौरासी जम फाँसी।।

भरत की वारामासी चैत्र की रामनवमी राम के जन्म से प्रारम्भ होती है। चैत्र मास में ही राम सीता, लक्ष्मण सहित वन यात्रा पर जाते हैं। वैशाख मास में भरत का ननिहाल से आगमन, दशरथ का दाह संस्कार, भरत की आत्मग्लानि का वर्णन है। जेठ, अषाढ़ और श्रावण मास में भरत के वियोग का वर्णन, भादौं व क्वार में राम से मिलने के लिए वन यात्रा, कार्तिक मास में गंगातट पर भीलों से युद्ध, अगहन महीने में गंगा पार करके मुनियों से मिलन। पूस महीने में राम से भरत की भेंट, पादुका लेकर अयोध्या लौटना, माघ मास में सीता हरण, सुग्रीव मिलन आदि का वर्णन, फागुन मास में राम का अयोध्या आगमन, राज तिलक। दरयाउदास भक्त कवि थे। अतः उनकी यह रचना राम और भरत दोनों के प्रति अगाध श्रद्धा और भक्ति को प्रकट करती है।

अज्ञात कवियों के : रामकथा विषयक स्फुट छन्द

1. दयानन्द (नन्द कवि)–सुधाकर कवीन्द्र कृत कवित्त रामायण में दयानन्द रचित दो छन्द मिलते हैं। एक छन्द में दयानन्द की छाप है तो दूसरे में केवल नन्द की, जिससे ज्ञात होता है कि दयानन्द ही नन्द उपनाम से भी कविता लिखते थे। इनका जीवन वृत्त अज्ञात है। इनके द्वारा रचित धनुष भंग के अवसर का छन्द इस प्रकार है–

काँपे जल वितल तलातल सुतल काँपे,
काँपे आसमान भासमान लर लरको।
दयानन्द सुकव सुमेर सातों सिन्धु काँपे,
काँपे सेस दिग्गज ससी जू सुन सरको।
काँपे कोल-कमठ कपीस कोप वान काँपे,
कोसिल कुमार ले पिनाक जब करको।
बूढो बैल फरको रहो न हर हर को,
सु शम्भु की सिखा ते सुधा गंग जल ढर को।।

कवित्त रामायण, हस्तलिखित प्रति-पत्र–13, छन्द–112

राम द्वारा सीता जी के कर में बँधा कंकन छोड़ते समय सखियों द्वारा राम का उपहास करना

विषयक छन्द बहुत व्यंग्यात्मक है। इस छन्द में 'नन्द' की छाप है–

वीर विरदेत वाके वेदन विदित सुने,
सोभा मुख सिन्धु सीव वानक वनक को।
कैसे तुम ताडका संघारी सुत सेन युत,
छूटत न डेरा गाँठ कंकन कनक को।
नन्द भने राउर के भीतर नवेली अलवेली अली,
करती विनोद अंग धरके जनक को।
छोरो के निहोरो कर जोर कहो हारे हम,
यह तो न होय लाल तोरबो धनुष को।।

–कवित्त रामायण, पत्र–22, छन्द–205

2. कवि भगवन्त–कवित्त रामायण (सुधाकर रचित) में इनके द्वारा रचित राम जन्म के शुभ पर्व का एक छन्द मिलता है–

कवित्त– **कुधर-कुधर कुम्भ कुल के कलसधर,**
हंस हंसपत तेऊ हिय सो हिते रहे।
धूमकेत, करकेत, निकर नकरकेत,
निर्णय असार सार जगत जिते रहे।
मने भगवन्त सुखदायक जगत जेते,
विशद विनायक गुण गायक गिते रहे।
कोर-कोर कलप कलापी चारु अम्बुध से,
रामचन्द्र चन्द्र को चकोर से चिते रहे।।

–पत्र–7, छन्द–163

3. भैरव कवि–भैरव कवि का परिचय अप्राप्त है। इनका मात्र एक छन्द श्री जानकी जी के जन्म पर्व से सम्बन्धित प्राप्त है–

कवित्त– **सुफल सुहाये चित्र चाये देत दासन को,**
पूरत सुआस सद्य सुषमा अघोरी के।
भंजन त्रताप पाप दुस्कृत प्रलाप दर्भ,
भैरव भनत निज प्रेम नेम डोरी के।
ध्यावत सशक्ति ब्रह्म शम्भु देव नायक हे,
दायक प्रमोद मधु भ्रंग मत भोरी के।
पोषण-भरण विश्व असरण सर्ण,
बन्दों चरण सरोज रोज जनक किशोरी के।।

–पत्र–9, छन्द–76

कवित्त रामायण के अतिरिक्त दतिया राज्य की रामलीला के लिए लिखी प्रतियों में कवियों के स्फुट छन्द मिलते हैं, कुछ ऐसे भी छन्द हैं जिनमें कवि की छाप नहीं है। बुन्देलखण्ड के अज्ञात और अल्पज्ञात कवियों द्वारा रचित रामकथा साहित्य शोध का विषय है, आलेख तो मात्र संक्षिप्त संकेत है।

□□

रचनाकारों के पते

उदय शंकर दुबे	साहित्य कुटीर, कठारी बाजार, पो. खमरिया, जि. सन्त रविदास नगर-231306, (उ.प्र.)
हरि विष्णु अवस्थी	अवस्थी चौराहा, टीकमगढ़ (म.प्र.)
वीरेन्द्र बहादुर खरे	पूर्व प्राचार्य, सब्जी मंडी के पीछे, सेवारे की गली, कटरा बाजार, टीकमगढ़-472001 (म.प्र.)
विनोद मिश्र 'सुरमणि'	संगी गुरुकुल, मधुकर मार्ग, पकौरिया महादेव, दतिया-475661, (म.प्र.)
डॉ. श्रीमती प्रमोद पाठक	(सहायक प्राध्यापक) शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर
डॉ. बहादुर सिंह परमार	एम.आई.जी.-7, न्यू हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी, छतरपुर (म.प्र.)
डॉ. कुंजीलाल पटेल	सहायक प्राध्यापक (हिन्दी), शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)
राजीव नामदेव	अध्यक्ष, म.प्र. लेखक संघ जिला इकाई टीकमगढ़, नयी चर्च के पीछे, शिवनगर कॉलोनी, टीकमगढ़-472001, (म.प्र.)
डॉ. शिवशंकर त्रिपाठी	दारागंज, इलाहाबाद-211006
कुँ. शिवभूषण सिंह गौतम	'अन्तर्वेद', कमला कॉलोनी, नया पन्ना नाका, छतरपुर-471001 (म.प्र.)
अभिनन्दन गोइल	उपाध्यक्ष, तुलसी साहित्य अकादमी, जैन मन्दिर मार्ग, टीकमगढ़ (म.प्र.)
डॉ. सुशील कुमार शर्मा	प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष (हिन्दी), केन्द्रीय मिजोरम विश्वविद्यालय, आइजॉल
डॉ. श्रीमती पुष्पा दुबे	प्रवक्ता (हिन्दी), स्वशासी महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर, म.प्र.
डॉ. देवी प्रसाद खरे	प्रसाद कॉलोनी, शहीद स्टेडियम के पास, टीकमगढ़ (म.प्र.)
शिव शंकर मिश्र	बी 1/206, दादूमठ, अस्सी, वाराणसी
एन.डी. सोनी	राजमहल के पास, टीकमगढ़ (म.प्र.)

प्रो. बी.के. त्रिपाठी	कोतवाली के समीप, मुख्य मार्ग, टीकमगढ़ (म.प्र.)
डॉ. कैलाश बिहारी द्विवेदी	पुरानी नजाई, वार्ड नं. 8, टीकमगढ़-472001 (म.प्र.)
डॉ. रामेश्वर प्रसाद गुप्त	श्रीमती लक्ष्मी गुप्ता भवन, उद्योग विभाग के पास, सिविल लाइन, दतिया-475661 (म.प्र.)
डॉ. रामनारायण शर्मा	रामायण, 695/3, रानी लक्ष्मीबाई पार्क, सिविल लाइन्स, झाँसी-284001
अजित श्रीवास्तव	राजीव सदन, नायक मोहल्ला, टीकमगढ़-472001 (म.प्र.)

❑❑